धर्मध्यानके साव जैनधर्मी तयार
पुस्तकोनुं सूचना पत्र.

१ जैन धर्म ख्याल प्रदीपक पोथी किमत १॥ रु०
१ कल्पसूत्रको भावार्थ किमत २ रुपया.
२ सत्यार्थसागर किमत २ रु०
३ हरिवंश ढालसागर किं० १॥। रु०
४ श्री रामलछमणजीको रास किमत ॥ रु०
५ उपदेशरतनमाला रास किमत ॥ रु०
६ रामायण (बालाय बोध) किमत १। रु०
७ चंदराजाको रास किमत १ रु०
८ जैन धर्म सिद्धांतसार किमत ॥ रुपया
९ विवधरतन प्रकाश पुस्तक किमत ८ . आणा.
१० जैन कथा रतन कोश किमत १ रु०
११ लिछमणबोध नाटक (जात्रा वर्णन) किमत १२ आना
१२ श्री जैन काव्यमाला (आठ भाग) कि० १-रु०
१३ जैन धर्म ज्ञानप्रकाश किमत १२ आणा
१४ श्रीपाळ राजाको रास ४ खंडको किं० १० आना.
१५ अभय कुमारको रास किमत ८ आना
१६ मानतुग मानावतीको रास कि० ६ आना.
१७ जैन शिलोका संग्रह किं० ५ आना.
१८ हंसराज वछराजको रास किमत ५ आना.
१९ भक्तामर स्तोत्र [अर्थसहित] किमत ५ आना,
२० करकंडू आदिक ४ राजाको रास कि० ५ आना
२१ चोढालिया सग्रह कि० ५ आना.
२२ रतनकवरकी चोपाई किं० ४ आना
२३ एलापुत्रकी चोपाई किमत ४ आना
२४ अमरसेन जयसेन राजाकी चोपाई किमत ४ आना.
२५ लिलावती राणीकी चोपाई कि० ४ आना.
२६ अर्थ सहित पडिकमणो किमत ६ आना,
२७ हरीचंद राजाकी चोपाई किमत ४ आना.
२८ महासालभद्रकी चोपाई किमत ४ आना,

[पुस्तक मिलना ठिकाना—]
[ज्यादी लालका छला.]

श्री बिबेक बिलाश ग्रंथका विज्ञापन.

सज्जन पुर्षोंकों विदित हो कि इस पुस्तकमें मुनीके विषे वा केवलीके आहार विषें वा स्त्रिके मुक्त विषें वा दस आश्चर्य विषें वा जात्रा विषें वा परमेश्वरके गुण विषें वा स्तवनादि विषें वा गुणस्थानादि विषें इत्यादि वर्णनकर पुर्वार्द्ध उत्रार्द्धसें यह वर्णित है सो सर्व चतुरविध संघ गुनग्राहिक होकर इस पुस्तकको जैना सहित पढें तो मेरे परिश्रमको सुफल करें और कोई अशुद्ध बचन लिख्या होय तो शुद्ध कर मेरे ऊपर क्रिप्या करें यह मेरी प्रार्थना है. ग्रंथ कर्ता.

श्री बिबेकबिलास पुस्तकको आगेसे आश्रय देनेवाले सद्गृहस्थोंके मुबारक नाम.

श्री स्वामीजी ऋषिराजजी महाराजजीके श्रावक

करनालके	पुस्तक संख्या
प्यारेलाल चमनलाल आदी	१२
मुन्सीलाल निरंजनलाल	१४
किसनलाल लक्ष्मीचंद	१
बिद्रामल मुन्शीलाल	२
जानकीदास मुन्शीलाल	२

घसीमल प्रतापसिंह १
रामप्रसाद रूपचंद २

श्री ऋषिराजजी महाराजके श्रावक कांधलेके

जैनीमल मकवनलाल २
छीतरमल मुलचंद १
मुन्सीलाल जैकुंवारमल ३
बिंद्रामल गंधीलामल २०

श्री महाराज ऋषिराजजीके श्रावक बडसतके

जीतामल वा कस्मीरीलाल २
बनारसीदास निरंजनलाल २
चिरंजीलाल श्रीराम २
जैदयालमल सुगनचंद १
उदममल मुरलीमल १
पालीमल कीसोरीलाल १
गंगाराम बलदेवदास १
अजुध्याप्रसाद पटवारी १
छुसरीमल गीरनारीलाल १
गिरनारीलाल जुगमंदिर १
खेमचंद मनूलाल १
चुरुचंद मुलतानसिंह १

संकरदास मोलडमल १
प्रभूदयाल सुगनचंद १
श्री ऋषिराजजी महाराजके श्रावक जुंडलेके
प्रभूदयाल बिहारीलाल १
श्री ऋषिराजजी महाराजके श्रावक झिंझनाके
जानकीदास अजुध्याप्रसाद ४
बैजनाथ चतसैन २
शेवगराम २
श्रीऋषिराजजी महाराजके श्रावक ढिंढालीके
अनुपसिंह मिरसिंह २
जैदयालमल कबुलसिंह १
श्री स्वामी ऋषिराजजीके श्रावक बिडोलीके
मूलचंद रतनलाल २
मुसदीलाल मित्रसैन २
श्री ऋषिराजजी के श्रावक स्यामली नगरके
अजुध्याप्रसाद हुस्यारसिंह २
मंगलसैनजी मिठनलाल १
श्री ऋषिराजजीके श्रावक लिसाड ग्रामकेवासी
फेरुमल भिखीमल १
माडुमल चंद्रभान १

हरगुलाल मुन्शीलाल १
सुरजामल मुकंदलाल १
अनुपसिंह किसोरीलाल १
दिवानसिंह तरीफसिंह १
श्री ऋषिराजजीके सम्यक्ती मितलावलीके
परतापसिंह जगराम पटवारी २
मूलराज नरतुमल १
स्वामी ऋषिराजजीके श्रावक पडासोली सैनपुरके
रोसनलाल चंद्रभान १
मुसद्दीलाल जानकीदास १
श्री ऋषिराजजीके श्रावक निरपडाग्राम निवासी
नोरंगमल उमरावसिंह १
रहमलदास बिशंनरदास १
डुंगरमल कांजीमल १
सुमेरचंद चंदनलाल १
निद्धामल मुन्शीलाल कुरालसीके १
ज्ञानचंद १
श्री ऋषिराजजी प्यारेलालके श्रावक बिनोलीके
नियादरमल गिरधरलाल ३
पृथीसिंह महबुब २

श्री ऋषिराजजी महाराजजीके श्रावक हिलवडीके

नथुमल प्यारेलाल १

कन्हीयामल संगमलाल १

श्री ऋषिराजजी प्यारेलालजीके श्रावक दिल्लीके

लखूमल पुरनचंद ५

श्री ऋषिराजजी प्यारेलालके श्रावक मुरादनगर

अमीरसिंह चंद्रभान थानेदार १५

हरनामदास चंद्रभान श्री बडोत निवासी २

श्री ऋषिराज प्यारेलालके श्रावक अल्लमाबादके

अमनसिंह पटवारी १

डालुमल श्रीराम पटवारी १

बनसीराम नोरंगमल १

बिरजलाल त्रिखलमल १

किशोरीलाल १

भगवनदास प्यारेलाल किरठलग्राम नीवासी १

मुन्शीलाल पटवारी नोनिधराम गंगेरूनीवासी २

उमरावसिंह लालडीप्रसाद कलसीबुटानाके २

अजुध्यापरसाद पटवारी २

बाबू रुघनाथदास संगरूर रयासत जींद ५

न्यामतसिंह जोरावरसिंह मुकाम कुताना ३

२९ उत्तमचारित्र कुमारको रास किंमत ४ आना.
३० देवकीराणीकी चोपाई किंमत ४ आना.
३१ चंदन मलियागिरीको रास किंमत ४ आना.
३२ कानडकाठयारको रास जंबु१च्छा चोपाई किंमत.४ आना.
३३ स्तवनसझाय संग्रह प्रत्येक भागको किं० ४ आना.
४३ सामायिक दस च्खाण अर्थसहित किं० ३ आना.
३५ वेशाधिवेशरचना मुनिगुणमाला किंमत ४ आना.
३६ अजनासतीको रास ढाळा २२ को किं० ३ आना.
३७ पांच पदारी मोटीवंदना किं० ३ आना,
३८ चोविसोको स्तवन किं० १॥ आना.
३९ जैन लावणी संग्रह भाग दुसरा किं० २॥ आणा.
४० चौत मातारी कथा किं ८१ आणा.
४१ परदेशी राजाको रास किं० ४ आना
४२ मारवाडी शिलोका संग्रह. किं० ८ आणा.
४३ चोविसोको विस्तार किं० २॥ आना.
४४ स्तवन सझायको संग्रह किं २॥ आना.
५४ वृद्‌.ालोयणा किं. १॥ आना.
४६ आनदघनजीकृत चोविसी किं० १॥ आना
४७ देवचंद्रजीकृत चोविसी किं० १॥ आना.

इण पुस्तकरी खतावणी.

विषय　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　पृष्ठ

१ साधूके उपकरण विषे, स्त्रिने मुक्तिके विषे, दश आश्चर्यके विषे और सिखरजीमें मुक्तिजानेके कूटपणाके विषे प्रश्नोत्तर　१
२ ईश्वर, जीव और कर्मके विषे इश्वर जगतके उत्पत्तिके विषेमें प्रश्नोत्तर　८१
३ पंच वादीकी चर्चा　१०७
४ चौबिसी स्तवन　११२
५ बिस विद्यमानजिन स्तवन　११४
६ बिस विद्यमानजिन स्तवन दुसरा　११५
७ उपदेशी सिझाय　११७
८ दशार्णभद्रकी सिझाय　११८
९ परदेशी राजाकी सिझाय　११९
१० उपदेश लावणी　१२२
११ उपदेश लावणी दुसरी　१२४
१२ उपदेश लावणी तिसरी　१२५
१३ बारे भावना सिझाय　१२६
१४ उपदेशी सिझाय　१२८
१५ अष्टादश दोष सिझाय　१२९

१६ नमीराय ऋषीनी सिझाय १३०
१७ उपदेश सिझाय १३१
१८ दस लक्षण मुनिके फूलने दोहे सहित १३२
१९ अनंत चौविसीका स्तवन १३८
२० चौविसीका स्तवन १४०
२१ चौविस जिन स्तवन १४१
२२ उपदेश सिझाय १४४
२३ रात्री भोजनपर चौपाई तथा श्लोक १४५
२४ समत्सरीके विषे सिझाय १४८
२५ समत्सरीके विषे दुसरी सिझाय १५१
२६ धर्म चरचानी सिझाय १५४
२७ दोहा तथा पद १५७
२८ सिमंदर जिन स्तवन १५७
२९ तेईस पदवीनी सिझाय १६०
३० धर्म शिक्षानी चौपाई १६१
३१ नव तत्व नाम लक्षण सिझाय १६३
३२ नेमनाथजीकी चौपाई १६४
३३ सिमंदर जिन स्तवन १६८
३४ गुणस्थानकनी सिझाय १७०
३५ स्वामीप्यारेलालजीको दिक्षा महेत्सव स्तवन १७७

॥ इति ३५ विषयकी खतावणी समाप्त ॥

॥ श्री शांतिनाथाय नमः ॥

॥ अथ विवेक विलाश ग्रंथ लिख्यते ॥

दोहा ॥ केवल ज्ञान दिवाकरू, सिद्धि बुद्धि दातार ॥ प्रणमु ते महाबीरको मन वंछित सुखकार ॥ १ ॥ परम धरम उपदेश के, दाता श्री भगवान ॥ तिनके बचन प्रमाण करि, सुध सरधा मन आण ॥ २ ॥ विवेक विलाश इस नामसे, ग्रंथ करू सुखकार ॥ कुमतीको त्याग न करी, सुध समकित मन धार ॥ ३ ॥ जिनवाणी जयवंतहै. पंचम काल मंझार ॥ बुध जन समझे ज्ञान सें, जिनआज्ञा मन धार ॥ ४ ॥ राग द्वेशको दूरिकरि, धर्म परीक्ष मन धारि, निरमल करि निज आतमा, समकित शुद्ध विचार ॥ ५ ॥ आगम वचन प्रमाण करि, प्रश्न उत्तर हितकार ॥ ऋषीराज मन धारिकें. लिखे ग्रंथ अनुसार ॥ ६ ॥

प्रथम प्रश्न साधूके उपकरणके विषे में— श्री दशवेकालिक सूत्र अध्ययन छठे, गाथा वीसमी वा इकीसमी ॥ जंपिवत्थंचपायंवा । कंवलंपायपुछ्णं ॥ तंपिसंजमलझठा ॥ धारंतिपरिहरंतिय ॥ २० ॥ नसोपरिग्गहोवुत्तो । नायपुत्तेणताइणो ॥ मुछापरिग्गहोवुत्तो । इयवुत्तंमहेसिणो ॥ २१ ॥ अस्यार्थः—जे कांई

वस्त्रपात्रादि अथवा कंबल पायपुछण यानें रजो-
हरण ते वस्त्रादि सर्व संजम चारित्रनी लाज र-
खणे वास्तें धारे यानें रखे तथा त्यागमी करे २०
नही ते वस्त्रादि परिग्रह कह्या, ज्ञातपुत्र श्री महावीर
देवें छह कायाके रिछपालनें मूरछा करी यानें म-
मताकरी रखेतो परिग्रह कह्याहै. ऐसा कह्या महा-
वीर तथा सुधारमाजी गणधरें २१ और श्रीउ-
त्राध्येनके अध्येन दुसरेमें बाईस परीसह साधू महा-
राजोंके, छठे परिसहमें देखो कैसे श्रीजिनराज वा
गणधरदेवके वचनोंके पाठ गाथा बारमी वा तेर-
मी ॥ परिजुन्नेहिंवत्थेहिं । हुरकामितिअचेलए ॥
अदुवासचेलएहुरकं । इइभिखूनाचिंतए ॥ १२ ॥
एगयाअचेलएहाेइ सचेलेआविएगया ॥ एयंधम्मं
हियंनच्चा । नाणीनोपरिदेवए ॥ १३ ॥ अस्यार्थः—
अतिही पुराणे वस्त्रें करी होय सहु इम वस्त्र र-
हित होय तव खेद यानें दिलगीरि न पामें अथवा
वस्त्र सहित होइ इम नवा वस्त्र देखी आपणे मनमें
हर्ष पामी खुसी होय, नवा वस्त्र कब पामसुं इम
भिखू यानें साधू नचिंतवे १२ अब क्या चिंतवे?
एकवक्त साधू पुराना वस्त्र तथा वस्त्र रहित होइ
एकवक्त नवा वस्त्रसहित होय तो साधुधर्मको हि-

तकारी जाणकर ज्ञानवंत न पामें खेद तथा हर्ष खुषी १३ भावार्थ देखो सूत्रामें श्रीभगवान वा गणधरदेवांके वचन तो ऐसेहै कि साधूमुनिराजका पहिला भूख परीसा और छटा अचेल परीसा यानें वस्त्र का परीसह कह्या जैसें आहार पाणीके दोषटाले जावें तबतो साधुको आहार पाणी लेणा कह्या जबतो परीसह नही हुवा ऐसेही वस्त्र परीसह समझना, यहभी वस्त्र देह धारण तथा संजम निर्वाहण वास्तें है. अब दिगंबर मती कहतेहे कि श्वेतांबरमती साधू वस्त्रधारीहोतेहे ते वस्त्र परिग्रहमेंहे तिसवास्तें वस्त्रधारीको पंच महाव्रत नहोय, तिनके सर्वथा परिग्रह त्याग नही हुवा इस वास्ते वे साधू मुनी नहींहै. अब जो ऐसा कहते है कि श्वेतांबर मतके साधुवांके वस्त्र पात्रादि उपकरणहे यह परद्रव्यके संगसे सुद्ध साधू किसतरें होय, उत्तरः--अब श्री अध्यातम मत परीक्षा अनुसारेण लिखेंहे कि हे मतपक्षी हठ गेडकर विवेकसें विचार कर देख रागद्वेष विना दूसरा कोई पण परद्रव्य ते शुद्ध उपयोग रूप अध्यातमसें प्रतीकूल यानें वैरी नही ऐसें जो अंगीकार नही करोगे तो लोकमांहि सर्वत्र धर्मास्ति कायादिक परद्रव्य भरयाहै ते बधां प्रतिकूल कहे जायेंग तस तो संभवे नही. तिस वास्तें शुद्ध उपयोगरूप अध्यातमको राग द्वेपही प्रतीकू

लहै इस बिन। दुसरा कोई परद्रव्य प्रतिकूल नही इम जाणिये जो एम कहोगे कि परिग्रहीत परद्रव्य अध्यात्मको विरोधीहै परंतु अपरिग्रहित परद्रव्य अध्यात्मको विरोधी नही, तो शरीर रूप द्रव्य परिग्रहीत छतां किम अध्यात्म उत्पन्न होयहै. जो इम कहोगे कि शरीर धर्मतो कारणहै तिस कारण अध्यात्मको विरोधी नही तो धर्म उपकरण पण धर्मना साधन होवाथी। अध्यात्मका विरोधी होय नही यह सामान्य रीतिसे उत्तर कह्या ॥ १ ॥

प्रश्न २ रा–कोई कहे जबतक वस्त्रादि उपकरण होय तबतांई आत्मकार्य सिध्धि होय नही, उत्तर– यह जो तुम कहते हो कि उपधि यानें उपकरण सहित जीव सिद्धतानें पामें नही, जैसें तुस सहित चावल सीझतें नही इसी तरह जीव सिध्धतानें प्राप्त होय नही. जिम चावलनें तुसरूप दोषहै तिम उपकरण जीवको दोषरूप है. ऐसा वचन अमरचंद दिगंबर मतका है ते ॥ गाथा ॥ उवह्नि सहिओणसिझइ । सतुसाजहतंदुलनसिझंति । इयवयणंपरिकतं । दूरेदिठ्ठंतवेसम्मा ॥ ५ ॥ इतिवचनात ॥ ऐसा कह्या ते ये दृष्टांतनो परिमाण ठीक नही क्यों- किं चावलको तुस रूप दोषहै ते स्वरूप थकीहै

ओर जीवको उपधिरूप स्वरूप थकी नही, जीवको उपधि रूप दोष जो स्वरूपथी होयतो क्षपकश्रेणीमे चढतां यति यानें साधूके स्कंध उपर वस्त्र गेरतां तो तिनको केवलज्ञान उत्पन्न नहोय. अर तुस सहित वस्तु सीझे नही ए बात सर्वथा संभवित नही क्योंकि मुग परमुख तूस सहित सीझंतां देखनेमें आतेंहे इस वास्तें यह प्रमाण एकांत नही अनेकांतहे.

प्रश्न २ रा--पूर्वादि जो दोष उपधिके विषें कहतेंहे ते दोष शरीरके विषे पण संभवेहे जो इम कहोगे कि उपकरण रखणेसें ममत्व यानें मूरछा होयहे तव शरीर उपर मूरछा किम न होय. उपकरणकी मूरछा तो शरीर मूरछा निमित्तहे तिस वास्तें शरीरकी अधिक मूरछा संभवेहे इसका समाधान जो ऐसी रीतिसें करिये कि मुरछा के दो भेदहे एक तो मेरा मेरा असा ममत्व परिणाम और दूसरा पामी हुई बस्तु उपर अवियोगनो अध्यवसाय यह आरतध्यानका भेदहे. तिसमें प्रथम जे शरीर विषे ममत्व परिणामरूप मूरछा कहिये तेह तो समदृष्टीकों इम होय नही क्योंकि ते ज्ञानीहे और ममत्व परिणाम तो अज्ञाननिमित्तहे इसमें सम्यग्दृष्टी विषयादिकनो सेवन करता हुवा परंतु तिसको पर-

भारथसें विषय सेवन रहित कह्याहै तो साधूनें विषेंतो क्या कहणाहै. अर्थात् साधूतो सर्वथा विषय सेवन रहितहै और दूसरी आर्तध्यानरूप जो मुरछाहै ते धर्मध्यानके प्रभावेंकरी शरीरविषें होय नही, इसतरे समाधान उपकरणके विषे जाणिये. जो इम कहोगे कि उपकरण रखणेसें तिसके ग्रहण तथा त्यागसें आरंभ होयहै यह वातभी असंभवहै क्योंकि आरंभतो शरीरके खजानेसेंभी होय. जो कहोगे कि शरीरके खजनेकी क्रिया जतनाकर होयहै तो इम जयणायें करी धर्म उपकरण लेतां तथा धरतां भी आरंभ होता नही. जो इम कहोगे कि धर्म उपकरणसें शुद्ध आतम परिणाम भंगरूप हिंस्या होयहै तो शरीरसें हिंस्या किम न होय जो मुरछा विना शरीरसें हिंस्यानो संभव होय नही तो मूरछाविना धरम उपकरणनो इम संभव किसतरह होय. जो इम कहोगे कि धरम उपकरणसे परद्रव्यके विषे रति होनेसें आत्मद्रव्यमें रति होती नही, तो शरीरसें द्रव्य रति किम नहोय किंतु होणी चाहिये इसका विचार करो. अब परद्रव्य रतिकों दो विकल्प करी दोषित करतेहै ते जैसे परद्रव्य रति ते क्या कायजोग के परिणामरूप हैं के संरक्षणानु बंधी रौद्रध्यानरूपहै जो प्रथम कायजोग परिणाम कहोगे तो शुद्ध कायायोगें दोष किम लागे अ

र्थात इमतो संभवे नही. अर जो संरक्षणानुबंधी रौद्र ध्यांनरूप कहोगे तो ते संभवशे नही क्योंकि चोरादि कसें सर्वप्रकारें जे वस्त्रादिकनो बचायवो तिसको संरक्षण कहतेहैं ओर तिसका जो हमेसें चिंतन करणा तिसको अनुबंध कहते है ऐसा रौद्रध्यांनका भेद उपधिसें होय तो शरीरसेंभी होना चाहिये क्योंकि सर्प चोर तथा कंटक प्रमुखसें शरीरकी रक्षा करणेकी अध्यवसाय बहो तसोमें देखनेमें आवेहै इसके.तो रौद्रध्यांन कहते नही. जो इम कहोगे कि यतीको शरीरके विषे राग न होय तिम छतां सर्पादिकसें शरीरकी रक्षातो धर्म साधनके वास्तें करेहैं तिसवास्तें तिसके अध्यवसाय अशुभ होय नही. इस तरें तो संभवें नही क्योंकि यतीको शरीरकी तरें धर्म उपकरण ऊपर इम राग होय नही तिम छतां यानें मोजुदगीमें तिसकी रक्षा धर्म साधनके वास्ते करतेहै इस रीतिसें शरीरके जो धर्म उपकर्ण कहेहै तो हो तां छतां तिनकी उत्थापना करतां तुमको शरम नही आती.

प्रश्न ४ था— कितने रूढमती कहतेंहै कि वस्त्रादिक उपकरण जोहै तेह ध्यानके विरोधीहै क्योंकि तिनके प्रतिलेखनादि बाह्य व्यापारके योगें अंतर आतम तत्वके विषे चितएकाग्रतारूप ध्यानमां विघ्न थायहे. उत्तर—हे मतिपक्षी विचार करि देख आवश्यक पडिलेहणा परमुख

मरथसें विषय सेवन रहित कह्याहै तो साधूनें विषेंतो क्या कहणाहै. अर्थात् साधूतो सर्वथा विषय सेवन रहितहै और दूसरी आर्तध्यांनरूप जो सुरछाहै ते धर्मध्यानके प्रभावेंकरी शरीरविषें होय नही, इसतरे समाधान उपकरणके विषे जाणिये. जो इम कहोगे कि उपकरण रखणेसें तिसके ग्रहण तथा त्यागसें आरंभ होयहै यह बातभी असंभवहै क्योंकि आरंभतो शरीरके खुजानेसेंभी होय. जो कहोगे कि शरीरके खुजनेकी क्रिया जतनाकर होयहै तो इम जयणायें करी धर्म उपकरण लेतां तथा धरतां भी आरंभ होता नही. जो इम कहोगे कि धर्म उपकरणसें शुद्ध आतम परिणाम भंगरूप हिंस्या होयहै तो शरीरसें हिंस्या किम न होय जो सुरछा विना शरीरसें हिंस्यानो संभव होय नही तो मूरछाविना धरम उपकरणनो इम संभव किसतरह होय. जो इम कहोगे कि धरम उपकरणसे परद्रव्यके विषे रति होनेसें आतमद्रव्यमें रति होती नही, तो शरीरसें द्रव्य रति किम नहोय किंतु होणी चाहिये इसका विचार करो. अब परद्रव्य रतिकों दो विकलप करी दोषित करतेहै ते जैसे परद्रव्य रति ते क्या कायजोग के परिणामरूप हैं के संरक्षणानु बंधी रौद्रध्यानरूपहै जो प्रथम कायजोग परिणाम कहोगे तो शुभ कायायोगें दोष किम लागे अ

र्थात इमतो संभवे नही. अर जो संरक्षणानुबंधी रौद्र ध्यांनरूप कहोगे तो ते संभवशे नही क्योंकि चोरादि कसें सर्वप्रकारें जे वस्त्रादिकनो बचायवो तिसको संरक्षण कहतेहैं और तिसका जो हमेसें चिंतन करणा तिसको अनुबंध कहते है ऐसा रौद्रध्यांनका भेद उपधिसें होय तो शरीरसेंभी होना चाहिये क्योंकि सर्प चोर तथा कंटक प्रमुखसें शरीरकी रक्षा करणेकी अध्यवसाय बहो तसोमें देखनेमें आवेहे इसके तो रौद्रध्यांन कहते नही. जो इम कहोगे कि यतको शरीरके विषे राग न होय तिम छतां सर्पादिकसें शरीरकी रक्षातो धर्म साधनके वास्तें करेहें तिसवास्तें तिसके अध्यवसाय अशुभ होय नही. इस तरें तो संभवें नही क्योंकि यतको शरीरकी तरें धर्म उपकरण ऊपर इम राग होय नही तिम छतां यानें मोजुदगीमें तिसकी रक्षा धर्म साधनके वास्ते करतेहे इस रीतिसें शरीरके जो धर्म उपकर्ण कहेहै तो हो तां छतां तिनकी उत्थापना करतां तुमको शरम नही आती.

प्रश्न ४ था– कितने रूढमती कहतेंहे कि वस्त्रादिक उपकरण जोहे तेह ध्यानके विरोधीहे क्योंकि तिनके प्रतिलेखनादि बाह्य व्यापारके योगें अंतर आतम तत्वके विषे चितएकाग्रतारूप ध्यानमां विघ्न थायहे. उत्तर–हे मतिपक्षी विचार करि देख आवश्यक पडिलेहणा परमुख

जे जयणाए करी व्यापार होयहै ते इम ध्यांनको विरोधी होय जो तो इसको कोई विरोधी कहता नही किंतु यहतो एक कालाश्रित मन वचन तथा काया संबंधी ध्यांन रूप होयहै जैसें शुभयोगें करी मन एकाग्र होय इसको मन संबंधी ध्यांन कहतेहै निर्वद्य वचन बोली यहै और सावद्य वचनका त्याग होयहै इसीको बचन संबंधी ध्यांन कहतेहै और शुभ योगके विषे यागे करी कायाकी दृढता होय इसीको कायसंबंधी ध्यान कहतेहै जो तुम इम कहोगे कि भगवंतें एक समयनें विषे दो क्रियाका निषेध कह्याहै तो तिमछतां एक समयाश्रित मन वचन कायासंबंधी ध्यांन किम संभवे इसका (उत्तर) यहहै कि भगवंत जो एक समयके विषे दो क्रियाका निषेध कह्याहै ते भिन्न विषय विषेहै एक विषय विषे निषेध नही कह्या जैसें वंदणाके आवर्तन विषे वणयोगकी क्रिया एकही समयके विषे होतीहै॥ यतः॥ भिन्नविषयेणिसिद्धं। किरियाढुगमेगयाणएगम्मि ॥ जोगंतिगस्सविभंगिय। सुतेकिरियाजउंभाणिया ॥ और कोई कहे कि ध्यानजोहै ते योगनो परिणामनही कि जिसकी प्रवृत्ति बाह्य व्यापार करतां होय जो योगका परिणाम-

रूप ध्यांन होयतो लेश्या अनें ध्यांन एकही कहि वायहै इनमें क्या न्यूनाधिकता होय नही इमतो नही मालुम होता लेस्याओके रूपतो जुदैहै. और ध्यांनकोरूप शास्त्रोमें जुदा कह्याहै. फिर जो योग परिणामरूप ध्यांन होयतो चौदमें अयोगी केवल गुण-स्थानके शुकल ध्यांनतो आत्म स्वभाव समवस्था-नरूपहै और तिसकी उतपति इस रीतिसें होयहैं सुखनी तृष्णाएकरी मोहनीकर्मके वश होता जीवपर द्रव्यके विप्रवृति करेहे जब मोहनी करमकी न्युंनता-होयहे तब परद्रव्यनें विषे प्रवृति होय नही ऐसा होणेसें विषयनें विषे वैराग्य होयहे क्योंकि विषयके विषे जें राग होयहे ते विषय प्राप्ति पूर्वक होताहै और रागने अनावे बैराग होयहे वैरागसें मननो रोध होयहे क्योंकि मनकी प्रवृति विषयविना हो-ती नही जैसे तृण रहित स्थानकनें विषे पडीहुई अग्नि अपने अपही नाशको प्राप्ति होयहे तैसें विषय विना मन अपने आपही स्थिरताको प्राप्ति होयहे मनका निरोध होणेसें चंचलता मिटजायहे और पीछे मन एकाग्र होकर आत्माके विषे प्रवृत्त होयहे यह आत्म स्वभावकों ध्यांन कहतेहे॥ यतः॥
जोखविदमोहकलुसो । विषयविरतोमणेणसंभिता ॥

समवहिदोसहावेसो । आप्पाणेदवदिजादा ॥ १ ॥ इति प्रवचनसारे ॥ ऐसो सह चेतन स्वभावरूप जे ध्यांन बाह्य व्यापार करतां तथा परद्रव्य अधिकरण कियासें किम प्रगट होय इसका निरणय करतेहे अब मन वचन तथा कायरूप त्रिकरण यानें त्रिण योगका प्रयत्न कियासें ध्यांनकी सिद्धि होयहे. तिसवास्तें योग परिणामरूप ध्यांनहे परंतु उपियोग रूपध्यांन नही अर लेस्या पण योग परिणामरूपहे तिस्से योग परिणामपणें तो ध्यांन तथा लेश्या यह दोनों बराबरहे परंतु दोनोके लक्षण जुदे जुदेहे. लेस्या जोहे ते योगका चलपरिणामहें ओर ध्यांन जोहे योगका निश्चल परिणामहे अयोगीको यद्यपि करण व्यापार नही तथापि छतां मन वचन तथा कायका निरोधरूप प्रयत्न करेहे ते प्रयत्नें करिकें ते त्रण योगका निरोध होयहे तिसीको ध्यांन कहतेहे ओर इहांजो आत्म स्वभाव समस्थारूप ध्यांन लीजीयेतो सिद्धांकोभी ध्यानको करतृत्व ठैरस्ये. शास्त्रोंमेंतो सिद्धने विषे ध्यांन प्रवृति सर्व क्रियाको अभाव कह्याहे जो इम कह्या जाय कि सिद्धांकें व्यवहारिक ध्यांनतो नही परंतु आत्मा स्वभावरूप नैश्चियिक ध्यांनतोहे जो इम होयतो योगको निरोध कियां विना

पूर्वकोडि पर्यंत केवलीकुं ध्यांनका निषेध केंसे किया हे आत्म स्वभाव समवस्थानतो केवलीकें सर्वसें अधिकहे इसकारण वास्तें अयोगीको तो योग निरोधरूप ध्यांनहे ओर छदमस्तको करणका दृढ व्यापाररूप ध्यांनहे ऐसी रीतसें शुभयोगें करी प्रवर्तनीय जे ध्यांन तिसमे वाद विबाद किसतरें होय.

प्रश्न ५ वा--कितने रुढमती कहतेहे कि जो उपकरण होयतो रागभाव होय तिसवास्तें उपकरणका सर्वथा त्याग करणा योग्यहे ऐसा जो न किया जायतो उत्सर्गमार्ग किसतरें होय.(उत्तर)हे रूढमती अब जो स्थिविर कल्परूप सरागचर्या यानें सराग मारगहे ते पण उत्सर्ग मार्गमेंही लग्या हुयाहे अर्थात अपवाद मार्ग ओर उत्सर्ग मारग निकट संबंधी यद्यापि स्थिविरकल्पी पण अपवाद मार्गका तो त्याग करेहे तथापि कोई कारणके लियें तिसको ग्रहण करणा पडेहे ओर जिनकल्पी तो कदापि अपवाद मार्गको ग्रहण करे नही ऐसी रीतिसें स्थिविरकल्पी तथा जिनकल्पीके अपवाद तथा उत्सर्ग मारगमें अल्प अंतरायहे यानें अपवाद मार्गसें उत्सर्ग मार्गकी कुछ थोडीही उत्कृष्टताहे इसवास्ते दो भेद हुयेहे ओर जिनकल्पीकी अपेक्षासें स्थिविर कह्याहे ऐसेंही उत्सर्ग

मारगकी अपेक्षासें अपवाद मार्ग कह्योहे जो उत्सर्ग मारगसें कोई न्युनता वालो उत्सर्ग न कहुं तो अपवाद मार्गसैं कुछ एक अधिकता वालो उत्सर्ग न कहुं तो चौदमें गुणस्थांनकना अंतके समय सुधी उत्सर्ग मार्गका संभव होसे नही क्योंकि सर्वोत्कृष्ट संवर तिहांहीहे जिस वास्तें जिस जगे जो मार्ग उत्कृष्टकह्यो होय ते ठिकाणे तेही उत्सर्ग मार्गहे जैसें स्थिविर कल्पके विषें चौदह उपकरण उत्कृष्ठ होणेसें ते उत्सर्ग मार्गमेंहै.

प्रश्न ६ ठा— कितने मतपक्षी कहतेहे परद्रव्य मात्रकी जे निवृति यानें परद्रव्यका कोई परिग्रह रह्या नहोय मात्र आत्मद्रव्यकोही प्रतिबंध होय तेही संजमको अंतरंग कारणहे इसीको उत्सर्ग मार्ग कहतेहे ऐसी सामग्रीकी प्राप्तिविना शुद्धोपयोग भूमिकामें चढि सकता नही. तब तेहनी साह्यता करनवाली जे उपधि होय तिसका धारण करणा तिसकों अपवाद कहतेहे ते उपधि संजम बंधनो हेतु नही इसवास्तें निषेध नही कही क्योंकि ए उपधि संजम-रहित पुरुषना उपियोगमें आवती नही किंतु संयतीनेंही उपियोगीहे ओर मूरछानो हेतु होती नही॥ यतः॥ अणडिकुडुंउवहिं। अपछणिकंअसंजदजणेहिं।मुछादिजणणरहिदं गेल्ह।दुस-

मणोयजदिंविश्रप्पंते ॥ १ ॥ ते उपधि यहहे, एकतो यथा जातालिंग पुदगल याने जेसा माताके उदरसें जनम होय तेसा आकार धारण, करणा, दुसरा बचन पुदगल यानें जिससें शुद्धात्म तत्वका बोध होय तिसका ग्रहण करणा, तीसरा गुर्वादिक विनय रूप मनके पुदगलका धारण करणा और चतुर्थ सूत्राध्ययनके पुदगल धारण करणा ॥ यतः ॥ उवयरणंजिणमग्गो लिं-गजहजादरूपमिदिजाणिदं ॥ गुरुवयणंपिश्रविणउ । सु-त्तझयणंचपन्नतं ॥ १ ॥ ऐसा ते अपवाद मारग तिसको सरागचर्या कहतेहैं अर्थात् सुद्ध उपियोगकी न्यूनतानें लियें अपवाद मार्ग कहिवायहै परंतु जे वस्तु प्रतिषिद्ध यानें सेवन करवा योग्य न होय अने तिसका सेवन करणा तिसको अपवाद कहता नही तिसको तो परगटही अनाचार कहतेहैं तिम संजतिको वस्त्रादिक सेवन करणा योग्य नही क्योंकि यह अनाचारहे इसवास्तें यह सर्व परिग्रहका त्याग करणा चाहिये. वस्त्रादिक परिग्रहको जे ग्रहण करणा ते उत्सर्ग पण नही अनें अपवाद पण नही किंतु अनाचारहै ते किम करिये ऐसा जो कहेहे ति-सको उत्तर देइ तिसका समाधान कहतेहैं. (उत्तर) हे रूढमती जिम शरीर परद्रव्य छतां शुद्ध उपयोगका

साह्यकारीहै तो तेह परिग्रह कहवाय नही तैसे उपकरणभी शुद्ध उपयोगका साह्यकारी होणेसें परीग्रह कहवायनही क्योंकि ए वात सिद्धांतोके विषे पण धर्मोपकरणका अनेक गुण कह्याहै तिसेंत सिद्ध होयहै. जिम रात्रियें चउकालें काल ग्रह लेतां वस्त्रे करी यतीनें शीतकी पिडा टलेहे ओर जो वस्त्र न होय तो शीतकी पीडाके वास्तै आग्नकी ताप परमुखकी चिंतना होय तिस तें आरतध्यांन उत्पन्न होताहै. वस्त्रसें सचित रज पृथवी धूअरि ओसवृष्टी तथा हिरमज प्रमुखकी रक्षा होतीहै ओर जो वस्त्र न होय ओर उघाडा शरीर होय तव शरीरकी गरमीकी वाफसें तिन जीवोंको दुख उत्पन्न होताहै, संपातीम रज रेणु प्रमार्जवाके वास्ते ओर मुख जतना करी बोलने वास्तें मुहपती रखणी कही, लेवा देवा परमुखकी क्रियायें पूर्वें प्रमार्जवाके वास्तें तथा जैन लिंगनें वास्तें ओघो राखणा कह्या तथा पुरषवेदनीयो दयादिक वर्जनें वास्तें चोलपट्ट रखणा कह्या इत्यादिक वस्त्रका गुण कह्याहै. अनाभोगें लियें जे संसक्त गोरसादिक ते पात्रें करिकें विधियें परठाइ शकेंहे. पात्रविना हाथमें लिया होयतो योग्य ठिकाणें कैसें परिठ शके तथा हाथमें शरस

वस्त्र लियांसे तिसका बिंदू जो नीचे पडेतो तिसतें किडियां परसुख अनेक जंतुओंकी विराधना होय. ग्रहस्त बरतनके वास्तें उपभोग पण पश्चात करमादिक दोष उपजताहै अने जो पात्रा होयतो तिणें करी गलांन अथवा दुरबलनें पथ्यादिक ल्याणेके वास्तें उपियोगी होणेसें उपकार होयहै. अलब्धिवंत असमर्थ तथा समर्थ प्राहुणानें वास्तव्य पात्र होयतो अन्न पानादिकनें आपणी उपकार करे अन्यथा केम करे इत्यादिक वस्त्र तथा पात्रके विषे अनेक गुण जाणी शरीरकी तरें धर्म हेतु जाणी तिसमें परिग्रह पणाकी आशंका करणी नही.

प्रश्न ७ वा—कितने मतपक्षी उपहास युक्त ऐसा अण विश्वाससें बोलतेहे कि जो तुम शीत तथा ताप परसुखकी पीडासें आरतध्यांन उपजे नही तिसवास्तें इतने उपकरण रखतेहें तो इसीतरेहें मैथून संज्ञा निमित्त आर्तध्यांननों त्याग करणेवास्तें एक स्त्रीनो परिग्रह किसवास्तें राखते नही जो जीरणादिक वस्त्र राखणेसें मूरछा होती नही तो अंग भंग वाली तथा कुरूपवाली स्त्री राखणेसें मूरछा किसतरे होय इस अशंकानों उत्तर देतेहैं (उत्तर) हे रूढमती तुम्हारा बोलणा भांड मस्करा जेसा भाषेहे. जैसे होलीके दिनोंमें कामी पुरषों जेसें तैसें

नहोय तिसके त्याग करणेके परिणाम होय नही ऐसा परिणाम तो होयहै तो क्या अप्रशस्त द्वेष कहियें किंतु प्रशस्त द्वेषही ते कहियेहै क्योंकि दूसरेको ताप करणा ते क्रोधका अंशहै तिसवास्तें क्रोधरूप जे द्वेष ते रागकी तरें दो तरहसें होतेहै अब निखेपायें करी राग तथा द्वेषका वर्णन करताहुं कि जैसें राग तथा द्वेषके नाम १ थापना २ द्रव्य ३ तथा भाव ए ४ च्यार च्यार प्रकार होणेसें दोनोंके च्यार च्यार भेद होतेहै जैसें नाम राग १ थापना राग २ द्रव्य राग ३ तथा भाव राग ४ यह च्यार भेद होतेहें तैसेंही नाम द्वेष १ थापना द्वेष २ द्रव्य द्वेष ३ तथा भाव द्वेष ४ यह च्यार भेद द्वेषके होतेहैं जिसका राग ऐसा नाम होय ते नाम रागहै १ रागवानका चित्र किया होय तें स्थापना रागहै २ द्रव्य रागकी दो रीतिहैं एक कर्म द्रव्यराग दुसरा नो कर्म द्रव्य राग इसमें कर्म द्रव्य राग च्यार तरहकेहै एक योग १ दूसरा वद्धमान २ तीसरा वद्ध ३ और चतुर्थ उदीरणा प्राप्त ४ जो मोहनी कर्मके पुदगल वंध परिणामके अभिमुख यानें सनमुख हुया होय ते योग कर्म द्रव्य राग होताहै. जे मोहनीय कर्मका पुदगल बंध कियाका परिणामको पाया

होय ते वर्द्धमान कर्म द्रव्य राग होताहै जो मोहनीय कर्मका पुदगल बंध परिणामकी निष्टानें पाम्या होय ते बद्धकर्म द्रव्य राग होताहै और जो मोहनिय कर्मका पुद्गल उदयको पाम्या होय ते उदीरणा प्राप्त कर्म द्रव्य राग होताहै. इसीतरे तो कर्म द्रव्य राग का दो भेदहै एक विश्रसा दूसरा प्रयोग. जो संध्यां राग प्रमुख दीषताहै ते विश्रसा नो कर्म द्रव्य राग कहाताहै और जो वस्त्रा दिकके विषें कुसुंभादिक राग दीषताहै ते प्रयोगका कर्म द्रव्य राग कहाताहै और भाव रागका पण दो प्रकारहै एक उदय प्राप्त. दूसरा परिणाम मोहनीय. कर्मका उदय होय ते उदय प्राप्त भाव राग कहाताहै जिसका द्वेष ऐसा नाम होय ते नाम द्वेष कहाताहै और द्वेषवानका जो चित्र काढया होय ते स्थापना द्वेष कहाताहै. द्रव्य द्वेषके दो प्रकारहै एक कर्म द्रव्य द्वेष. दूसरा नोकर्म द्रव्य द्वेष इसमें कर्म द्रव्य द्वेषका च्यार प्रकारहै एक योग दूसरा वर्द्धमान तीसरा बद्ध और चतुर्थ उदीरणा प्राप्त. जे मोहनीय कर्मका पुदगल बंध परिणामके अभिमुख हुया होय ते योग कर्म द्वेष कहाताहै. जे मोहनीय कर्मके पुदगल बंध कियाका

परिणामको पाम्या होय ते वर्द्धमान कर्म द्रव्य द्वेष कहाताहै. जे मोहनीय कर्मका पुदगल बंध परिणामकी निष्ठाको पाम्याहोय ते बद्धकर्म द्रव्य द्वेष कहाताहै और जे मोहनीय कर्मका पुद्गल उदयको पाम्याहोय ते उदीरणा प्राप्त कर्म द्रव्य द्वेष कहाताहै. इसीतरें तो कर्म द्रव्य द्वेषका दो भेदहै एक विश्रसा दूसरा प्रयोग. जे संध्याराग प्रमुख दीषताहै ते विश्रसा नो कर्म द्रव्य द्वेष कहाताहैं तथा जे वस्त्रादिकके विषे कुसुंभादिक राग दीषताहै ते प्रयोगका कर्म द्रव्य द्वेष कहाताहै. और भाव द्वेषका इम दो प्रकारहैं एक उदय प्राप्त दूसरा परिणाम मोहनीय. कर्मका जे उदय होयतो उदय प्राप्त भाव द्वेष कहाताहै और मोहनीय कर्म परिणामको पामें ते परिणाम भाव द्वेष कहाताहैं. हिवे नयांके मतसें राग द्वेषका वर्णन करूं हुं संग्रह नयकी रीतिसें क्रोध तथा मान य दोनों अप्रीतिनो परिणाम होणेसें द्वेष कहाताहैं अनें माया तथा लोभ यह दोनों प्रीतिको परिणाम होणेसें राग कहाताहैं व्यवहार नयकी रीतिसें मायाकी योजना पराये उपघातके वास्तें होयहैं तिसवास्तें तीसरी माया पण द्वेषज कहवायहैं और न्यायोपार्जित द्रव्य प्रमुखके विषे जो लोभ होयहै ते राग कहाताहै प

रंतु अन्यायोपार्जित द्रव्यादिकके विषे जे लोभ होयहै
ते राग कहाता नही क्येंकि इससे कषायादिककी उत्प
ति होयहै ऋजू सूत्रनयकी रीतिसें क्रोध जोहै ते अप्री
तिनोज परिणाम होणेसें एकांत द्वेषकहाताहै बाकीके
तीन जे मान माया अनें लोभ ते एकात द्वेष कहाता
नही किंतु अनेकांत कहाताहै क्योंकि जब जिसके स्वो
त्कर्ष परिणामरूप होयहै तब तिसको राग कहवायहै
और जब परनिंद्या परिणामरूप होयहै तब द्वेष कहिवा
यहै तैसें माया तथा लोभ पण जब पूर्व परिणामरूप
होयहै तब राग कहवायहै और जब परद्रोह परिणामरू
प होयहैं तब द्वेष कहवायहै और शब्द नयकी रीतिसं
क्रोध तथा लोभ यह दो कषायरूप होणेसें इनमे मान
तथा माया अप्रीतिना परिणामरूप होइकर जब क्रोधमें
आकर मिलजाय तब ते कहवायहै और प्रीतिका परिणा
मरूप होकर जब लोभमें आकर मिलजाय तब राग क
हावेहै परद्रव्यके विषे जे प्रवृति होयहे तिसकूं निश्चयसें
मोह कारण नही क्योंकि प्रवृतितो मन वचन तथा का
य योगसें होयहे और फलकी इछा रागद्वेषसें होयहे तिस
वास्तें फलकी इछा विना साधू जो धर्मोपकरण धारण
करेतो तिसतें अयोग्य कारण क्या हुवा कहवाय क्योंकि
फलकी इछाविना राग द्वेष होता नही. मुनीको वस्त्रादि

कका ग्रंथ होता नही क्योंकि फक्त शरीरकी रक्षा वा ध
र्म साधन करणे वास्तें ग्रहण करतेहें तिसमें मुर्छा रंच
मात्र होती नही जिम शरीरकी रक्षा वा धर्म साधनके
वास्ते यति निरवद्य आहारको ग्रहण करतेहे परंतु ति
समें मूर्छा होती नही तिम धर्मोपकरणोविषे जाणिये
जैसे शरीरको पालण करणे वास्तें निरवद्य आहार ले
तां यतिकों विराधक कह्या नही तैसें निरवद्य वस्त्र पा
त्र रखणेसें मुनी विराधक न कहिवाय किंतु
आराधिकही कहवाय.

प्रश्न ८ मा– कितने मतपक्षी ऐसा कहतेहें कि
शुद्धोपयोग जोहे ते प्रदीप जैसाहे अने भोजन तथा
शरीर संचलन जेहे ते तेल पूरण तथा बाटसंचार जैसे
हे. एहतो योग्यहे परंतु उपधि अयोग्यहे. (उत्तर) ऐसा
कहन तुम्हारे मतवाले अमरचंदजीका असमीचीनहे
क्योंकि धर्मोपकरण धारण करतां ते प्रदीपने निर्वात
स्थलें राखणा जैसाहे इसवास्तें योग्यहे जैसें सर्व भोज
ननी तृश्नासें रहित थतां अंतरंग आत्मस्व
भावकी भावना करतां तिसके उपष्टंभकें वास्तें आ
हारका जे ग्रहण करणा ते धरमार्थ अनाहारक हो
ताहे॥ यतः ॥ जस्सअणेसणमप्पा । तंपीतओतप्पडिच्छ
गसमणा ॥ अणाजिकमणेसण । मघतेसमणाअणाहारा ॥

इतिप्रवचनसारे ॥ तैसे सकल परिग्रह रहित गतां आत्म स्व भावकी भावनाकरता तिसकी उपष्टंभके वास्तें वस्त्रा दिकराखतां पण प्रमार्थे वस्त्रादिक रहित कहवायते युक्तहे.

प्रश्न ९ मा— कितने रूढमती कहेतेहें कि जो सूत्रमें कह्या हे कि यती सचेलहे तो अचेलपणुं ते किम संभवे (उत्तर) हे मतपक्षीयो ऐसा कहण तुम्हारा तुम्हारे तांई कठण होसी क्योंकि तुम्हारा शास्त्रमें यतीनें आहार करंतां आणाहारी कह्याहे तो मूर्छा रहित सचेलको पण अचेल कहतां क्या अघटित होय. ओर जो ऐसा कहोगे कि वस्त्र धारणेसें अचेल परीसा जीता जाय नही तो आहार कियासें क्षुधा परीसह किसतरह जीता जाय ओर जो ऐसा कहोगे कि तीव्र क्षुधालागी होयतोभी यतीनें अने- षणी आहार लेणा नही किंतु जो शुद्ध आहार मिले तोज आत्मानें उपग्रह करणा, ऐसी रीतिसें- क्षुधा परीसह जीतायहे. इसीतरें शीतादिक वडे घणी वेदना होती होयतोभी यतियें सदोष वस्त्र लेना नही किंतु निर्दोष वस्त्र मिलेतो आत्मानें उपग्रह क- रणा ऐसी रीतिसें अचेल परीसह जीतायहे इम निश्चयसें अचेलपणों जाणियें. हिवे व्यवहारसें अचे- ल पणों दर्शावतेहे जैसें कोई मनुष्य वस्त्र पहिरके

तालाव वगैरह पानीमें स्नान करण वास्तें प्रवेशकरे
ते वस्त्रसहित लोकमें नग्न कहाताहे. तैसेंही यती
जीर्ण वस्त्रनें धारनकरे ते अचेलही कह्या जाताहे.
तीर्थंकर विना दूसरा यती उपचारे अचेलकहवाय
क्योंकि ते वस्त्र सहितनें अवस्त्रमें गिनतेहे जैसें
कोटि धनवान हुतां तिसका अभिमान नहोय तो
ते निर्धन जैसा होयहे, इम सचेल साधु विसे
जाणिये सर्वथा अचेलतो, जब स्कंध ऊपरसें देव
दुष्य वस्त्रपडे तब तीर्थंकर देवही कहातेहे. शिवाय
इनसें और कोइ साधू अचेल नही होता जो
तुम कहोगे कि जो काम जिनेश्वर तीर्थंकरें नही
कीया तो ते काम हमकोंभी करणा जोग्यनही
त्यारे तब धर्मउपदेश, शिष्य दिक्षा तथा गुरु वचना
दिकनुं तुम्हारे क्या उपियोगहे. जैसें भगवंते ज्ञान
उपज्यापीछें धर्म उपदेश दीयाहे, किंतु केवलज्ञानके
पुर्वे किसीनें उपदेश कीया नही तैसें तुम्हारेभी के-
वलज्ञान उत्पन्न होय तब उपदेश करणा योग्यहे
तिसके पहिलें कुबभी धर्मउपदेश प्रमुख करणा
चाहीये नही. ओर जो साधु लब्धिरहित होय ति-
सको स्थिवरकल्प मारगही हितकारीहे. ते समें जि-
नकल्पमार्ग त्यागकरणा योग्यहे जब आत्मज्ञान होय तब

जिनकल्प मार्ग आदरणा चाहीये परंतु असमर्थ पुरसको जे उत्कृष्ट मार्गका जो आदरणाहै ते फक्त आर्तध्यांनका हेतु होताहे ॥ यतः॥ आकालेौत्सुक्य-स्यतत्वतः आर्तध्यांनरूपत्वातधर्मविदो ॥ इसवास्ते भग-वानके कहे मार्गको जो धारनकरे ते सुखी होताहे. और भगवंतें जैसा मार्ग आप अपनेको कह्याहे तैसे जो सामान मनुष्य करणा चाहे ते विपरीत फलके लायक होय. और अज्ञा विराधक होय. जैसें रोगी वैदकी कही ओषधी जो सेवतो रोग रहितहोय और जो वैद्यके कहे प्रमाणें न करेतो और अपथ्य सेवन करतां हुवा जिम अकाले नाश पामे तिम यहभी इसीतरें जाणिये, सर्व आत्मशक्तिको फोरने-वाला यानें परगट करनेवाला साधू संयमादिकके वास्तें जिम आहार करतां हुवा जिनमार्गका त्याग करतानही तिम स्वाध्यायादिकनें वास्तें पण ते यतिए धर्मोपकरणका त्याग करणा नहीं ॥ यतः ॥ तिहिं ठाणेहिं वच्छं धरेज्जा तंजहा हरिवात्तिअ दुगंछवत्तिअ परिसहवतिअ ॥ इतिवचनात ॥ लज्जा अथवा दुगंछा मिटानेको तथा संजमके वास्तें वस्त्र धारण करणा चाहिये और जो वस्त्र नहोय और नग्न होयतो लज्जा होय और संजम पलै नहीं. और जो वस्त्र

न होयतो लोक निंद्याकरे कि यह धर्म अच्छानहीं क्योंकि जिसमें जिनके साधू उघाडे नंगे फिरतेहैं तिस निंद्याको टालनेके वास्तें वस्त्र धारन करना चाहीये. जो वस्त्र न होयतो ताढ याने शीत तथा ताप परमुख लागे तिसतें चारित्र भंगरूप आर्त-ध्यांन उतपन्न होयहै. तिसके टालनेके वास्ते वस्त्र धारण करणा इम कारणकि कह्याहै तो तिसकोभी तुम्हारें करणा न चाहिये ॥ यतः ॥ छहिं ठाणेहिं समणे निगंथे । आहार माहार माणेइ कमईतं वेयणवे-यावच्चे । इरियठाएअसंयमठएतहपाणपत्तियाए छठेपुण-धम्मचिंताए ॥ इत्यादि कारणके लीये साधु आहार करे तिसतें आज्ञाको अति क्रमण होय नही ति-सके कारण एहहै. क्षुधाकी वेदना टालने वास्तें वियावच करणे वास्ते, इरिया सोधन वास्ते, संयम पालन वास्ते, प्राण धारण वास्ते तथा स्वाध्याय परमुख धर्मचिंत्याके वास्ते साधु आहार करतेहैं. प-रंतु बल तथा रूपादिकके वास्ते करनानही. ऐसेंही वस्त्रभी कारणके वास्तें धारण करतेहैं तिसको त्याग करणेका कारण क्या. जो आहारतो लेना और वस्त्र छोडना इसतरें करनेका तुम्हारा क्या अभिप्राय यानें क्या प्रयोजणहै ते हम जाणते नही.

प्रश्न १० मा--कितनेक रूढमती ऐसा कहतेहैं कि जिसनें लाज तथा दुगंछा प्रमुख जीत्या न होय तिसकों चारित्रका अधिकार किसतरहे होय (उत्तर) हे हठग्राहिहो जब क्षुधा तृषा मूल गुण घातीक नहीतो लज्जा तथा दुगंछा यह मूलगुण घातीक किसतरह होय. इसवास्ते इहां तुम्हारें अभिनिवेशक मिथ्यात विना दूसरा कोई कारण देखनेमे आता नही और जो तुम ऐसा कहोगेके यतीकूं लज्जा तथा दुगंछा होयतो तिससे विपरीति जे अलजु तथा अदुगंछारूप आत्मस्वभावकी भावना ते न होय तो क्षुधा तथा तृषा के होणेसें तिससें विपरीत जे अक्षुधा तथा अतृषारूप आत्मस्वभावकी भावना ते यतीकूं किसतरें होय. इस वास्ते शांतिदांति प्रमुख श्रेष्ट गुणयुक्त जे यतिहै तिनका मन शुद्ध होयहै तिसके बलसें आत्मस्वभाव भावना टलती नही. ए समाधान आहार और उपकरण दोनों धर्म साधना निमितहै और जो ऐसा कहोगे कि उत्सर्ग तथा अपवाद ये दोनो मार्गके विषे सापेक्षताएकरी भोजन करणा ते अयोग्य कहवाय नही. तो सापेक्षतायेंकरी उपकरण धारण करणेमें क्या अयोग्यताहै. और तुमजो ऐसा कहोगे उपक-

न होयतो लोक निंद्याकरे कि यह धर्म अच्छानही क्योंकि जिसमें जिनके साधू उघाडे नंगे फिरतेहैं तिस निंद्याको टालनेके वास्तें बस्त्र धारन करना चाहीये. जो बस्त्र न होयतो ताढ याने शीत तथा ताप परमुख लागे तिसतें चारित्र भंगरूप आर्त-ध्यांन उतपन्न होयहै. तिसके टालनेके वास्ते बस्त्र धारण करणा इम कारणकि कह्याहै तो तिसकोभी तुम्हारें करणा न चाहिये ॥ यतः ॥ छहिं ठाणेहिं समणे निगंथे । आहार माहारे माणेइ कमईतं वेयणवे-यावच्चे । इरियठाएअसंयमठएतहपाणपात्तियाए छठेपुण-धम्मचिंताए ॥ इत्यादि कारणके लीये साधु आहार करे तिसतें आज्ञाको अति क्रमण होय नही ति-सके कारण एहहै. क्षुधाकी वेदना टालने वास्तें वियावच करणे वास्ते, इरिया सोधन वास्ते, संयम पालन वास्ते, प्राण धारण वास्ते तथा स्वाध्याय परमुख धर्मचिंत्याके वास्ते साधु आहार करतेहैं. प-रंतु बल तथा रूपादिकके वास्तेकरनानही. ऐसेंही बस्त्रभी कारणके वास्तें धारण करतेहैं तिसको त्याग करणेका कारण क्या. जो आहारतो लेना और बस्त्र छोडना इसतरें करनेका तुम्हारा क्या अभिप्राय यानें क्या प्रयोजणहैं ते हम जाणते नही.

रखतेहैं तिसको परिग्रह क्यों नही कहते. उनको मुनी-
पणा कहासें हुवा और जो ऐसा कहोगे कि यहतो
धर्मसाधन जीवदया पालनेका उपकरणहे तो क्या दोषहैं ऐ-
सा जो कहोतो तुम्हारे इहां तुस समानभी परिग्रहके रखणे
का दोष जोहै तो इनके कमंडल और मोरपछीका परिग्रह
क्यों नही गिणते और जो कहोगे कि यहतो धर्म
साधनका कारणहैं तो बस फिर हमभी तो ऐसाही
कहतेहे जो ओघा, पात्रा वस्त्रादिक उपकरणहे सो
धर्म साधनके कारणहैं सोई सूधी सरधा कर सम-
झिये. अब केवलीके आहार विषें दिगांबरमती, दि-
गांबर मतके ग्रंथ उपाशकाध्ययनके अनुसार केवलीको
क्षुधा तृषा निषेध कर श्वेतांबर मतवालोंसें ऐसा

प्रश्न ११ मा—कहतेहै कि देवतो १८ दोष रहितहे
और कृत कृतहे यह सर्व मानतेहे और जो तुम
ऐसेही मानतेहो तो तिनको कवलहारका करणा कि-
सतरह कहतेहो. कवलहार कियासें क्षुधा तृषा एह
अंगकार करणा होगा क्यों कि क्षुधा तृषाविना
कवलआहारसंभवे नही. जो तुम क्षुधातृषाको अंगीकार
करोगे तो परमेश्वरको आठरह दोष रहित किसतरह
कहोगे. क्योंकि क्षुधा और तृषा एह दो दोषतो क-
वलआहारके ग्रहणसें सिद्ध होयहै तो क्या केवली

रण जोहै ते भावसेंतो मूर्छा रहितहै परंतु द्रव्यसें परिग्रह रूपहै तिसते पच्चखाणका भंग होयहै क्योंकि द्रव्य क्षेत्र काल तथा भाव ए च्यार प्रकारें जो पच्चखाणहै तिसमाहे प्रथम द्रव्य पच्चखाण उपकरणासें संभवे नही। ऐसी जो अध्यात्मकी कल्पनाहै ते बिधवाके योवनकी तरहे निष्फलहै क्योंकी द्रव्यादिक चारप्रकारें सर्व मूर्छानो जे त्याग करणा यही सिद्धंतका परमार्थहैं और जो पच्चखाणके जे चार प्रकार कह्याहै तेहतो सर्व भाव पच्चखाणको बिस्तारहै ऐसा समझना चाहिये. ऐसी रीतसें सिद्धांतके विषे उपकरण धारण करणा कह्याहै. ते जयणा कर रखनेसें साधुको सुख कारक होयहै तथा पापको दूर करेहै. इम उत्राध्ययन बृहद्वृति प्रमुखनें विषे हमारा पूर्वाचार्यें कह्याहै ते अवश्य मानना योग्यहै. इहां इतने प्रश्नोंके उत्तरमें साधु महात्माओंको वस्त्र पात्रादि धर्म उपकरण धारन करणा सूत्र वा शास्त्रके प्रमाणसें कह्या ते बुद्धिमान गौरकर देखेंगे किसाका कथन सहीहै और किसका कथन वेसहीहै. और दिगंबर मतवालोका ऐसा कथनहै कि तुस समानभी परिग्रह होयतो सिद्धपदको प्राप्त नहोय तो आजकल इस पंचम आरेमें जो मुनीनाम धरावेहै वे लोग कमंडल वा मोरपींछी

रखतेहैं तिसको परिग्रह क्यों नही कहते. उनको मुनीपणा कहासें हुवा और जो ऐसा कहोगे कि यहतो धर्मसाधन जीवदया पालनेका उपकरणहे तों क्या दोषहैं ऐसा जो कहोतो तुम्हारे इहां तुस समानभी परिग्रहके रखणे का दोष जोहै तो इनके कमंडल और मोरपीछीका परिग्रह क्यों नही गिणते और जो कहोगे कि यहतो धर्म साधनका कारणहैं तो बस फिर हमभी तो ऐसाही कहतेहे जो. ओघा, पात्रा वस्त्रादिक उपकरणहे सो धर्म साधनके कारणहैं सोई सूधी सरधा कर समझिये. अब केवलीके आहार विषें दिगांबरमती, दिगांबर मतके ग्रंथ उपाशकाध्ययनके अनुसार केवलीको क्षुधा तृषा निषेध कर श्वेतांबर मतवालोंसें ऐसा

प्रश्न ११ मा–कहतेहै कि देवतो १८ दोष रहितहै और कृत कृतहे यह सर्व मानतेहे और जो तुम ऐसेही मानतेहो तो तिनको कवलहारका करणा किसतरह कहतेहो. कवलहार कियांसें क्षुधा तृषा एह अंगकिार करणा होगा क्यों कि क्षुधा तृषाविना कवलआहारसंभवे नही. जो तुम क्षुधातृषाको अंगीकार करोगे तो परमेश्वरको आठरह दोष रहित किसतरह कहोगे. क्योंकि क्षुधा और तृषा एह दो दोषतो कवलआहारके ग्रहणसें सिद्ध होयहै तो क्या केवली

सोले दोष रहितहै. जो ऐसा मानोंगेतो आगम वच-
नोंका अपमान होगा ॥ यतः ॥ क्षुत्पिपासाजरातंक
जन्मातकभयस्मयाः ॥ नरागद्वेषमोहाश्च । यस्याप्तःस-
प्रकीर्त्यते ॥इति ॥ दिगांबर ग्रंथांतरगत उपासकाध्य-
यने क्षुधा १ तृषा २ जरा ३ क्षय ४ जन्म ५
यम यानें मरण ६ इहलोकादी भय ७ अहंकार ८
राग ९ द्वेष १० मोह ११ चिंत्या १२ अरति १३
निद्रा १४ विस्मय १५ विषाद १६ खेद १७ त-
थाखेद १८ ए अठारह दोष होतां कृत कृतता कि-
म संभवे इसवास्तें केवलीको जो कवलाहारी कहोतो
वे दोष अंगीकार करो (उत्तर) हे रूढमतिओं तुम
क्षुधा ओर तृषा ये दो अठारह दोषोंसें गिणकर कृत
कृत जे केवली तिनके विषें ते दो दोषनों ते जो
अभाव कह्यो ते वचन तुम्हारा तुम्हारे मतवालोंसें क-
हतां शोभायमानहैं परंतु पंडितोंकी प्रखदामें शोभा-
को प्राप्ति न होय क्योंकि क्षुधा तृषा ए दोनों दोष
तब गिणेजाय कि जब कोई स्वभाविक आत्माका
गुणकों दुषण लागता होय तेहतो कुछ होता नही क्यों-
कि ये भाव वेदनीय कर्मका करा [illegible] ते केवल
ज्ञानको दूषण नही करिसके. क्य[illegible] के दू-
षण करणवाला ज्ञानावरणीय कर्म[illegible] [illegible]नको

दुषित करनवाला दर्शनावर्निकर्म तिम सम्यक्त चारित्रको दुषित करसकेनही क्योंकि सम्यक्त चारित्रको दुषित करनेवाला मोहनीयकर्महै. तिमही दानादिक पांच लब्धिको पण दुषित करि सकेनही क्योंकि लब्धिओंको दुषित करनालवा अंतराय कर्महे. इस कारणवास्तें क्षुधा अोर तृषा ये दोनों दोष कहाते नही. इहां कोई ऐसा प्रश्नकरे कि जेम क्षुधा तथा तृषा वडे छदमस्थोंको इर्यासुमति श्रुताभ्यासादिकको भंग देखनेमें आवेहै इसी तरेंह केवलीको पण चारित्र ज्ञानमें प्रतिबंध रूप किसवास्तें न होय इसका उत्तर यहहै कि यद्यपि क्षुधा तथा तृषा यह दोनों बहिरिंद्रिय बृतिनी ग्लानि करणेके लियें इकेंद्रिय ज्ञानादिकका बिरोधी होयहै तथापि अतिंद्रिय ज्ञानका घात करि शक्ता नही अोर कोइ ऐसा कहे कि जीवका अव्याबाध गुणहै याने निराकुलत्वरूप जे जीव तिसको दूपित करणवाली क्षुधा तथा तृषाहै क्योंकि ते आकुलता प्रमाणरूपहे जे आकुलतानी क्षुधावडे निवृति होयहै ते क्षुधा परिणामकहे अोर क्षुधा तिसका परिणामहै अनें जे आकुलतानी तृषावडे निवृति होयहै ते तृषानी परिणामकहे अनें तृषा तिसका परिणामहै तिसको एसा कहेणा कि

केवलीका सिद्धत्वगुणहै तिसको दूषित करणवालो मनुषपणो पण दोषरूप किम न कहवाय इत्यादिक विचार करकें अपनी कल्पना छोडीकर घातीया कर्मका किया १८ दोष जैसी रीतसें पहलें आचार्यें कह्याहै तैसी रीतपर मानना चाहिये ॥ यतः ॥ अंतराय दानलाभ । वीर्यभोगोपभोगगाः ॥ हासोरत्यरतीभीति । जुगुप्साशोकएवच ॥ १ ॥ कामोमिथ्यात्वमज्ञान । निद्राचाविरतिस्तथा ॥ रागोदोषश्चनोदोषा । तेषामष्टादशाप्यमी ॥ २ ॥ ज्ञानगुणका घात करनवाला अज्ञान १ दर्शनगुणका घात करणवाली निंद्रा २ सम्यक्तगुणका घात करणवाला मिथ्यात्व ३ चारित्रगुणका घात करणवाला हास्य १ रति २ अरति ३ भय ४ शोक ५ दुगंछा ६ काम ७ अविरति ८ राग ९ द्वेष १० ओर दानादि लब्धिरूप वीर्यगुणका घात करणवाला दानांतराय, लाभांतराय, भोगांतराय. उपभोगांतराय तथावीर्यांतराय ये १८ दोष घातिककर्मका कह्याहै परंतु केवलीको घातियाकर्मानो क्षय होजायहै तिसवास्तें ते निर्दोष कहवायहै तेमजतां क्षुधा अनें तृषानें अठारह दोषांमें जे गिणेहै ते युक्ता युक्त विचार न करतां केवल अपणे मतकी पुष्टी करेहै.

प्रश्न १२ मा—कोई ऐसा प्रश्नकरे कि जिम केव

लीनें क्षायक ज्ञानादिकहै तिम क्षायक सुखपणहै
तिहां दुःखनों लेशपण नहीं तो क्षुधा तृषा किम ला-
गेहे (उत्तर) केवली जो क्षायक सुख मानता होयत्तों
सिद्धांतनें विषे वेदनीय कर्मनों उदय कह्याहै ते किसवा-
स्तें नामानीयें अर्थात् मानना चाहियेंहै जिम ज्ञानावर्णी-
य कर्मके उदयछतां क्षायक ज्ञानहोता नही तिम वेदनी-
य कर्मनों उदयछतां क्षायक सुख पण होता नहीं. कोई
ऐसा कहे कि केवलीको ऐसा वेदनीय कर्मका उदय हो-
यहे कि जेहनां प्रदेश आत्म प्रदेशके साथें मिलेहै ते
स्थिति प्रमाणें रहीनें क्षीणथइजायछे परंतु केवलीनें ते
हनी आकुलता होती नहीं एहनों उत्तरएह के यद्यपि ए-
हवा प्रदेशोदय हमनें पण मान्यहै तो केवलीनें क्षायक सु-
ख संभवे नही तेम छतां अभ्युदयताथी हमारो कहणो
योग्यहै केवलीनें वेदनीय कर्मनों प्रदेशोदय छेज नही
किंतु सिद्धांतोंमें विपाकोदय कह्योछे और आवश्यक
निर्युक्तनें विषे प्रकृतिका प्रशस्तउदय कह्योहै तथा दि-
गंबरके प्रवचनसार नामका ग्रंथमा पण ॥ पुणफला अरि-
हंता ॥ इत्यादिक वचन कह्याहै ऐसी रीतसें असुखनां प्र-
तिपक्ष वचनथी केवलीनें सुखनों विपाकहे.

प्रश्न १२ मा—कोईकहे के जे कारण वास्ते सुखवि-
पाकहे तिसते दुःखविपाक नही तिसका समधान करेहे

हमारा श्रीभगवती सूत्रनें विषे केवलीनें ११ परीसे क-
ह्याहे. तद्यथा--एकविह बन्धगस्सणं भंते सजोगि भवत्थ के-
वलीस्स कइपरीसहा पन्नता गोयमा एकारस परीसहा
पन्नता एव पुणवेण त्तित्ते॥ तथा वेदुने॥ एकादश जिने॥
एहवी रीतें श्रीतत्वार्थ सूत्रमें ११ परीसह कह्याहे इस
करीकें केवली क्षुधा तथा तृषा प्राप्त थईछतां क्षायिक
सुखनी हानि होती नही एहवो ठहरेहे अहिं उक्तं
॥ एकादश जिने ॥ ए सूत्रनों अर्थ कितनेक अपनें
मत पोषण करण वास्तें ऐसा करेहे कि ॥ एकेनाधिका
नदश ॥ एतले एक अधिक दश न थाय अर्थात् ग्यार-
ह परीसह नही. ए अप व्याख्यान जाणवो. क्योंकि ऐसो
समास संभवेनहीं वली केइयक सर्वार्थ सिद्धि प्रमुख ॥ न-
संति ॥ एहवो बाहिरथी वाक्य लेयहैं ते तो जाणे आपणा
उत्सूत्रभापणज प्रगट करता होय नही परंतु तिनको ऐ-
सा विचार करणा चाहीयेकि परीसहना स्वामी चिंताना
अधिकारनें विषे प्रसिद्ध छतां तेहनों अभाव किम होस्ये.
जे धन रहित होय ते धननों स्वामी कहवाय नही. और
कितनेक ऐसी रीतसें व्याख्यान करेहें कि केवलीनें वेद-
नीय कर्म होणेसें कारण कार्योपचारें करीनें ग्यारहे परीसह
कह्याहे (एह व्याख्यान) पण नदीमें डूबतां घासनों आ
श्रय लेवाय ऐसाहै. क्योंके स्वामित्व चिंता ए उपचार सं-

भवे नही जो उपचार मानीयेतो गता मोहनीय कर्मना होणेसें उपशांत मोहगुणस्थांनकनें विषे पण बावीस परीसहे कह्याजाणिये. इस प्रकारे करी सूत्रनां घणां अपव्याख्यानोंका त्याग करीनें पर्मार्थनो विचार करणा चाहीये और आहार प्रर्याप्तिनामकर्म तथा असाता वेदनीयकर्म ए दोनोके उदयसें प्रज्वलित हुई जे जठराग्नि तिसकर जीवकों क्षुधा वा तृषा लगतीहै ते वधां कारण केवलीनें विषे गताहै तेनें क्षुधा तथा तृषा केम न लागे ते कहो.

प्रश्न १४ मा—कोई वादी ऐसा कहे कि क्षुधा वा तृषा एह मैथूनकी इछाकी तरे तृश्नारूप होणेसे ते मोहनोकर्मसें उत्पन्न होयहै तिसवास्तें केवलीनें विषे एह सभवें नही क्योंकि केवलीएतो मोहनी कर्मनो प्रथमही नाश करयाहै इसका (उत्तर) एहवी रीतसेंहै ते कहतेंहैं हे मतपक्षीओ देखो तृश्ना अनें दुःखमा घनो भिन्नताहै तृश्नानेंज दुःख कहवाय नही परंतु संसारीनें तृश्नाथकी दुःखनी उत्पति होयहे. अब तृश्ना उत्पन्न होणेका प्रकार कहेतेंहै. मोहनीयकर्म अभिनिवेश चार कारणासें आहार संज्ञा उत्पन्न होयहे ते उत्कर्ष पाम्यानें लीयें तृश्ना कहवायहे ते चार प्रकार श्रीठाणांगमें कह्याहे ॥ यतः ॥ चउहिं ठाणेंहि आहार सण्णा समुप्पज्जइ उ-

मकोठयाए ॥ बुहावेदणिज्ञस्सणं कम्मस्स । उदएणं म-
तीए तदठो वओगेणं ॥ इसका अर्थ चार कारणेंकरी आ-
हारसंज्ञा उत्पन्न होयहै कोठो खाली हुयासें क्षुधा वेद-
नीयकर्मना उदयथी। अहारादिकनी कथानुं श्रवन करया-
थी तथा वारंवार आहारनों उपियोग करयांथी आहार
संज्ञा उत्पन्न होयहे अर्थात् ए चार कारण मिल्याथी
मोहनीयकर्मना बलें आहारसंज्ञा उत्पन्न होयहे. अतएव
गोमठसार टीका प्रमुखनें विषे पण आहारसंज्ञा आहारा-
भिलाख रूप कहीहे ते तृश्नारूप होणेसें यतिनें ए बिना
असन पानादिकनें विषे प्रवृत्तिछे ते कहतेहे. ए हेतुथीज
यतिनें पण अहारसंज्ञाविनां असनादिकनें विषे प्रवृति-
छे क्योंकि विधिपालतां यतिनें अतिचार कह्या नहीं
अनें आहारसंज्ञातो अतिचारमेंहे तिसवास्तें जो इम क-
हेछे कि आहारसंज्ञाविना यतियें आहार करवो नही तेनें
आचारसें पण अतिचार कह्याहे जेम मैथुनसंज्ञा विना
अब्रम्हचर्य न थाय तिम आहारसंज्ञा विना केवलीनें
भुक्ती थायनही एहवा परवादीना वचननों आवीरीतें
निराकरण करयोछे जिम यतिने अहारसंज्ञा विना आ-
हार करणा उचितहे तिम केवलीनें विषे पण मानीलेनों
चाहिये. आहार अवर्जनीय होणेसें उचितहे तथा छद-
मस्थ यतिनें प्रशस्त ध्याननों कारणहे तिसवास्तें आ-

हार संज्ञाविना केवलीनें आहार लेना संभवेहे और मै-
थून वर्जनीय होणेसें अनुचितहे तथा दुर्ध्याननों कारण-
हे इसवास्तें मैथूनादिक अनुचित प्रवृति अप्रशास्ति राग
द्वेषविनां केवलीनें थायनही ऐसा अर्थनों विचार करी-
नें तेहनों ग्रहण करणा चाहिये. आहारका चिंतनथकी
जे आहारसंज्ञा उत्पन्न थायछे तिस विषे मोहित हुया
मूढ जीवने जो ते आहार रूप इष्टवस्तु प्राप्ति न होय
तो ते वस्तु कव प्राप्ति होसे ऐसा चिंतनरूप आर्तध्यां-
न करेहै परंतु ते अभिलाषा मिटती नही तो पीछे पूर्वो-
क्त रीतियें जो तेनें आहारादिक इष्टवस्तुनी प्राप्ति न
होय तो ते जीव क्षुद्धावेदनीयेका उदयथी प्रज्वलीत
थएला उदरानलना योगें शरीर दुःख पामेहे अनें पछे
क्रंदन रोदनादिक कर्यांथी अराते मोहनीय कर्मना उ-
दयनें लीयें गाढ चिंतोपतापरूप मानस दुःख पामेहै क-
दाच पुण्य प्रकृतिना परिपाकें इष्ट वस्तुनी प्राप्ति थाय-
तो पण रति मोहनीय कर्मना उदयथी ते वस्तुना आवि-
योगनी इच्छा कर्याकरे तेणें करी ते वस्तुऊपर गाढानू-
रागें करी अर्तध्यानना वश थयो थको जीव दुःखज
पामेंहै. तिसवास्ते मोह मूढ जीवछे तेहनें परमार्थ थकी
कदी पण सुखनही. मोहनीय कर्मना क्षयथी जीवनें आ-
हार इच्छा करवानी कर्णोकाभाव ममत्वभाव विना उत्पन्न

थायहे अनें मोहनीय कर्मना उदयथी जीवनें मानस दुःख उत्पन्न थायहै ते दुःख केवलीनें मिटजायहे पण असाता वेदनीयकर्मना उदयसें केवल ज्ञानीनें जो क्षुधा तृषा लागेहे तेहनें ते त्याग करी शके नही. पूर्वपक्षी प्रश्न कहेहे ते वेदनीय कर्मघाती कर्मना जेहवाहे. इसवास्ते मोहनीय कर्म विना ते दुखदायकहोयनही ॥ घादीववेदणीय ॥ मोहस्सुदएण घाददेजीव ॥ इति ॥ कर्मकांडे. तेहनो समाधान इसहे. जो तुम्हारा कह्याप्रमाणे होयतो असाता वेदनीयनी तरें केवलीनें बीजी प्रकृतिओपण मोहनीय कर्मविना पोताना कार्यनी करणवाली होवी जोईये अनें तुमें वेदनीय कर्मनी साथें घाती कर्मनी तुल्यना केवीरीतें करोहो. घातीआनारसना जेहवो तेहनों रस होयहे एम सरखापणो करोहो के स्वकार्य करवानें विषे घातीआनी अपेक्षा पणों कल्पहो के अथवा दोषनें हेतुपणो कहोहो. जो कहशो के घातीआना रसना जेहवो रस होवो जोयतो अघातीकरम प्रकृति घातीना जेहवी होवी जोये. क्योंकि ज्यारे अघातीनी प्रकृति सर्वघातीनी प्रकृतिनी सार्थे वेईये त्यारे ते सर्व घातीनी प्रकृतिनों विपाक देखाडे तथा ज्यारे देश घातीनीनो विपाक देखाडे अनें एकली वेईये त्यारे मात्र ते एकलो पोतानोज विपाक देखाडेहे तिसवास्ते पक्ष संभवते नही. जो कहशोके

स्वकार्य करवानें विषे घातीश्रानी अपेक्षा होवी जोयहे
तो नामकर्म पण पूर्वे मोहनीय कर्मनी अपेक्षा करतो
छतां जेम केवलीनें मोह विना आपणु काज करेहै
तिम वेदनीयकर्म पण मोहनीयकर्मनी अपेक्षाविना
कार्य करेहै. तिसवास्ते वीजो पक्ष पण संभवे नही
जो कहसो कि वेदनीय कर्मथी दोष लागेहै तो ते
पण भलाय नही क्यौंकि क्षुधा अनें तृषानें विषे दोष
पणानो पूर्वेज खंडन करयोहे एहवीरीतें स्वबुद्धीयें क-
री अहीतरें विचार करीनें जोवो. औदयिक सुख छतां
अनुकूलत्व वेदन होयहे ते द्वेषरूपहे इसवास्ते केवलीनें
औदायिक सुख तथा दुःख ये दोनों होतां नही किंतु
क्षायिक सुखज होयहे एम केतलाइक कहेहे ते योग्य
नही. क्योंकि अप्रमत यतिनें औदयिक सुख तथा
दुःख ये दोनों होयहे पण राग तथा द्वेष ए वे होता
नही. तेम केवलीनें विषे पिण जाणलेना एहमा ए-
कांतपणों नमानीयें. सुख तथा दुःख ये दोनों पदार्थ
शाश्वत नही किंतु अशाश्वतहे तओनों एवो नियमहै
कि अवश्य भोगनें दियेहै. कह्योहै कि (नाभुक्तंक्षी-
यतेकर्म) इत्यादि अनें भोगथकी कर्मबंध होयहे ए
कारणवास्ते केवलीनें विषे ते संभवे नही क्योंकि सुख
तथा दुःख ये दोनों पदार्थो अध्रुवहे एम केतलाएक

कहेहै पण योग्य नही. क्योंकि सुख तथा दुःख अध्रुव छतां अप्रमत यतिनें होयहै तो पण तिनसें कर्म बंध होता नही तिम केवली विषे पण जाणावा जोइये. इहां पण एकांत नही तो जीवनें और दुःख उतपन्न होयहै क्योंकि यथार्थ वस्तु जाणवानी इछा प्रमाणें जाणयामा न आवेतो तेथी जीवनें आकुलता होयहै तेहज दुःख जाणवा. ये दुःख वस्तुनां सूक्ष्म अर्थ न जाणयाथकी थायहै तिसवास्ते अज्ञान रूपहीहै. अज्ञान ज्ञानावरणीयकर्मना क्षयथी नाश थायहै ते दुःखनोज नाश जाणवो. केवलीनें ज्ञानावरणीयकर्मनो क्षयथइ जवाथी दुःखरूप अज्ञाननो लेश पण रह्यो नथी अ- नें केवलज्ञाननों उदय थयोहै ते सर्व सुखरूपहै ते सुख केवलज्ञानथकी प्रथक् भूत नथी क्योंकि केवलज्ञान जे है ते स्वभवना प्रतिघात रहित होणसें अनाकूलता रूपहै तिहां आकूलताज छे नही जो आकूलता नथी तो तज्जन्य जे दुःख ते किहांथी होय अनें दुःख नथी तो परम सुखजहै एवीरीतें (जंकेवली तिनाणं तंसोरंक परण संचसोचेव खेदो तस्स भणीदो जम्हा- घादीखयंजादा) ये प्रवचनसारना वचन असंभवितहै तोपण इतना विशेषहै केवलज्ञान क्षायिक सुख प्रक्रिया संभवे नही क्योंकि क्षायिक सुखतो वेदनीय कर्मना

क्षय थकीज उतपन्न थायहे ओर दिगंबर इम कहेहे के शरीरगत सुख दुःख सर्व इंद्रीयथकी उत्पन्न थायहे क्योंकि छदमस्तनें जे सुख तथा दुःख उत्पन्न थायहे ते येहवी रीतेज थायहे प्रथम परोक्ष ज्ञानना कारण-थी इंद्रियोनी उपर मैत्री पसरतेहे. इंद्रीयोंनी मैत्रीथ-की विषयोंनें विषे तृश्ना उत्पन्न थायहे।जिम अगनी-थी तपाया लोहनो गोलो होयहे तिम विषयोनी तृ-श्नाए करी इंद्रीयो तप्त होयहे ते महाव्याधि स्था-नीयहे अनें तृश्ना टालवानें अर्थे विषयनो सेवन थायहे ते व्याधीना औषध स्थानीयहे ते यद्यपि व्य-वहार दृष्टिये तो सुख कहेवायहे तथापि परमार्थ ताए दुःख रूपहे ॥उक्तंच॥ पप्पाइठेविसएफासेहिसमासदेस-हावेणपरिणममाणोअप्पासयमेवसुहणयवीदरेहोति ॥ इ-तिप्रवचनसारे ॥ ए कारण वास्ते देहगत सुख ऐं-द्रियकहे तिमज दुःख पण ऐंद्रियकहे एवा ऐंद्रियकहे विषयोना द्वेषथी दुःख उपजेहे. इसवास्ते देहगत सुख तथा दुःख केवलीनें विषे नही तेथीज केवली अतीं-द्रिय हुयाहें ॥ उक्तंच ॥ सोरंकवापुणहुखंकेवलना-णीसनत्थीदेहगयंजम्हाअदिंदिअतंजावंतम्हातदुणेयंति ॥ इतिप्रवचनसारे ॥ एहनो समाधान करेहे. देहगत सर्व सुख तथा दुःख इंद्रीयाधीन नही क्योंकि इंद्रियोनी परा-

धीनताथी जे अग्यान तथा मोहथकी सुख तथा दुःख उतपन्न थायहै तिनोंनें जे इंद्रियोंनी अपेक्षायें परंतु अप्रतयतिनें जे मानव सुख थायहै तथा शातादिक कर्मना उदयसें क्षुधादिक दोष उतपन्न थायहै तिसमें इंद्रियोंनी अपेक्षानों नियम नही. जो इम नमानियें तो, इंद्रियाधीनज सुख तथा दुःख मानियें तो रति मोहनीय कर्म तथा अरति मोहनीय कर्मनों नामंत्तर वेदनीय कर्मना उदयथी वेदनीय कर्म थायहै, एम ठहरशे तो वेदनीय कर्म जुदा कहेवासे नही. जे वेदनीय कर्म मोहनीय साथें मानीयें तो सातही कर्म ठहरसी. आठ कर्मनों संभव थासेनही. एम करतां सर्व जैन प्रकृतिनों उछेद थाशे. वली देहगत सुख जो केवलीनें न मानीयेंतो तिर्थंकर नाम कर्मनों विपाक केम संभवे. जो एम कहिये कि तिर्थंकर नामकर्म जीवविपाकीहै तिसवास्ते तेहथी जविगत सुखतो उपजैहै परंतु देहगत क्षुधादीक दुःख संभवे नही तो जेम सुखनी पण देहनी अपेक्षाहै तिसवास्ते देहगतज मानवा योग्यहै इत्यादिक सूक्ष्मविचार करी मध्यस्थ बुद्धिये न्याय करो और केवलीनें अज्ञानादि जघन्य घणा दुःख मिटगयेछे. मात्र एक क्षुधा वेदनीय रह्या है ते पण घाती कर्मनी साथें मिलेहुए जहवा पो-

ताना विपाक देखाडेहै क्योंकि केवलीनें पुण्यप्रकृतिनों विपाक प्रबलहै ॥ यतः ॥ असाय माइआओ जा-विअ असुहा हवंति पयडीउ णिंबुरसणिबुव्वपणु णहुं-तिता असुह यातस्स ॥ ए आवश्यक गाथामा तीर्थं-करनें असाता प्रकृति दुःखदायनी थाती नही. जिम दूधना घडामां नींबना रसनों बिंदु नाख्याथी कडुवा थाय नही एम श्रीभद्रबाहू स्वामीयें कह्याहे जेम तेने प्रबल पुण्य पराभव करेहे परंतु तेथी क्षुधादिक उपजे नही एम न जाणवा एहवो भाव जणावेहे पछे वि-शेषार्थतो बहूश्रुत जाणें. ओर केवलीनें वेदनीय कर्म कवलाहार योग्य थायनही इम न कहणा क्योंकि के-वलीनें अग्निमंदपणु नही. आहार प्रयाप्तनाम कर्मनें उदय अनें वेदनीय कर्मनें उदय होवानेंलीयें उदराग्नि प्र-ज्वलित थायछे ए दोनें कारण होणेसें केवलीनें वे-दनीय कर्म कवलहार योग्य थायेहे. जो कोई कहशेके वेदनीय कर्म दोरडीनों जेवुंहे तेथी केवलीनें व्याबाध करी शके नही. तेहनें एहवा जवाब देणो किए व-चन प्रबोपनेंहे शास्त्रनों नही क्योंकि श्री सुयगडां-गनी टीकामें इम कह्योहे कि ॥ यदपि दग्धरज्जूस्था-नकत्वमुच्यते वेदनीयस्य तदप्यनागामिकम युक्तिसं-गतं चागमेह्यत्यंतोदयः सातस्य केवलिन्यभिर्धायते पु-

धीनताथी जे अग्यान तथा मोहथकी सुख तथा दुःख उतपन्न थायहै तिनोंनें जे इंद्रियोंनी अपेक्षायें परंतु अप्रतयातिनें जे मानव सुख थायहै तथा शातादिक कर्मना उदयसें क्षुधादिक दोष उतपन्न थायहै तिसमें इंद्रियोंनी अपेक्षानों नियम नही. जो इम नमानियें तो, इंद्रियाधीनज सुख तथा दुःख मानियें तो रति मोहनीय कर्म तथा अरति मोहनीय कर्मनों नामंत्तर बेदनीय कर्मना उदयथी बेदनीय कर्म थायहै, एम ठहरशे तो बेदनीय कर्म जुदा कहेवासे नही. जे वेदनीय कर्म मोहनीय साथें मानीयें तो सातही कर्म ठहरसी. आठ कर्मनों संभव थासेनही. एम करतां सर्व जैन प्रकृतिनों उछेद थाशे. वली देहगत सुख जो केवलीनें न मानीयेंतो तिर्थंकर नाम कर्मनों बिपाक केम संभवे. जो एम कहिये कि तिर्थंकर नामकर्म जीवबिपाकीहै तिसवास्ते तेहथी जविगत सुखतो उपजेंहै परंतु देहगत क्षुधादीक दुःख संभवे नही तो जेम सुखनी पण देहनी अपेक्षाहै तिसवास्ते देहगतज मानवा योग्यहै इत्यादिक सूक्षमबिचार करी मध्यस्थ बुध्दिये न्याय करो और केवलीनें अज्ञानादि जघन्य घणा दुःख मिटगयोहै. मात्र एक क्षुधा वेदनीय रह्या है ते पण घाती कर्मनी साथें मिलेहुए जेहवा पो-

ताना विपाक देखाडेहै क्योंकि केवलीनें पुण्यप्रकृतिनों विपाक प्रबलहै ॥ यतः ॥ असाय माइआओ जाविअ असुहा हवंति पयडीउ णिंबुरसणिंबुल्वपणु णहुंतिता असुह यातस्त ॥ ए आवश्यक गाथामा तीर्थंकरनें असाता प्रकृति दुःखदायनी थाती नही. जिम दूधना घडामां नींबना रसनों बिंदु नाख्याथी कडुवा थाय नही एम श्रीभद्रबाहू स्वामीयें कह्याहे जेम तेने प्रबल पुण्य पराभव करेहे परंतु तेथी क्षुधादिक उपजे नही एम न जाणवा एहवो भाव जणावेहे पछे विशेषार्थतो बहूश्रुत जाणें. और केवलीनें वेदनीय कर्म कवलाहार योग्य थायनही इस न कहणा क्योंकि केवलीनें अग्निसंदपणु नही. आहार पर्याप्तनाम कर्मनों उदय अनें वेदनीय कर्मनों उदय होवानेंलीयें उदराग्नि प्रज्वलित थायछे ए दोनों कारण होणेमें केवलीनें वेदनीय कर्म कवलहार योग्य थायहे. जो कोई कहशेके वेदनीय कर्म दोरडीनों जेवुंहे तेथी केवलीनें व्याबाध करी शके नही. तेहनें एहवा जबाब देणो कि ए वचन प्रवोषनेंहे शास्त्रनों नही क्योंकि श्री सुयगडांगनी टीकामें इम कह्योहे कि ॥ यद्यपि दग्धरज्जुस्थानकत्वमुच्यते वेदनीयस्य तदप्यनागमिकम युक्तिसंगतं नागमह्यत्यंतोदयः सातस्य केवलिन्यभिधीयते पु-

त्तिरपि घातिकर्म क्षयादज्ञानादयस्तस्या अभूवन् वेद-
नीयोद्भवायाः क्षुधः किमायातं येनाशौ नभवति भ्रत-
पोष्णाया तपयोरिव सहानवस्थान लक्षणोविरोधो नापि-
भावाभावयोरिव परस्पर परिहारेण लक्षणकश्चिद्विरोधो-
स्तीति सातासातयो श्चांतर्मुहुर्त परिवर्तमानतया यथासातो-
दय एवमसातोदयोपीति अनंतवीर्यत्वं सत्यपि शरीरबलाप-
चयक्षु द्वेदनीयोद्भवा पीडाच भवत्येव नचाहारग्रहणे कि-
चित्क्षयिते केवल महो पुरुषिकामात्रमेवेति पंचाशी-
तिर्जरद्रस्त्रप्रायाः शेषासयोगिनिः ॥ एहवो जे गुणस्था-
नक क्रमारोहमा कह्योहे तेतो थोडी स्थितिनी अपे-
क्षाए जाणावा पण रसनी अपेक्षायें न जाणवा क्योंकि
सत्तानी प्रकृतितो एहवी कहीहे पण उदयनी प्रकृति
एहवी कही नही उलटो तिर्थंकरनाम प्रमुखनो प्रबल
उदयज कह्योहे एमजाणीनें ॥ अतएव दग्धरज्जुकल्पेन
भवोपग्राहिकल्पेनापि सत्ता केवलिनोपि नमुक्तिमाषादयेषु॥
ए आवश्यक बृहद्वृतिनुं वचनहे ते जोईनें पण
व्यामोह करणो नही तेटला माटेंज इहांपण स्थिति-
नी अपेक्षाएज केवलीनें कर्म दोरडीना जेहवा कह्याहे
॥ अतएवभवोपग्राहित्वाल्पग्राहित्वविशेषणं ॥ कह्याहे एहवो
हमनें प्रतिभासेहे. वलि विशेष गीतार्थनें विषे जेम
पूर्वापर विरोध न थाय तिम विचारणो. केतला एक

प्रमेयकमल मार्तंडना अभिप्रायनें अनुसरीनें आवीरीतें कहेहे अपूर्व करण गुणठाणाए पाप प्रकृतिनों रस करयोहे तिस वास्तें केवलीनें तेथी विधसातोदय थाय नही मोह सापेक्ष प्रकृति थाय तेहनो मोहना घातथी अवश्यघात थायहे अन्यथा पराघात नाम कर्मना उदयथी केवली परहननादिक किम न करे ए वोलवो पण दुराग्रहनों जाणणो क्योंकिजिम रसनोघात थाएहे तेम स्थितिनों पण घात थायहे तिसवास्तें जे रस ओगेथतो होयतो स्थित पण ओगेथइजोईये जेम वद्धमान कर्मनी स्थित घटी जायहे तिम वद्धमान कर्मनें रस पण घटीजायहे एहज समाधानहै. तथा पराघात नांम कर्मनों फल केवलीनें थायहे परहननतो मोह विनां थायनही केतलाएक इम कहेहे कि वेदनीय कर्म केवलीनें विषे हतवीर्यहे तिसवास्ते तेहनें विषे क्षुधादिक परीसहे गयारूपहे एम जे केवलीनें विषें कहेहे तेणें श्वेतांवरनी परक्रिया जाणी नही एम जाणवो. केतलाइक कहेहे कि केवलीनें विषे उदीरणाविना प्रचूर पुदगल आवता नही तिसवास्तें असाता वेदनीयोदय वली दोरडीना जेहवोजहे ए वोलणों पण अविचाररूपहे क्योंकि एहवीरीते तो साता वेदनीयोदय पण मंद होवो जोइये इत्यादिक मतनों विचार करतां वास्तविक अर्थ सहज देखाई आवशे तिसवास्तें

सुक्ष्म दृष्टिवडे ते अर्थनों शोधन करो अोर कोई कहेकि जेम दाहना प्रतिबंधक मंत्रादिकहे तेम क्षुधादिकनुं प्रतिबंधक केवलज्ञानहे ए वचन पण शास्त्रानुसार नही क्योंकि जेम हाथनें विषें मंत्रेलो अंगारो राख्यो छता हाथ बलतो नथी एहवो प्रत्यक्ष दीठामांआवेहे तेथीज मंत्रादिकजेछेतेदाहनाप्रतिबंधकहे एहवी कल्पना करायहे तेम जो केवलीनें विषे वेदनीयादिक कर्मोदय रूप कारण छतां क्षुधादिक उत्पन्न थतां नही इम जो सम्मत शास्त्रमा कह्यो होयतो एहवी कलपना थई शके ते विना बोलवो व्यर्थहे तिसवास्तें शास्त्रनी युक्तिए जिम पूर्वें कह्योहि तिम आदरणा योग्यहे केवलीनें जो भूख लागती होयतो बलकी हाणी थाय तेतो तेहनें विषे संभवे नही क्योंकि वीर्यांतराय कर्मना क्षयनें लीये केवली अनंत वीर्यवंतहे ए बचन पिण अयोग्यहे क्योंकि बल अनें वीर्यमा भेदहे शरीरनो जे पराक्रम ते बल कहेवायहे. अंतरंग जे शक्ति विशेष ते वीर्य कहवायहे तेम छतां क्षुधाए करी शररिनों बल घटेहे ये विषे असे ना कहना नही ए योग्य प्रत्यहे योग जेहे ते शरीरनाकर्म परिणति विशेषरूपहे अनें नांम कर्मतो भगवंतनें विषे क्षीण थयोनथी. केईक पूर्वपक्षी ऐसा कहेहें ग्रहण तथा मोचनादिक

पर परिणांमथी जीवने कर्मबंध होयछे ते परिणाम वीतरागनें ज्ञानना प्रतापें थायनही ॥ उक्तंच ॥ गेह्णदिणेव एमुंचदि णपरं परिणमदि केवली भगवं पेछदि समंतदोसो जाणदि सव्वं निरवसेसं ॥ इतिप्रवचनसारे ॥ केवलीनें योगनीक्रिया पण नही जो भोजन क्रिया केवलीनें विषे मानीयेतो तेहथी योग क्रिया सिद्ध थाशे तेतो केवलीनें विषे संभवे नही. देखो कि जो स्थान निषज्जा विहार तथा धर्मोपदेशादिक क्रिया पण केवलीनें थति नही तो भोजन क्रिया ते किम होय जो कहशोके स्थान निषज्जा विहार तथा धर्मोपदेशादिक क्रिया केवलीनें प्रत्यक्ष विद्यमान छता ना केम कहेवाय तो ते यद्यपिछे तथापि प्रयत्न पूर्वक नही क्योंकि प्रयत्न राग द्वेष विना थतु नही तेतो केवलीनें विषे नही तिसवास्तें ए क्रिया स्वभावसिद्ध छे. जिम आकाशनें विषे वादला समय विशेषे स्वभावेज संचार करेछ रहेछे. गर्जना करेछे तथा वर्षा करेछे तेम केवलीनें पण स्थान निषज्जा विहार तथाधर्मोपदेशादिक स्वभावेज होयछे ॥ उक्तंच ॥ ठाणणिसज्झा विहारा धम्मुवदेसो अणियदिणा तेसिंअरिहंताणकाले मायाचारोव्वइच्छीणं ॥ इतिप्रवचनसारे ॥ अतएव केवलीनें जे औदयिकीक्रियाछे तेहनें विषे मोह नहीहो-

वाने लीयें प्रद्रव्य परिणामना विरहथी क्षायिकीज जाणवी ॥ यतः ॥ पुन्नफलाअरिहंत्ता तेसिं क्रिया पुणेहि ओदयिगी मोहादिहेविराहिया तम्हा साखाइ गतिमदति॥ ऐसा पूर्वपक्षी कहतेहै ते (उत्तर) इसतरेहै ते कहीयेंहै केवलीनें विषे स्थान निषेज्जादि क्रिया जो स्वभावेज थती होयतो प्रयत्न निर्थक थाय इमतो काई दीठामा आवता नही. प्रयत्न सार्थकज होयहै क्योंकि प्रयत्नविना चेष्टा थतीज नही तिसवास्तें केवलीनें विषे प्रयत्ननों संभव थायहै मात्र स्वाभाविकतानोंज उपयोग करणा नही. जो कहेशोके केवलीनें विषे प्रयत्नजन्य चेष्टा नथी किंतु तेथी विलक्षणहै तिमज प्रयत्नपण सारू बिलक्षण न मानिये अनें जेम विलक्षण चेष्टा मोहबिना थायहै. बिलक्षण प्रयत्न पण मोहबिना थवूं जोय जो कहशोके केवलीनी चेष्टा मनःपूर्वक नही तो ते प्रमाणें प्रयत्न पण मनः पूर्वक नही एम शासारू न मानों. एवीरीतें सर्व ठिकाणें सरखुं समाधान जानलेणा. पूर्वे कह्यो हेतुए करी जे दिगंबरी कहेहै के केवलीनें राग नही होता तेथी तेनें विषे वचन व्यापार संभवे नही तेम छतां जे वचन व्यापार थायहेते स्वभावेज मस्तकमाथी ध्वनि निकलेहै एम जाणवा पण अक्षररूप वांणी संभवे नही ए कथन पण

अयुक्तहे क्योंकि केवलीनें केवलस्थनी पूर्वें जेहवीरीतें वचन योग हतो तेम केवलज्ञान थया पछें पिण जा-णवा अनें केवलीनें रागविना पण क्रियानों सामर्थ्य छतां अक्षररूप वांणी केम न संभवे. कोई ऐसा कहे कि केवली कृत कृत्यहे तो ते उपदेश क्यां वास्तें करेंहे तेहनो समाधान एके तीर्थंकर नामकर्मनां वि-पाक एहवीरीतें भोगवायहे तेहथीज केवली उपदेश करेंहे ए केवलीनों स्वभावजहे. जो कहशोके केवली पदें करी एकांत कृत कृत्यहे तो तेम पण न समझवो ॥ यतः ॥ णेगंतेणकयथो जेणदिन्नंजिणदणामंस्सतदवंफ फलं तस्सय खवणोवाओ अमवेजओ ॥ इतिविशेषावश्य-के ॥ जो कहेशोके परोपकारनी इच्छा विना उपदेश देवो संभवे नही अनें इच्छा तेज राग कहवायहे अनें रागतो वीतरागनें विषे संभवे नही एहवो व्यामोहपण नकरणो क्योंकि एहवी इच्छा ते कृपा कहवायहे परंतु तिसको राग न समझणा और जो कहशोके वचन बोलवाना प्रयत्नें करी जीवनें खेद थयानी उदीरणा थायहे तो ते संभवे नही. क्योंकि मनुपना अउखामें साता असाता वेदनीय कर्मनी उदीरणा परमाद पर्यंत करीज होयहे, प्रमादविना बीजा कारणोंथी उदी छतां उदीरणा थाय नही जो एम न कहियें अनें बीजा

कारणोंथी उदीरणा थायहै एम कहिये तो काययोगनें विषे सातावेदनी उदीरणा पण तेहनें किम थाय. क्योंकि उदीरणानों तो एहवो लक्षण कहेहै जे स्थितिना दालिक उदयावलिथी बाहिर बरतेहै तेहनें कषाय सहित योगनामना वीर्येकरी आकर्षण करीनें ते उदयावलिकानें विषे जे प्रक्षेपन करवो ते उदीरणा कहेवायेह और जो कहशोके ते उदरिणा वीर्यविना थायहै तो ते संभवे नही क्यौंाकि उदीरणा जो है ते अपवर्तनानी परीकरण विशेषहै एतले स्थानांतर करावानोंकारणहै अनें कारणा जोहै प्रयत्नरूपैह एम न मानता जो केवल स्वभाव वाद मानीयें तो बौद्धनों मत अनुमत थाय. तिसवास्ते प्रयत्न पण अंगीकार करवो जोइये और केवलीयोग परमाद विना खेद उदीरतो नही परंतु उदयना हेतु तहां उदीरणा सरीखा देखणेमें आवेहै तेहथी खेद जेहै ते उदीरितना जेवो जणायहै पण परमार्थताए ते उदीरणा कहेवाय नही और जो कवलाहारहै तेणेंकरी केवलीनें जे सुख उत्पन्न थायहै ते योगथी उदीरयो अनें केवलीनें तो योगनी उदीरना संभवे नही क्यौंकि तेहनें वेदनीयनी उदीरना होती नही तिसवास्तें केवलीनें कवलाहार संभवेनहीं एहवी जे परयुक्तिरूप वेली ते एवी

रीतें कपाई गईहै कि प्रमादविना उदीरणा थाय नही एम निश्चये जाणवा. आहारेकरी केवलीना योगनो दुःप्रणिधांन थाय नही क्योंकि योग दुःप्रणिधांन ते रागद्वेष वडे थायेहे ते रागद्वेषतो केवलीनें विषे है नही अतएव सप्रमादिगुणस्थानें चढया जे कोडिन्नादी महिर्षि तेओनें आहार करतां पण दुःप्रणिधांन योग नही होय विधिए करी आहार करतां तिनोंनें आत्मलीनताना माहात्म्यथी प्रमाद थतो नही किंतु अप्रमादज रहेहे. सातमा गुणस्थानोंनेंविषे नवा व्यापारनों आरंभ थतो नही परंतु पूर्वे आरंभेला व्यापारनी निष्ठा होयेहे. जेम देवताना आउषाना बंधनो आरंभ थतो नही पण छठे गुणठाणें बांधवामडांयो ते बांधता थका पण सातमे गुणठाणकेंप्रवर्तायेहे तिसवास्तें नवा आरंभनां आभिप्रायेंज ॥ इत्येतास्मिनगुणस्थानानि संत्यावश्यानिषट् ॥ एहवो गुणस्थाण क्रमारोहणे विषे कह्योहे ते संभवितहे इहां कोई कहे आहारनी कथा करतां साधु प्रमत्त थायेहे तो आहार करता किम प्रमत्त न थाय एहवा प्रभावे कहेहे ते अयुक्त जाणवा क्योंकि आहार कथा प्रमादनों कारण नही तिमवता जो जेम आहारकथा करतां अतीचार थायेहे तेम आहार करतां पण यतीनें निद्रा आवी चाहिये एमजो कहेहे ते

पिण अप्रमाण जाणवा. क्योंकि निद्रानु कारण आहार नही आहारतो मात्र निद्रानो सहचारीहै सिद्धांतोनें विषे निद्रानें दर्शनावरणीय कर्मनी प्रकृति कहीहै क्योंकि आहार करतां पण केवलीनें दर्शनावरणीय करमना अभावहै तिसवास्तें केवलीनें निद्रा होती नही कोई कहे कि शास्त्रोमें कह्योहै कि थोडा आहार करणातो किसवास्तें आहार दुष्टहै एम केहवो पिण अयोग्यहै क्योंकि घणो आहार करयाथी दर्शनावरणीय कर्मना विपाकनो उदय थायहै इसवास्तें घणो आहार करणा दुष्ट कह्योहै पण स्वभावे आहार दुष्टनही और कोईकहे आहार अपवादमार्गनें प्रतिबंध करनवाला होणेसें प्रमादरूपहै इम न कहेणा क्योंकि वीतभय तीर्थंकरनें कोई अपवाद नही अपवाद तो जे उत्सर्गमार्ग करी शके नही अनें चारित्रनां त्यागथी बीहै तेहनें. जिननेतो ते न होय ए केवल पोतानी कलपना नहीं क्योंकि धर्मबिंदुनें विषे निरपेक्ष यति धर्मना अधिकारें अपवाद त्याग सूत्र कह्योहै ये गीतार्थें यथा सूत्र बिचारणा चाहिये. इहां कोई कहे आहार करणवालानें पात्र राखवा चाहीये ते पात्रतो ममत्वनों कारणहै. इम कहेना नहिं क्योंके पात्र तो शरीरनी तरें धर्म साधनहे जो इम न मानीयें अनें ममत्वनों कारण मानिये तो तीर्थंकर प्रमुख जे पाणि

पात्रहि तिणोंनें विषे निर्ममत्वपणों किम संभवें. जो कहशोके बाह्यपात्र ममत्वनों कारणहै तो ते पण असमीचीनहै क्योंकि जितना पुद्गल द्रव्यहै ते सर्व आत्माथीं बाह्यहै इसवास्ते क्यां ते ममत्वनों कारण थाय. जो कोई ऐसा कहेकि आहारें करी केवलीनां ध्यांन तथा तपनों व्याघात थाय इसवास्ते आहार लेवा अयोग्यहै जो ऐसा तुम्हारा मतिमां व्यासेहै ते पिण मिथ्याहै क्योंकि ध्यांनतो शैलेशीयेंज पण पूर्वे उत्कर्षताथी देशेंउणी पूर्वकोडीसुधि नहीं अनें विशेषें करी केवलीनें कोइ तप पिण नही. ठाणा अंगनें विषे केवलीनें ज आणुत्तर तप कह्योहै ते पण सलेश्यावस्था भावध्यान रूप कह्योहै अनें सोमिलाना प्रश्नना अधिकारें श्रीभगवतीमा ॥ उक्तंच ॥ किं भंते जत्ता सोमिला जंमे तव नियम संयम सझाय सझाण वस्सय माईसु जोएसुजयणा ॥ एहवो कह्योहै तहां पण तपनो फलहै. तिसवास्तें उपचार तप कह्योहै अने उदारीक शरीरनी स्थित तथा तेहनी वृद्धि आहारविना होती नही तिसवास्ते केवलीनें कवलाहारयुक्तहै. इहां दिगांबरी कहतेहैं कि मोहनीयकर्मनां क्षयथी केवलीनें प्रमोदारीक शरीर थायहै ते रुद्धिरादिक सप्तधातु रहित परम पवित्र होयहै. मोडलना पडलनीतरें केवल तेजमय होयहै. एहना मतरनें कवला-

हारनी अपेक्षा नही ऐसा कथन कहनेंवालेंको उत्तर कहीयेहै. केवलीना शरीर जो सप्तधातु रहित कहीये तो तेहनें वज्रऋषभनारायच संघयणनाम कर्मप्रकृतिनों उदय केम थाय क्येंकि ते प्रकृतितो पुदगल विपाकनी- है ते स्थिति पुदगलनें विषेज विपाक देखावेंहै. जो दृढ संस्थानमात्र पुदगलनें विषे ते विपाकनें देखाडती होयतो देवतानें पण वज्रऋषभनारायच संघयण कहना चाहिये श्रोर मोहनीय कर्मना विलयथी केवलीनें केवलज्ञान ऊपजेहै पण शरीरनें विषे कोइ विशेष पणों थतो नथी, शरीरनो कर्मना उदयथीज शरीरनें विषे विशेषता थायहै तिसवास्तें केवलीनो शरीरनें विषे पुन्यप्रकृतित्रिनां माहात्म्यथी वर्णगति सारसत्वादिकनी विशेषता युक्तजहै परंतु धातु रहित पणों थाय नही. अतएव शास्त्रोनें कह्याहे ॥ संवयण रूप संठाण वन्न- गइ सारसत्त उसासा एमाइ अणुत्तराइं हवंति णामो- दयातस्स ॥ एम छतां जे केवलीना शरीरनें विषे अ- स्थ्यादिपुद्गल पलटीनें अन्य विषेज पुद्गल उत्पन्न थायहै. एहवी कल्पना करवी ते दृष्टिविपरीत होनेसें अयो- ग्यहै क्येंकि पुण्य प्रकृतिनों उदय थयांथी तथा विध लब्धिवडे शरीर वर्णादिक विशेष दृढ होयहै एम जानवा. तीर्थंकरनों शरीर जो परमौदारिक होय तो पण

तेहनें कवलाहार सापेक्षज स्थिति तथा वृद्धिनो अनुभ-
वथाय क्योंकि सामान्यपणें उदारीक शरीरनें विषे एह-
वो नियम अछाहै कि आहारविना शरीरनी स्थिति
होयज नही. कोई कहे कि जो केवली आहार करेतो
तेहनां आस्वादथी रसनानुंमतिज्ञान थायनही जो इम
मानीयेतो समवसरणभूमिकानें विषे गूटण प्रमाण
फूल पाथरेला होवेथी तेहना परिमलथी घ्राणिंद्रीयनों
मतिज्ञान किम न थाय आस्वादविना तृप्ती थाय नही
इम पण न कहना क्योंकि रतिरूप तृप्ति थति न हो-
यतो ते अम्हारे पिण इष्टहै परंतु क्षुधाना सरूप तृप्तितो
आहार विना थाय नही और कोई कहे कि केवलीनें
कवलाहार करतां इरियावहीकी क्रिया लागेहै तो गम-
नागमनी आदिक क्रियायें करी केवलीनें इरियावहिया
क्रिया केम न लागे तिसवास्तें जिम केवलीनें गमना-
दिक क्रियाहै तिम भोजन क्रिया पिण जाणवी एहवो
प्रथमही कह्योहै. और कोई कहे केवली जो कवलाहार
करेतो धर्मोपदेशामां अंतराय पडे तेहथी परोपकारनी
हांनी थाय इम कहेना योग नही क्योंकि ते त्रितीय
पहेरनें विषे महुरत मात्र नियत समयंज आहार करेहे
तेहथी बाकीनां सर्वकाल उपदेशनें अर्थ रहेछे. जो कहे-
मांके केवली आहारकरे तो शूलादि व्याधि उतपन्न

थवानों संभव थायहै तो एह कल्पनापण व्यर्थछे क्योंकि ते सारीरीतें जांणीनें अनिष्ठंग परिणाम रहित हित-मिता आहारज करेहै तिसवास्ते तेहनें विषे शूलादिकनों संभव थाय नही अनें एहथी तेहनें बिषे रागनी क-ल्पना पण थाय नही. और कितनेक मतपक्षी कहेहैं कि जो केवली आहार करेतो तेहसें बडीनीत प्रमुख करवो जोइये तेहतो दुगंछानों कारणहैं एम पण कहे-णों नही. क्योंकि दुगंछानों मूल मोहनीय कर्महै तेहनों-ज तो प्रथमज उन्मूलन कीयेहै अनें तीर्थंकरनों एह-वो अतिसयहै कि तेना आहार तथा निहारनी विधि-नें कोई देखीसकें नही ये कारण वास्ते बीजानें दु-गंछा उत्पन्न थाय नही. बलि सामान्य केवली एकांतें निहार करेहै तेहथी पण बीजा कोइनें दुगंछा उत्पन्न थाय नही. पूर्वपक्षी कहेहै के तीर्थंकरनें पूर्वें पण नि-हार होय नही तो पीछें ते किम संभवे ॥ यतः ॥ तित्थयरातप्पियरो हलधर चक्कीय वासुदेवाय मणुआण भोग भूमी आहारोणछिनिहारो ॥ १ ॥ इसीके अर्थ-में ॥ चौपई ॥ जिणवर जिन माता जिन तात, वासुदेवबल-देव विख्यात ॥ चक्कीराय जुगलया जोय, इन सबकें मल मुत्र नहोय ॥ १ ॥ (दोहा) पूर्व गाथाको अर्थ, लिख्यो चौपई लाय ॥ खटपाहुड टीका विषे, दे-

खलेहु इहु थाय ॥ २ ॥ इतिपारश्वपुराणे ॥ ऐसें कह्याहे एह कोई तुम्हारा अपूर्व मतहे. क्योंकि शास्त्रोनां विषे एहवो कोइ अतिसे कह्या नही तेम एहवी उदराग्नि पण नही केजेहथी निहारनों अभाव थाय, तेम छतां जो ये वात साची मानीयेंतो भस्मक व्याधिनीपरें ते दोपरूप थाशी. खलरसी कृत आहार मात्र जो भस्मथायतो पूर्वे केम न थाय तिसवास्ते केवल आप रुची मात्रहे. और जो कहशो कि केवलीनें जे भुक्तिनों अभावहे ते अतिशय जानवा तो एम कह्याथी तुमें पोता २ ना वचनें अगति वस्तुनें गति करवो होयतो आकाशना पुष्प पणेंहे एम कहशो तो नाय कोय करनेवालाहे. पण ये वचणनों सप्रमाण न कहवाय इम जिसतरें पूर्वाचार्य केवलीनें विषे कवलाहारनी समर्थना करींहे ते प्रकारेंज आ ठिकाणें अमें लेशमात्र कह्याहे ॥ इति ॥ इम पक्षपात छोडीनें तत्व वचन प्रमाण कीजिये ॥

प्रश्न १५ मा—पूर्व मतपक्षी दिगांबरी स्त्रिनें मुक्ती निषेद करेंहे तिसवास्ते इहां स्त्रिको मुक्ति होना सूत्र वा शास्त्रांमें सिद्धी करीयेहे. ते प्रथम दीगांबरमती कहतेंहे कि शरीरे करीतो पुरुषेंही सिद्धि होयहे परंतु स्त्रीना पर्यायें करी सिद्धितानें पामें नही क्योंकि स्त्रीनें चारित्र होता नही चारित्र जे है ते शुद्धोपयोग रूप आचेलका

मुल गुणमय है अनें स्त्रि तो अचेलक होय नही तथा पुर्षसें स्त्री हीन होनेसें पण तिसको सिद्धतानों संभव नही. नपुंसकत्व तथा स्त्रीत्व महा पापें करीनें अवतरेहे इम पापप्रकृतिनी बाहुल्यतानें लीयें पण स्त्रीनें मुक्ती थाय नही तथा जिम स्त्रीनें सातमीनर्क पृथ्वीयें जावा योग्य तिव्र असुभमन प्रणाम होता नही तिम मुक्ति पामवा योग्य तिव्र शुभमन प्रणांम पण स्त्रीनें थावे नही तिसवास्तें स्त्री सिद्ध थायज नही अनें सातमीनर्क प्रथवीयें स्त्रीपणेंथी जाय नहीं तिसवास्ते तिसको वज्रऋषभनाराच संघयण नही होणेसें पण स्त्रीनें मुक्तिनों संभव नही ऐसी दीगंबरीयोंनीयुक्तीनें ग्रंथकरता निखेद करेहे. हे मतपक्षी दीगंबरीयों स्त्रीसिद्धादिकना परासिद्ध अर्थनें छोडकर जे अन्य अर्थ करेहे ते संभावित नही क्योंकि जेहनें स्त्रिवेदादिकनों पूर्वेज क्षयहे एहवा नपुंसकादिक शरिरेंकरी वरततां श्रेणी करे तेहनें विषेहे. ऐसा ॥ वीसनपुंसकवेया ॥ इत्यादिक स्वशास्त्र बचन समर्थवानें अर्थें ए कल्पना केवल कदाग्रहरूप जणायेहे. जो इम कहिये कि उदीरणा वेदनोंही पूर्व क्षय करणों तो तिसविषे पण शास्त्रोक्त व्यवस्था संभवे नही. शास्त्रोमें तो इम कह्याहे कि जो पुर्ष श्रेणीनोंआरंभ करेतो तेणें पुर्वें नपुसक वेदनों क्षय करवो. पछे स्त्रीवेदनों

पछें हास्यादिक ठ प्रकृतिनों अणें पछे पुर्ष वेदनां त्रिण खंडकरी तिसमेंके दो खंडनों एकवार क्षय करणो अनें त्रीजा खंड संज्वलन क्रोध मान खपाववो, जो स्त्रीयें क्षपक श्रेणिनो आरंभ करवा होयतो तेणें पूर्वें नपुंसक वेदनो क्षय करवा होय. पछें पुरपवेदनां पछें हास्यादिक ठे प्रकृतिनो अनें पीछें स्त्रिवेदनों क्षय करणो जोये. नपुंसक क्षपकश्रेणीनो आरंभ करणो होयतो तेणें पूर्वें स्त्रिवेदनोक्षय करवा जोय पछें पुरसवेदनो पछे हास्यादिक ठह प्रकृतिनो अनें पिछाडी नपुंसकवेदनों क्षय करणो जोय इत्यादिक रीती जाण लेणी आर कोई कहे स्त्रीलिंगें सिद्धथवातु नही तेहमें चारित्र रहित जे हेतु कह्योहे ते असिद्धहे इम कहेहे. स्त्रीनें चारित्र न होय तेहमां कारण स्युंहे. स्त्रीनें विषे जे दुःशीलादिक दोष होयहे ते एकांत नही क्योंकि परम शीलवान जे सुशील सुलसादिक श्राविकादिक थईहें तिनकी भगवंते पोतें प्रशंसा करीहे. वली स्त्री जेम केतलाएक पुर्ष दुष्ट दुशीलहे ते पण महारंभ महापरग्रही देखायहे इसवास्ते स्त्रीनो दुष्टत्व कांइ एकांतें नही जो कहोगेक स्त्रीने लज्जा मिटती नही तिसवास्ते चारित्र थाय नही एम पण न कहवो क्यों-कि नग्नताज चारित्रांग नही. विधियें करीने धर्मोपकरणोंनुं धारण करतां चारित्रनुं भंग थातु नही. जो

कहस्योक स्त्रीनो शरीर हिंसायतनेंहे तिसवास्ते तेहने हिंसा नही ये कहवो पण असत्य पणाणो है. क्योंकि अशंका परीहार स्थलने विषे हिंसा थाय नही परमादने योगे हिंसा थायहे प्रमादनो जे व्यपरोपण तेहज हिंसा कहीये. वली जो स्त्रीने चारित्र न मांनीयेतो चारि प्रकारनो संघ केम संभवे जो वेषधारणी श्राविकाज साधवी कहीतो चारित्र जाएयाविना जे वेषधारण करवो एहतो मोटी विटंबना कहेवाय. जो कहशोक चारित्र लेशस्त्रीने होयहे तो तिसमा अमे पण ना कहेता नही. जो कहशोक स्त्रीने चारित्रमोक्षनो कारण थाय नही तो ते कदाग्रहे मात्र जाणवो. क्योंकि अध्यवसाय विशेषे करी पुर्षनीपरे स्त्रीने पण चारित्रनो उत्करष होयहे एमाहे कोई विरोधता नही. स्त्रीने जे पुर्षथी हीन पणो कह्याहे ते तो विशिष्ट पूर्वज्ञाननी अपेक्षाये कहीय तो ते प्रितीकूल नही किंतु अनुकूलहीहे अन्यथा तिर्थंकरादिकनी अपेक्षाये अमहेर्द्धिक गणधरादिकहे तेहने मुक्तिनो संभव केम थाय. स्त्रीपुर्ष अवंद्यहे इसवास्ते चारित्र रिधिये करी हीन होवी जोय, ऐसी वारता पण न कहेवी. अन्यथा शिष्यादिक आचार्यादिकने अवंद्यहे ते पिण चारित्र ऋद्धिये करी हीन होवो जोय. जो वलनी अपेक्षा

कहियेतो ते पण प्रतिकूलनही किंतु अनुकूलजहीहै. क्योंकि स्त्रीकरता निरबल जे पंगुपरसुख ते पण अध्यवसाय विषेस गुक्ती पामहै. जो कहशोक हीनबलहै निशिथादिरूप चारित्र केम थाय एम पण न कहे-वो क्योंकि चारित्र ते जथासक्ति आचारणारूपेह तिसवास्ते स्त्रीनें पण संभवेहै ॥ उक्तंच ॥ वादिवि-कुर्णत्वा दिल लब्धी विरहे श्रुते कनीय सिचजिणक-ल्पमनः पर्यय विरहे पिन सिद्ध विरहोस्ति ॥ एणे-करी अनूपस्थाप्प पाराचितक प्रायचित्तना अनुपदे-शथी स्त्रीनें पण हीनपणाहे ये असंबद्धजाणवो क्योंकि योग्यतानी अपेक्षायें सास्त्रनेंविषे विचित्र तपनो उ-पदेश ॥ उक्तंच ॥ संवर तिर्जरा रूपो बहुप्रकार स्तपो विध शास्त्रे योग जिकित्सा विधी रिवर्क स्यापिकथंच दुपकारिती ॥ स्त्रीनें जे पापनी बहो-ल्पता कहीहै ते वचन पण मिथ्याहै क्योंकि जिस वक्त स्त्रीपणों बांध्योहै तिसवक्त यद्यपि बहुतपाप प्रकृति मिथ्यात्वादिरूप तेहै तथापि ते प्रकृति जिसवक्त तथा भव्यत्वनें परिपाकें सम्यक्तगुण पामीनें क्षय करेहै तिसवक्त स्त्रीनें पापनी बहुल्पता नहीं. जहां-सुधि स्त्री शरीर होय तहां सुधि जो तेहना बं-धकारण मिथ्यात्वादिक रहतो स्त्रीनें सम्यक्त पण न

पाम्यो जोय. जो कहस्योक पुर्षथी तीव्र काम पण अधवसा-
येह तिसवास्ते नपुंसकनीपरें स्त्री मुक्त पामें नही एम पण
न कहेवो क्योंकि तीव्रकाम पण अधवसाय विशेष पामेहै ति-
सवास्ते ते मुक्तीनेंविषे विघ्नकारक नहीं होवाथी ये हेतु
यप्रयोजक जानीयें अन्यथा स्त्री मुक्ती पामें. क्योंकि ते
नपुंसकसेही नकामहै तिसवास्ते तिसको पुर्षकीपरें जा-
ननी ये हेतु पण अत्र लागु थायहै और कोई मतपक्षी
कहेके जैसें सातमी नर्क पृथ्वीयें जावा जोग स्त्रीनें
अशुभ मनोवीर्य नही तिसवास्ते तेहनें मुक्तिनेंविषे जा-
वानों पिण तथा विध मनोवीर्य थाय नही इम कहेना
नही क्योंकि एहवो नियम नही कि जितना अधोगति
जावानों अध्यवसाय होय तितनाज उर्ध्वगती जावानों
अध्यवसाय होय क्योंकि भुजपरिसर्प बीजी पृथ्वीसुधि
उत्कर्षथी अधोगतीय जायहै, पक्षी त्रीजी पृथ्वीसुधि
जायहै, चतुष्पद चौथी पृथ्वी सुधि जायहै, उरग पांचमी
पृथ्वी सुधि जायहै, स्त्री छठी पृथ्वी सुधि जायहै, नरनपु-
सक मच्छ सातमी पृथ्वी सुधि जायहै. ये स्त्री तथा पुर्ष
वीजा पूर्वोक्त सर्व प्राणीयोंथी उत्कर्ष सहे और आठमा
देवलोकसुधि उर्ध्वगमन करेहै एहवीरीतें यद्यपी स्त्री सा-
तमीनर्क पृथ्वी सुधि जाय नही तथापी तेहनें मोक्षसु-
खनी प्राप्त होयहै इसमें कोई विरोध नही. और केईक इम

केहेहे अधोगतीनें परमोत्कर्ष होयछे ते एकांततासें संभवे नही. क्योंकि जेहवी कारणनी उत्कर्षता होय तेहवीज कारयनी उत्कर्षता कहेवायछे एहवो नियमछे परंतु एहथी अन्य कोइ नियम नही. स्त्रीनें विषे जो युद्धादिक महारंभरूप कारणनों संभव होयतो सातमी नर्क पृथ्वीसुधि जाय सके तेहवो कोई कारण नही होनेके लीयें स्त्रीथकी त्यासुद्धी जवातु नही किंतु छठ्ठी सुधीज जायसकेछे अनें पुर्ष तथा मत्सनें विषे तेवा कार्ण होवाथी तिनोंको सातमी नर्क पृथ्वीसुधि जायछे. एहवीरीतें अधोगतीनें विषे जावा सारु पुर्ष स्त्रीना कारणोंनी विलक्षणता होणेसें सरखु गमण थतो नही परंतु उर्धगतीनें विषे जायवा वास्ते दोनोंका कारणा सारिखा होनेसें एकसा गमण होवानों अवस्य संभवछे. जिम पुर्षनें विषे शीलादिक गुणरूप उर्ध्वगमणना होयछे तिम स्त्रीनें विषे पण होयछे एह हेतुथीज स्त्रीनें वज्रऋषभनारायच संघयणणों संभवछे एम न मानवामें कोई हेतु युक्त नही. इण प्रकारें स्त्रीनों निरवाणना निरोधनें विषे दीगांबरीयाना हेतुनों निषेद करयो. हवे स्त्रीनों निर्वाण थावामें अनुमान केहेछे. हरेक वस्तुना अनुमानमां पक्ष, साध्य, हेतु, तथा दृष्टांत ए चार प्रकार होयछे यानें ए चार पदार्थोंये करी सिद्ध थए हुइ वस्तुनें अणुमित केहेछे अनें ए चार पदार्थो-

यकरी सिद्ध थवा योग्य वस्तुनें अणुमय कहेहै जिम के अग्नीयुक्ति पर्वत सिद्ध करवो होय ते अणुमेय कहवायहै. अनें एहज पक्ष कहवायहै अनुमान करती वखते ॥ पर्वतम् पक्षी कृत्य वन्हिमत्वं साधेत धूमत्वात् इती हेतुः पाकग्रहवत यत्र यत्र धूमः तत्र तत्र वन्हि ॥ परवतनों पक्ष करीनें तेहनें अग्नियुक्त सिद्ध करेहै इसमे हेतु पर्वत उपर निकलतो धूमडो यानें धूंओहै जिम रसोइ करवाना घरमा अग्नी होनेसें धूमाडो निकलेहै क्योंकि जिहा २ अग्निहोयहै तिहां धुमाडो होय यह दृष्टांतहै. तेम ॥ कांचित्स्त्रीव्यक्तिं पक्षीकृत्य मोक्षाविकल कारणता साध्यते दिक्षाधिकारत्वात् पुर्षवत् येये दिक्षाधिकारिणः तेते मोक्षाविकलकारिणः ॥ कोइएक स्त्रीनी व्यक्तिनें पक्ष्यकरीनें तेनें मोक्षना अविकल कारणवंत सिद्ध करेहै एहमा दिक्षानों अधिकार हेतुहै अनें पुर्षजातिनीपरे ये दृष्टांत है क्योंकि जे जे दिक्षानों अधिकारी होय ते ते मोक्षना अविकल कारणवंत होयहै. इहां कोई मतपक्षी कहे कि जिम जाति नपुंसकनें मुक्ति होयनही तेम स्त्रीनें मुक्ती थती नही एम छतां जो कहेशोक जेम कृत नपुंसकनें मुक्ति थायहै तेम विद्याप्रियोगादिकें करी स्त्रीनें मुक्ती थायहै तो तिम पण न संभवे. क्योंकि स्त्रीनें विशिष्ट क्रियानुष्टांन होतो नही. विशिष्टक्रियानुष्टांन विना विशिष्ट

कर्मनो क्षय थाय नही अने विशिष्ट कर्मनो क्षय थया-
विनां मुक्ति थती नही तथा स्त्रीपणो जेहे ते पाप प्र-
कृतिरूप नदीनों झरनोहे ते पुन्यरूप सुरतरुना केवल-
ज्ञानरूप फलनें सेवन करवावाला केवलीनें विषे किम सं-
भवे अर्थात् पापप्रकृतिरूप स्त्रीनें केवलज्ञान संभवे
नही तथा स्त्रीपरम असुचीहे तेहनें परमौदारिकशरी-
रपण संभवे नही. केवलीनों शरीरतो परमौदारिक पण
होयछे तेहवोतो स्त्रीनें शरीर कहवाय नही तिसवास्ते
स्त्रीनें केवलज्ञान किम संभवे. ऐसे प्रश्न करनवालोंको
उत्तर इसप्रकारेहे ते कहियेहे. स्त्रीनें क्रिया विशीष्ट वि-
ना विशीष्ट निर्जरा न थाय इस जे वादीयें कह्यो ते
अयुक्तिकहे क्योंकि भाव विशेषे, फल विशेषहे. क्रिया
विशेष विना भाव विशेष न थाय इसमा एकांतता
नही क्योंकि जो शक्तिनो नियमे कर क्रियाकरीय
तो जे भावनी हांनी थायहे अन्यथा भावनी हानी
थती नही तथा स्त्रीपणों पापरूपहे इसमेंपण एकं-
तता नही क्योंकि सम्यक्तना बलथी मिथ्यात्वादिक
पापनों क्षय थायहे इम पूर्वे कही आव्याहे. घणों
करीनें तिर्थंकरनें विषे स्त्रीपणो नही होतो एतलें
वसुधा स्त्री तीर्थंकर थई संभवतेम आतो नही इस-
वास्ते स्त्रीपणों पापरूपहे इम जो कहीयेतो मिथ्याचा-

दिकनों पण अभाव होयहै अर्थात् घणों करीनें क्षत्रीआदिक तीर्थंकर हुवे देखनेमें आवैहै तिसवास्ते क्यां क्यां विप्रादिकनें मोक्षनों संभव नही अनें अमोदारीक शरीरनों तों पूरवेंज निखेद कर्याहै इसवास्ते ते होयके न होय तिसकी क्या वास्ते चरचा करणी. ओर स्त्रीवेद यानें पुर्षकी अभिलाष १ श्रंगार यानें बस्त्राभूषण सहित २ आकार ते यानें स्त्रीयानी मुत्रस्थांन तथा स्तन ३ ये तीन प्रकारका लिंग कह्याहै तिसमे वेद वार्जित करबाकी दो लिंगेंस मुक्ति होयहै यानें श्रंगार १ आकार १ सें. इहां कोई कहे, कि वेदनी बर्जना क्यांवास्ते करीहै तेहनो उत्तर बेदछता जथाक्षात चारित्र तथा केवलज्ञाननी प्राप्ती होती नही तिसवास्ते तेहना नौमें गुणठांणें अभाब होय तोज ऊपरका गुणठांणे प्रतें अरोह थई सकेंहै अनें तिस पीछें सर्व घातिक कर्मोंनों क्षय करेहै तिसवारते वेदलक्षण लिंग बरजितहै अनें श्रंगार लक्षण पण कोई परधांन नही क्योंकि सोले श्रंगार सजीनै सिंहासण ऊपर बैठी हुई शुभध्यांनें भावना भावती हुई स्त्री केवलज्ञांन पांमेहै तिसवास्तें श्रंगार मोक्षनों रोधक नही. शरीरनों आकार तो विशेषंकरी रोधक होयज नही क्योंकि ज

हांतक मनुष्य गतीनें विषे मनुषनो आउष्य होयहे त-
हां तक ये चिन्ह होयहे. इहां दीगांवरी कहेंके स्त्रीनें
मोक्षनी प्राप्ति होय नही क्योंकि मोक्षका होना चारित्रके
आधीनहे ते चारित्र स्त्रीनें उदय आवे नही क्योंकि स्त्रीनें
सर्वथा पुर्ष विना रहि सक्ती नही. स्त्रीना अंगोपाग सर्वथां
पुर्षनें अभिनवकरीहैं तिसवास्ते उघाडा रखाय सक्ते
नही अनें ते ढाकवानें अर्थे वस्त्र धारण करना पडेहे
वस्त्र राखनेमें परिग्रहे होयहे अनें परिग्रहे रखनेवा-
ला मनुषनें मुरछा संभव होयहे. जहां तक जिसको
मुरछाहे तहां तक तिसको संजमकी प्राप्ति होय नही
तिसवास्ते स्त्रीनें चारित्रनी प्राप्त न थाय अनें चा-
रित्रविना मोक्षनी प्राप्त केम थाय. वले संसारमा
सर्वोत्कृष्ट पदवीनी प्राप्त सर्वोत्कृष्ट अध्यवस्यायसें हो-
यहे एह वात दीगांवर तथा शितांवर बधाने स-
म्मतहे ते सर्वोत्कृष्टपद दो प्रकारनोंहे ये सर्वोत्कृष्टपद
दुःखनों स्थांनाक्हे तिससे सर्वोत्कृष्ट दुःखनां पद
सातमी नर्क पृथ्वी प्राप्तिहे अनें सर्वोत्कृष्ट सुखते
मोक्षपदनी प्राप्तिहे तिसमां सप्तम नर्क पृथ्वीनें विषे
स्त्रिनों गमन थई शकें नही एम सिद्धांतोंमें कह्याहे,
जिहां एहवा पाप उपर्जित थाये ते स्त्रीनें होतो
नही तिहां मोक्षपदनों उपार्जन करवा जेहवा म-

क्षौवीर्य ते स्त्रीनें किहांसे होय तिसवास्तें स्त्रीनें मोक्षनों संभव नही. वली स्त्रीयें पूर्वभवांत्तरनें विषे माया मोहनीय कर्मनों उपार्जन करयो होयहै कि जिस्से स्त्रीवेद मिलेहै तिसवास्तें स्त्री मायावीज होयहै ते कारण वास्तें ते स्वभावें कुटिलज होयहै एहन्यायें करीनें स्त्रीनें चारित्रनी प्राप्ति थाय नही. वली साधूतो वनवासी होताहै ज्यां घणा मनुष्यादिकनों संघट होय यानें भीड होय तिहां साधू रहे नही क्योंकि तिहां ज्ञान तथा ध्यांननों व्याघात थायहै अनें स्त्रीसिंतो एकाकी रहेवाय नही. जिहां बस्ती होय तिहांइ रहिसकेहै क्योंकि स्त्रीनें एकाकी विचरतां तेहनां शीलमां विघ्न पडेहै, घणां मां राहितां प्रतिबंध नडेहै अनें रागद्वेषमां पडेहै तिसवास्तें स्त्रीनें चारित्रपण नही अनें चारित्रनें अभावें मोक्ष ते क्यांथीज,
(उत्तर) श्वेतांबरी स्त्रीनें वस्त्रनों परिग्रहे करणा नही जिसके ऊपर मूरछा होयहै ते परिग्रहे कहिवायहै मूर्छाविना परिग्रहे कहवाय नही ॥ यतः ॥ मुछापरिग्गहोवुत्तो ॥ इम श्री सिद्धांतमांही कह्योहै ते कारणवास्तैं भरत चक्रवर्ति षट्खंडनों भोक्ता चौसठ हज़ार अंतेवरीसहित दर्पण सदनमें बैठा हुवां तथा सर्व आलंकारें करी अलंकृत थतां के-

वलज्ञान पाम्यो है. क्योंकि ते वस्तुथकी मूर्छा थी रहित हतो तिसवास्ते जीवनें मोटो परिग्रहतो मम-त्व भावहे ग्रनें जे ममत्वभावथी रहितहे तेहनें तो धन-धान्यादि संपत्ति बांध करी शकती नही जो एम न मा-नीयेतो संसारनें विषे सर्व दरिद्री मनुष्योंनें केवलज्ञाननी प्राप्ती थईनें मोक्षनो प्रसंग आवशे क्योंकि तिसके पा-शें कोई समय पण कोडीमात्रनो परिग्रह होतो नही तेम छतां तेहवा प्राणीउतो संसारमां घणाहि फिरतां दे-खणमे आवेहे. प्रंरतु तिणके पाशें मूर्छारूप मोटो परिग्रह होयहे तिसवास्ते तिनोको शुभदशा प्रगट थति नही. वली श्रीवीतरागी दो कल्प कह्याहे एका जिनकल्प दुसरो स्थिविर कल्प तेहमां जिन कल्प स्त्रीनें संभव नही प-रंतु स्थितिरकल्पनो संभवहे पूर्व पक्षमां कह्याहे कि उ-त्कृष्टपदनो बांधक मनोबलहे ते स्त्रीनें होताहै नही इस-वास्तें जिम स्त्री मातमी नर्के जाय नही तिमते मोक्षनें विषे पण न जा शके ये युक्तिपण समीचीन नही यह-बापण कांई नेम नही क्योंकि केइएक पुर्षोदिकनें वेत्र खडवानो सामर्थ्य होयहे पण शास्त्राभ्यास करवानो सा-मर्थ नही होता तेहथी शुं थयो. केईनें केईएक कर्मनी पुरनां न थयाथी क्या बीजा कर्मोनी फुरनानेंपण अ-भाव समजवा कि एम छतां जो स्त्रकर्मी पेराशोतो पी-

जी घणी वातोमां विरोध आवशे जिमके बधोमां बहूपाप उपार्जनें भुजपरसर्प नीचे बीजीनर्क पृथ्वीसुधीज जायहै अनें पाक्षियो तीजी नर्क पृथ्वीसुद्धी जायहै अनें वधारेमें वधारे पुन्नउपारजीनें उपर ते दोनों जातवाला प्राणी सहश्रार देवलोक सुधि जायहै. ईहां मनोबलतो दोनोंका एक सरीखाहें तो अधोगमन थोडो उर्ध्वगमन घनों केम थायहै इसवास्ते एहवो नियम न कहेवो. एवी रीतें स्त्रीजातनों पण एहवो स्वभावजहै कि उत्कृष्टपाप उपार्जन करेतो छठी नर्क पृथ्वी सुधिज जाय परंतु उत्कृष्ट संवरनी प्राप्ती थयाथी मोक्षनी प्राप्त थायहै. वली पूर्वपक्षमां कह्योहै स्त्रीनें मायामोहनीय कर्मनी अधिकतानें लीयें चारित्र उदय आवे नही ये वात यद्यपी सत्यहै तथापी स्त्रीनें मोहनीयकर्मनों उपशम तथा क्षय होयहै एहनों कोईनांथी अनंगीकार थाय नही अनें सर्वथा स्त्रीनें मोहनीय कर्मनों क्षय अथवा उपशम थतोज नही एहवोतो तुम्हाराथी पण कहेवाशे नही क्योंकि अणंतानबंधी कषायनों उपशम अथवा क्षय थाय तिहां सम्यक्तनी प्राप्तिज थायहै अनें अप्रत्याख्यानिय कषायनों उपशम अथवा क्षय थाय तब देशविरतीपणों प्राप्ति थायहै एमते तुमे पण अंगीकार करोहो तो स्त्रीमां सर्वविरतिपणो केम मानता नही. तथा गोमटसारनी गाथामें स्त्रीनें

मोक्ष कह्याहे ॥ अडयालापुवेया इत्थीवेयाहुंति चालीसा वीसनपुंसगवेया समएएगेनासिझति ॥ एहवा पाठ तुम्हारा सिद्धांतोमें पण देखनेमें आवेहे. तेमज कर्मग्रंथ तथा गुणस्थांन कर्मारोहणों विचार करतां प्रसिद्धपणे स्त्रीनें मोक्षनों संभव थायहे क्योंकि नवमा अनीवृत्तिकरण गुणस्थांन सुधि त्रिणे वेदनों उदय होयहे तिहां बयासठ प्राक्रीतिओ उदयनेंपामेंहे पछें सूक्ष्म संपराय दसमां गुणस्थानकमां पण गयासठ प्रकृतिउनोंज उदय होयहे एहमां त्रिण वेद तथा संज्वलणनों क्रोध मांन अनें माया यें छ प्रकृति होती नही. एहवी रीतें उदयाधिकारमें कह्याहे ये उपरथी जानवो. देखियेके जो सर्व वृत्ति चारित्र स्त्रीनें न होयतो नवमां गुणस्थानक सुधि केम पोहोंची शके. तिसवास्ते स्त्रीनें सर्व वृत्तिपणों मानवोज जोइयहे ये विषे अहीरीतें विचार कर देखो. वली पूर्वपक्षमां कह्याहे कि स्त्रीनें एकाकी विचरवानों अधिकार नही क्योंकि एकाकी विचरयाथी तेहनां शीलमा विघ्न पडवानों संभव थाय अनें जो पंचनी साथें विचरेतो ममत्व भाव थाय ए उक्ति पिण विचार रहितहे क्योंकि एकाकी विचरतां पण जो मन शुद्ध होयहे. कोई पण शीलनों भंग थतो नही. स्त्रीयोंनें विशेतो एहवो

धीर्जे होयहे कि तेहनें देवता पण डोलायमान करी शक्ता नही. तिम पंचनें विषे विचरता ममत्व पिण संभवे नही क्योंकि जो तेहना मनमा वीतरागाव-स्था होयतो संसारमें जीवनें जे सरागपणों बंधणनों हेतुहे ते जो उपाशमनें पाम्योतो पछे तेहनें बन तथा घर दोनों सरखाहे एकांत जीवनें बंधनां हेतु होतानही बंधते एकरागादि लक्षण अशुद्ध उपयोगहे इत्यादिक विचार करतां तथा श्रीवीतरागनी आज्ञा जोतां तो स्त्रीनें मोक्ष होयहे इसवास्ते एहवा हटनों त्याग क-रणां उचित्यहे.

प्रश्न १६ मा— और दिगांबर मतमें श्वेतांबर मतकी निंदा करतेहै. कि श्वेतांबरी लोक दश अछेरा यानें आ-श्चर्य मानतेंहे ते सब झुटी कल्पनाकेहे. श्रीमाहावीरजी को उपसर्गआदि दश अछेरे अनंते काल पीछें हुडानामें अवसर्पणी उत्सर्पणी काल वतिनेपर दश अछेरे होयहे यह नियत भावहे परंतु विवहारनयके मतसें अणंता का-लपीछें होनेके बाद अछेरे यानें आश्चर्य कहातेहें परंतु दिगंबर मतीयें नही समझते कि श्वेतांबर मतके सूत्रोंमें दश अछेरेहें ते सत्यहे क्योंकि काल महात्माके दोषकर होतेहे. अब आप देखिये कि दूसरेमतके वचनको झुटा कर कहतेहे परंतु अपने आप दिगंबरी भाई अपने ले-

खके शास्त्रोंको ख्याल कर नही देखते कि हमारे इहां क्या लिखाहै. जैसें अगेरे श्वेतांबरोंके मतमेंहै ऐसेही दिगांबर मतवालोंके ग्रंथोमेंभी आश्चर्य रूप वातेंहै. देखो पार्श्वपुराण भूधरदासकृत भाषाकें में सप्तम वा अष्टम अधिकारके विषै पार्श्वनाथजीको उपसर्ग कथन कह्याहै ते ॥ दोहा ॥ प्रिभु आचिंत्य महिमां घणी, त्रिभुवन पूजित पाय ॥ तिणके यह क्यों संभवै; सुर उपसरग कराय ॥ २८ ॥ यहविध जो कोई पुर्ष, पूछे संशै राख ॥ ताके समझावन निमत, लिखुं जिनागम साख॥ २९॥ चौपाई॥ अवसर्पनी उतसर्पनी काल, होई अणंतानंत विशाल ॥ भर्थ तथा ऐरावत मांहि, रहित घटी वत आवै जाहि ॥ ३० ॥ जब येसा ओसर ज्ञात प्रमाण, बीतें युग्म खेत भूथांन ॥ तब हुंडा अवसरपणी एक, परै करै विप्रीत अनेक ॥ ३१ ॥ ताकी रीत सुनों मतिवंत, सुखमा दुखमा कालकि अंत ॥ वर्षादिकको कारण पाय, विकल त्रय उपजै बहु भाय ॥ ३२ ॥ कल्पवृक्ष विनशें तिहि बार, बरतै कर्म भूमी व्योहार ॥ प्रथम जिनेश प्रथम चक्रेश, ताहि समें होहि इह देश ॥ ३३ ॥ विजय भंग चक्रीकी होय, थोडे जीव जाहि शिवलोय ॥ चक्रवर्ति विकल्प विस्तरै, ब्रम्हवंशकी उतपति करै ॥ ३४ ॥

पुर्ष शलका चौथे काल, अठांमण उपजै गुणमाल॥ नवम आदि सोलैहि पर्यंत, सात तीर्थमें धर्म नशंत ॥ ३५ ॥ ग्यारह रुद्र जन्म जेहें धरै, नौकलि प्रीय नारद अवतरे ॥ सप्तम तेईसम गुणवर्ग, चर्म जिनेश्वरको उपसर्ग ॥ ३६ ॥ तीजे चौथे काल मंझार, पंचममें दीखै बढवार ॥ बिबध कुदेव कुलिंगी लोग, उत्तम धर्म नां शके जोग ॥ ३७ ॥ सबर बिलाल भील चिंडाल, नाहरादी कुलमें बिकराल ॥ कल्की उपकल्की कलि मांहि, बयालीस हो मिथ्या ताही ॥ ३८ ॥ अनावृष्टि अतिव्रष्टि विख्यात. भूमिवृद्धि बज्रांग-निपात ॥ ईत भीत इत्यादिक दोष, काल प्रभाव होय दुख पोष ॥ ३९ ॥ इति पार्श्वपुराणे ॥ अब दशअछेर श्वेतांबर मतके सूत्र सिद्धांतोंमें कहेहे तेह इसतरहसे है कि, प्रथम श्रीमहावीरजीको केवलज्ञांनमें उपसर्ग १ ॥ दुसरे श्रीमहावीरजीका गर्भ बदलना २ ॥ तीसरे स्त्री तीर्थंकर बालब्रम्हचारी श्री मल्लिनाथजी उन्नीसमें ३ ॥ चउथें श्री महावीरजीकी प्रथम वां-णी निष्फल ४ ॥ पांचमें श्रीकृष्णजी धात्रीखं-डके भर्थक्षेत्रमें अमरकंका नगरीयें दूसरे वासुदेवके राजमें संखसें संखकी आवाजकर मिलनां ५ ॥ छठें चंद्रमां सूर्य मूलके रूप विमांनसें श्रीभगवान

माहावीरके दरशनोको आणा ६ ॥ सातवें हरीवाश खेत्रके युगला युगलांनीको नर्क होनां ७ ॥ आठमें चमरेंद्र प्रथम स्वर्गमें जाकर फिर अपने स्थानपर आणा ८ ॥ नौमें एकसो आठ सिद्ध पांनसे धनुषकी अवगाहनाके धणी एकसमें सिद्ध हुये ९ ॥ दशमें असंजती मनुष्योकी पूजा भक्ति हुई १० ॥ अब देखीये कि दीगंबर मतमेंभी इसीतरे १० अश्चर्यरूप बाते लिखीहें ते ख्यालकर समझो और हठवाद नकरो तो तुम्हारी समकित शुद्ध होवे ते इसवास्ते वे आश्चर्यरूप बातें यहहे तेह देखो. पार्श्व पुराणेंमें प्रथम भोग भूमीकी विरोधी जिसमे अपने पारिश्रमसे खांन पांन आदिके सामग्री संचयकी जाय १ ॥ दूसरें चक्रीको लडाईमें हारहो २ ॥ तीसरें नये कांम फैलावे ३ ॥ चतुर्थें त्रेसठ शलाका पुर्षमें सें चतुर्थम् कालमें तीन तीर्थंकर शांतिनाथ १ कुंथनाथ २ अर्हेनाथ ३ सोई चक्रवर्ति हूए और त्रिप्रिष्ट प्रथम नारायणका जीव महावीर स्वामी हूए और आदिनाथस्वामी प्रथम तीर्थंकर तीसरे कालमे जन्मलेकर तीसरेही कालमें मोक्ष गए इस प्रकार ५ घटकर ५८ मनरहे ४ ॥ पांचमें श्रीपुष्पदंत्तजी नौमे तिर्थंकर आदि श्रीशांतिनांथजी सोलमें तिर्थंकर पर्यंत अंतरालय

कालमें धर्मका नाश हुवा ५ ॥ छहें भीमावलि १ जितशत्रु २ रुद्र ३ विशाल ४ सूप्रतिष्ट ५ वल ६ पुंडरीक ७ अजितधर ८ जितनाभि ९ पीठ १० सत्यवचननय ११ एह ग्यारह रुद्रहें ॥ भीम १ महाभीम २ रुद्र ३ महारुद्र ४ काल ५ महाकाल ६ दुर्मुख ७ नर्कमुख ८ अधोमुख ९ ये नौ नारद हूए ६॥ सातवें सुपार्श्वनाथ. तेईसमें पार्श्वनाथ, चोवीसमे महावरि इस हुंडासपर्नीमें इन तीनोको उपसर्ग होताहे ॥ दोहा॥ यौं त्रिलोक ग्रन्थमिमें, कथन कीयो बुधराज ॥ सो भविजन अवधारीयो, संशय मेटन काज ॥ १॥ ए ७ मां ॥ आठवें सिखर महातममें राजा श्रेणक भगवांनसें पूछताहे हे भगवान आप कहेतेहो चोवीसों तीर्थंरोंके निर्वाणक्षेत्र सिखरजी और जन्मस्थान अजोध्यापुरी. तो ऋषभदेवतो कैलास परवतसें मुक्तगए और वासपूज चंपापुरसें नेमनाथ गिरनारसें मुक्तगए और आप पावापुरसें मुक्तिजाओगे और आपका जन्मस्थांन कुंडलपुरमें अर्थात् पांच तीर्थंकराका जन्मस्थांनतो अजुध्या पुरीमें हुवा शेष उन्नीस तिर्थंकराका जन्मस्थांन अन्य पुरीमेंहुवा तो चौवीस २४ का मोक्ष क्षेत्र जन्मस्थांन नेमरूप कहां रह्या. सिखरजीसें बीस भगवांनही मुक्त गएहे इसवास्तें यह दोनों वातें विप्रीति क्यों हुई (उत्तर) हे राजाश्रेणक यह का-

लदोषसें अन्यस्थानसें मोक्ष गए अन्यस्थांन जन्म हुवा अनंतानंत कोडा कोडी उतसर्पणि अवसर्पणी काल व्यतीत हुए पीछे कोई ऐसोहि काल आजावेहै तामें कोई कोई तिर्थंकरांका जन्मनिर्वाणादिक अन्य २ स्थांनसें होजाताहै यह कालका दोष समझनां. हे राजा भर्ममें मतिहोहे भर्महै सोई कर्महै इसवास्तें तुं यही निश्चै जाण चौवीस तीर्थंकरांके जन्म अजोध्या, निर्वाण खेत्र समेतसिखर. अब देखो इहां सिखर महातम्यमें काल भावका दोष कहतेहें फिर श्वेतांबरोंके दस अछेरे आप क्यों नही मानते. जब तुमारे सास्त्रोंमें आश्चर्यरूप बाते मानीहें तो इनके माननेमें क्या शर्म आतीहै इसीतरह येहभी मानने योग्यहे ८ ॥ नौमें श्रीकृष्ण धात्रीखंडके भर्थक्षेत्रमें जाना दूसरे वासुदेवके राज्यमें द्रोपदीके ल्यानें वास्तें ९ ॥ दसमें भर्थ चक्रवर्तिकी विजै भंग बाहूबलनें करी १० ॥ यह दस बातें दिगंबर मतके शास्त्रोंमें कहीहै. जैसे यह आश्चर्यरूप बाते मानीहै एसेही श्वेताबर मतके शास्त्रोंमें दस आश्चर्यरूप बाते काल महातम्य हुंडानामा अवसर्पणीके प्रभावसें हुइहै ते प्रमाण करीयेहै ॥ इति दश आश्चर्य प्रत्युत्तरम् ॥

प्रश्न १७ मा-- सिखर महातम्यमें राजा श्रेण-

कका प्रश्न. हे भगवांन आपनें कह्याहै कि भव्यको या-
त्रा होवे अभव्यकों नाही होय परंतु खास सिखरजीमें
भीलादिक तथा पारधी, जल, बिन्सपति, इकेंद्रीयादिक
जीवराशिहै यह भव्यहै कि अभव्यहै (उत्तर) हे राजा
सिखरजीमें जित्ता जीवराशि ते तो सर्व भव्यराशिहै
अब देखिये सूत्र सिद्धांतोमें तो ऐसा कह्या नही कि
सिखरजीके सब जीव भीलादिक और जल विन्सपती
आदि सर्व भव्यहै क्योंकि ऐसा होय नही सक्ता ॥ यथा ॥
सिद्धांतोक्तं ॥ नसाजाइ नसायोनी नतंठाणं नतंकुलं नजा-
या नमुआजस सवेजीवा अणंतसो ॥ १ ॥ इतिबचनात्
॥ अर्थ--पांच अणोत्र बिमानोंके देवताओंसें बाकी सि-
वाय न ऐसी जात, न ऐसी योणी, न ऐसी जगे, न ऐसा
कुल, कही बाकी नही रह्या कि जहां न जन्मां न मऱ्या.
अर्थात् सर्व जगे अणंति २ बार जन्म्यां मऱ्याहै. शा-
स्त्रोंका ऐसा कथनहै भावार्थ इसिसें एह सिद्धी हुवाकि
सर्व जगे सर्व जीव सर्व जगे भव्य अभव्य जीवोंका जन्म
और मरण हुवाहे फिर सिखरजीमेंही सर्व भव्य जीव
किहांसें आए, ऐसा क्या महात्महे और तिर्थंकर केवली
अणंते कालसें अणंते हुए और वे सब जगे विचरेहें तो
क्यां सब जगेही सवस्थांन पूजनीक होय अर्थात पूज-
नीक जगे नही. विना ज्ञान दर्शन चारित्र तपके गुण

बिना कोइ जीव पूजनीक नही अर्थात् ज्ञान दर्शन चारित्र, तप कर सहित जीव जोहै वेही पूजनीक बंदनीकहै. और सिखर महातम्यके बनानेवालेकी देखो कैसी बेअकलीहै कि भगवानका नाम रखकर ऐसा मिथ्यात अर्थात् झुठा उपदेश बरनन कीया ते बिनां परमान किसतरें मानीयें. ऐसे बचनोपर तुम लोगोंकोही परतीतहै परंतु बुद्धीवानोंकी तो इन वचनोंका परतीत नही होती. और कितनेक मतपक्षी ऐसा कहेतेहें कि जो मनुष्य सिखरजीकी यात्रा करे तो तिसका नर्क और त्रियंचकी दोगती तूट जातीहै अब तुम विचारो कि जब दोगती का बंध कोइसा पडिजाताहै तो दोगती कर्म असली महाराज भगवान महावीरजीके दरसनोंसेभी नही छूटा. जैसें राजा श्रेणिककें प्रथम पहेली नर्क गतिका बंध पड चुकाथा तो महावीरजीके दरसनोंसेंभी नहि छूटा तो सिखरजीके दरसनोंसेतो किसीतरोसें भी नर्क त्रियंचका बंध नही छूटसक्ता. और जो कह्योगे कि जिस जीवका नर्क त्रियंचका प्रिथम बंध पडचूकाहै उसको सिखरजीकी यात्राही नही होती. जो ऐसा कह्योगेतो फिर नर्क और त्रियंचकी गतीका टूटनां क्यों कहेतेहो बिनां बंधके टुटेहीगा क्यां अर्थात् कुछ नही टुटता. जो कहोगे कि सिखरजीकी यात्रा करे पीछे नर्क और त्रियंचगतीमें न जाय

यह कहेनाभी ठीक नही क्योंकि जीवके सदा भाव एकसें नही होते. साधु संजम पालकर ग्यारमे गुणस्थानपर चढकर फिरभी मिथ्यात् गुणस्थानमें गिरपडेहै. इसवास्तें पीछेभी नर्क और त्रियंचकी गतीमें न जाना सिद्ध नही होता. यह तुम्हारा सब कहेना केवल भ्रमजालरूपहै और अनेक राजे तथा सेठ लोक धनवान हुए वे सिखरजीकी जात्राकर नर्क और त्रियंचकीगती तुटालेते परंतु तुम लोगोंकोही नर्क और त्रियंचकी गतीका बंध टुटना अहशांनहै इसवास्तें ऐसी एकांत पक्षकी बातें न करनी के सिखरजीकी जात्रासें नर्क और त्रियंचकी गती टूट जाय यह प्रमाणीक बात नही. हा अलवत्तें जो साधु श्राविकके व्रत पूरे तौरसें पलें और उसमेभी भंग नही पडे तो नर्क त्रियंच गतिमें न जाय ऐसा समझना चाहीयें.

दोहा ॥ मुनी वसत्र राखण विधि, पात्रादिक उपकर्ण ॥ संजम निर्वाहन अर्थ, ममत्त भाव नही धर्ण ॥ १ ॥ एकादश परीसह उदे, केवल मुनि आहार ॥ लेवेंहे निर दोषथी, वेदनी कर्म विचार ॥ २ ॥ स्त्रीकी मुक्ति कही, जिन वचनों अनुसार ॥ निरवेदीको मुक्तहै, ए निश्चे मन धार ॥ ३ ॥ दश अश्चर्य इनके विषे, उत्तर कहे हितकार ॥ जिण वांनी परमानकरि, शुद्ध समकित मन धार ॥ ४ ॥ भव्य जीव सब सिखरमें, वाशकरें हें आय ॥

येह बात सब कूठहै, सूत्र प्रमाण न थाय ॥ ५ ॥ प्रथम भाग पूरण कीयो, संग्रहै कर ऋषराज ॥ विवेक विलाश इस नांमसें, भविजनके जितकाज ॥ ६ ॥ सम्बत उन्नीसें उनसठे, दसमी दिन कर जान ॥ शुक्ल पक्ष आसोजकी, तिथियेंमें परधांन ॥ ७ ॥ करनाल नगरसें पश्चमें, काछव नामें ग्रांम ॥ प्रथम भाग चौमासमें, कह्या सुजन हित कांम ॥ ८ ॥ पूज मनोहरदाशजी, भागचंद शिष जांन ॥ तत शिष सीतारामजी, गुरुभक्ता गुणवांन ॥ ९ ॥ तास शिष शिवरामजी, हरजीमल तस जांन ॥ रतनचंद पंडित मुनी, तिनके शिष प्रधांन ॥ १० ॥ कुंवरसेन शिष तेहनां, तिनके शिष ऋषराज ॥ गुरु कृपासें एह में, लिख्या ग्रंथ हितकाज ॥ ११ ॥ अधिका ओछा बचन में, कह्या होयजो कोय ॥ तिसकी मिछाम दोकडं, मन वच तनसें मोय ॥ १२ ॥ इति प्रथम भाग संपूर्णम् ॥

॥ अथ विवेक विलाश ग्रंथका दूसरा भाग प्रारंभः ॥

दोहा ॥ सतगुरु पद पंकज नमीं, करूं विवेक विलाश ॥ दूजो भाग विचारकें, लिखूं सुमत परकाश ॥ १ ॥ ईश्वर कर्ताके विषे, प्रश्नोत्तर करू सार ॥ बुधजन समको ज्ञानसें, लजि तत्व विचार ॥ २ ॥

प्रश्न १ ला—जीवकें कर्म लगतेहैं या नही लगतेहैं (उत्तर) है रुदमनि जो कर्म न होयतो पाप पुन्यका

फलभी न होणा चाहीये तेतो प्रत्यक्ष देखनेमें आवेहै. जिसनें पापकरयाहै ते दुखीहै और जिसनें पुन्य करयोहै ते सुखीहै. वली जो इम होयतो दान ध्यांन तप जप प्रमुख जे सत्कर्महै ते सर्व मतवाला क्या बास्तें करेहै, तुम्हारा कह्या प्रमाणें तेहनो फलतो कुछ भी होय नही पण ते शुभकर्म जाणीनें लोक आदरेहै, जो कर्म नही तो जन्म धारण करवानों क्या प्रयोजनहै इसवास्तें जो जन्म मरण तथा सुख दुखहै तो कर्म पण होणा चाहिये. कर्म है ते जीवनें रजरूप है रागादिकथी बंधायहै अनें भोगव्या पछे छुटेहैं. जहां लग कर्महै तहां लग संसारी जीव कहवायहै. कर्मोंका क्षय थयाथी मुक्त हुवा कहेवायहै इसवास्तें तुमको निश्चे मानणा चाहिये कि जीवनें अवश्य कर्म लागेहै ॥ दोहा ॥ कर्मथकी या जीवनें ॥ सुख दुःख सगला थाय ॥ कृत्य शुभाशुभ जेहथी, शफल थया कहेवाय ॥ १ ॥

प्रश्न २ रा—तुम कहो होके जीव भवांतरसें आवीनें इहां उपजेहै तो एक भवकी वात दूसरे भवमें केम करतानही जो भवांतर होयतो तेहनी स्मृति जरूर होणी चाहिये ते तो किसीको पण होतीनही तो भवांतरहै इम किसतरें मानीयें (उत्तर) जैनमतसें—पहिला भवनी स्मृति होती नही ते उपरथी भवांतरनों अभावहै इम

जाणवा नही. पहिला भवनी वात तो रही पण आ भ-
वमें जो मद्यादिक पदार्थना योगें गया दिवसनी वात
पूछवाथी मानस बराबर कही शकतो नही. देखोकि कोई
मनुष्य ताडि दिकना योगें मुछावान थयो होय तो तेणें
गया दिवसनी स्मृति रहती नही तेहनुं कारण मद्यादिक
पदार्थोंनो आवरणहे तिम जीवनें ज्ञानावरणी कर्मना
उदयथी पूर्व भवना बातनी स्मृति होती नही. वली जेम
आ भवमांज माताना उदरमां नाना प्रकारना दुःख सह-
न करयो होय ते वात जन्म्या पछे कांइ कही शकता न-
ही तो भवांत्तरनी वात केम कहीशके. इसवास्तें भवांत्त-
रनी वात तो विशेष ज्ञानी बिनां दूसरा कोई जानीशा-
केज नही इम समझवो ॥ दोहा ॥ ज्ञानावरणी कर्मथी,
भव विस्मृति थइ जाय ॥ विशेष ज्ञानी कहि सके, पूर्व
जन्म महिमाय ॥ २ ॥

प्रश्न ३ रा-(नास्तिक मतीका) तुम इम मानतेहो कि
जिवनें कर्म लागेहे अनें वली इमपण कहो होक जीव
वास्तविक स्वरूप शुद्धहे तो जे शुद्धहोय तेहनें लेप किम
लागे तिसवास्ते जीव शुद्धहे तेहनें कोइ कर्मनो लेप ला-
गतो नही इम माननो चाहीये (उत्तर) जैनमति आ-
स्तिकसें-हे नास्तिक यद्यपि जीवनो वास्तविक स्वरूप
शुद्धहे तथापि शुभाशुभ कर्मनें योगें तेहनें लेप लागेहे

तिससें जीव बंध कहेवायहै अनें जिसकें कर्मका लेप न-
हीं ते मुक्त कहेवायहै. मुक्तितो सिद्धता पाम्या बिना सं-
भव नही अनें जहां शुद्धि मुक्तिनों अभावहै तहां शुद्धि-
बंधनी कल्पनां अवश्य करवी जोइये. ते बंध जीवनें अ-
नादि कालिनों चाल्यो आवेछे जिम धांननें तुस लाग्या
होयहै तिम जीवनें कर्म अनें जन्य शरीर लाग्योही हो-
यहै. जिम धांननें तुश लागवानों कारण मिथ्यात्व तथा
राग द्वेशादिक होयहै जेम धानमांथी तुश तथा तत्संब-
धी छेतरारूप बंध हेतु पदार्थना अभावथी शुद्ध करण
देखायहै तिम जीवमांथी मिथ्यात्व तथा रागद्वेषादिक
कर्मबंध हेतुनों अभाव थयाथी शूद्ध निर्मल थायहै. जि-
म अनाजनों शुद्ध हुव्यो दानों ऊगे नही तिम जीवपण
शुद्ध निर्मल थयासें जनम मरण पामें नही ॥ दोहा ॥
कर्म लेपणां योगथी, बंध जविनें होय ॥ कर्म खपे मु-
क्तिलहै, जन्म मरण नही कोय ॥ ३ ॥

प्रश्न ४ था—(नास्तिकका) कर्म पोतें तो जड पदार्थहै
तिनोंका जीवकें साथें स्वतंतर संबंध संभवे नही कोइ
पिण प्रेरक होवो जोय इसवास्तें ईश्वरेछाथी जीवनें कर्म-
बंध थायहै अनें तेहज प्रेरकहै इम जानवो (उत्तर)
आस्तिक जैनमतसें—लगारेक हास्य करीनें बोलेंहै ईश्वर पो-
ताना अंशरूप जीवनें उत्पन्न कर्याहै तेहथी जीव ईश्वरनों अं-

श कहेवाय एउपरथी जीव तथा ईश्वरनों अंशांशी भाव सं-
बंध तुम्हारा कह्याप्रमाणें ठहरेहै जो ईश्वर अंशहै एम
मानीये तो ईश्वरनां जेहवो जीव होवो जोये. क्योंकि
अंश अंशीमां भेद होतो नही तेहथी ईश्वरनीपरें जी-
व पण निर्मलहै एम मानवो जोय तो एहवा निर्म-
लस्वरूपी जीवनें कर्म लगावीनें मल सहित करवानों
कारण क्यां हुतो. आपणें कोई शुद्धवस्तु वापरवानें
अर्थें लावीएहै तो जहांतक बनें तहांतक तेहनें
मलीन करवा देतां नही अनें स्वच्छ राखवानों घणों
प्रयत्न करया करीयेहै तो पोतानों अंस रूप जीवनें
जाणी जोईनें मैल लगायवो ए ईश्वरनें विषे संभवें
नही. एमतो कोई साधारण मूर्ख मनुष्य पण करेनही
तो ईश्वर ते किम करे. अने जे पोताना अंगनो
तिरस्कार अथवा नाश करे ते आत्मघाती कहेवाय
तिम ईश्वर पण आत्मघाती कहेवाशे. कदाचि तुमें
इम कहशो के ईश्वर पोते पण कर्म कलंक सहितहे
तो जे पोतें कलंक सहित होय ते बीजानों कलंक
किम मिटावी शकतो हतो अनें ते ईश्वर पण क्या-
नो. तिसवास्ते मनमें आवे तेहवी मन कल्पना क-
रीनें निर्दोषी ईश्वरनें दोष लागु करवो ए केतली
मूर्खताहै. इसवास्तें ईश्वरनी इच्छाथी कोई पण थतो

नहीं जे थायहै ते कर्मथी थायहै इम जानवो ॥ दोहा ॥ कर्मबंध या जीवनें, ईश्वर इच्छा रूप ॥ कहै एम ते मूर्ख है, ईश अक्रिय अनूप ॥ ४ ॥

प्रश्न ५ मा—इस जगतकी जो अद्भुत रचना देखायहै तेहनों करता कोई पण होवो जोयजे क्योंकि एहवी कृति स्वाभाविक थईशके नाहि तिम कर्मादिक जड पदार्थोंसें पण जगतनी उतपत्ती संभवे नही इसवास्तें जे जगत उत्पन्न करेहै तेहनेज ईश्वर कहीये. अनें एहवी लोक वदंता पणहै के जगत सर्व ईश्वर कृत्यहै (उत्तर) जगतनो कर्त्ता ईश्वर होयतो सर्वे प्राणीमात्रनों ईश्वर कारण थयो अनें सर्व पदार्थों ईश्वरना कार्य थया. पिता जेम पुत्रनी उतपत्ती करेहै तेम ईश्वर सर्व प्राणीमात्रनी उत्पत्ति करेहै तो ईश्वर पितारूप अनें सर्व पदार्थों पुत्ररूप मानवा जोय. पुत्रनी ऊपर पितानो प्यार होय ये स्वभाविक सिद्धहै तेम ईश्वरनों पण सर्वनी ऊपर प्यार होवो जोय. जो एम होयतो सर्व प्राणीमात्र सुखी होवा जोय, तेमतो दीठामें आवतो नही. कोई सुखी, कोई दुःखी, कोई पापी, कोई पुन्यात्मा, कोई नर्कगामी और कोई स्वर्गगामी वगैरे सर्व जीवोनी वर्तणूक जुदी जुदी दीठामां आवेहै एम केम कीधोहै. वली जगतना जीवोंनें प्रवर्तव-

नवाला. ईश्वरहै एम पण तुम्हारा कह्या ऊपर्थीज
सिद्ध थायहै तो हिंदुयेंमें कोइएक मनुष्य जीवनी
रिक्षा करेहै अनें कोइयक मनुष्य तेहनों बध करेहै
तो ये बुद्धी पण इश्वरें आपी कहवाशी जो एहवी
बुद्धि दणेवालों इश्वर मानसो नही तो दूसरो
कोई मानवा पडशी क्योंकि तुम्हारा मतप्रमाणें प्रे-
रणा कर्णवालो कोई जुदोज होयहै अनें जे प्रेरणा
करेहै ते इश्वरहै तो ते दूसरा प्रेरणाकरणवालो
ईश्वर मानवो पडशी. एहवी रीतें ईश्वरनों ईश्वर तेह-
नों ईश्वर इत्यादिक मानशो तो अनवस्ता दोष प्रा-
प्त होशी. वली पोतानें दुःखी कोई पण करता नही सर्व पोता-
ना सुखनी चाहनां करेहै तेमज पोतानां संबंधीयो विषे पण
सुखनी चाहना करेहै. तुम्हारा कहवा प्रमाणें तो जे जीव
नर्के जायहै तेपण ईश्वरनों अंश अनें जे सर्ग जा-
यहै ते पण ईश्वरनोंज अंशहै. येतले सुखी तथा
दुःखी थाय ते सर्व ईश्वर आपहीहै इम मानीये. ये
प्रमाणें ईश्वर आपही संसारमा परिभ्रमण करेहै ते
आपणा सेवकना जन्म मरणादिक दुःख केम
टालि शकै अनें जीवोंनें नर्कथी अथवा दूसरी कु-
गतीथी किम बचावी शकै. इत्यादिक विचार करतां
जगतनों करता ईश्वर नही किंतु स्वाभाविक सिद्धहै

नही जे थायहै ते कर्मथी थायहै इम जानवो ॥ दोहा ॥ कर्मबंध या जीवनें, ईश्वर इच्छा रूप ॥ कहै एम ते मूर्ख है, ईश अक्रिय अनूप ॥ ४ ॥

प्रश्न ५ मा—इस जगतकी जो अद्भुत रचना देखायहै तेहनों करता कोई पण होवो जोयजे क्योंकि एहवी कृति स्वाभाविक थईशके नाहि तिम कर्मादिक जड पदार्थोंसें पण जगतनी उतपत्ती संभवे नही इसवास्तें जे जगत उत्पन्न करेहै तेहनेज ईश्वर कहीये. अनें एहवी लोक वदंता पणहै के जगत सर्व ईश्वर कृत्यहै (उत्तर) जगतनो कर्त्ता ईश्वर होयतो सर्वे प्राणीमात्रनों ईश्वर कारण थयो अनें सर्व पदार्थो ईश्वरना कार्य थया. पिता जेम पुत्रनी उतपत्ती करेहै तेम ईश्वर सर्व प्राणीमात्रनी उत्पत्ति करेहै तो ईश्वर पितारूप अनें सर्व पदार्थो पुत्ररूप मानवा जोय. पुत्रनी ऊपर पितानो प्यार होय ये स्वभाविक सिद्धहै तेम ईश्वरनों पण सर्वनी ऊपर प्यार होवो जोय. जो एम होयतो सर्व प्राणीमात्र सुखी होवा जोय, तेमतो दीठामें आवतो नही. कोई सुखी, कोई दुःखी, कोई पापी, कोई पुन्यात्मा, कोई नर्कगामी अोर कोई स्वर्गगामी वगैरे सर्व जीवोनी वर्तणूक जुदी जुदी दीठामां आवेहै एम केम कीधोहै. वली जगतना जीवोंनें प्रवर्ताव-

नवाला ईश्वरहै एम पण तुम्हारा कह्या ऊपर्थीज
सिद्ध थायहे तो हिंदुयेंमें कोइएक मनुष्य जीवनी
रिक्षा करेहे अनें कोइयक मनुष्य तेहनो बध करेहे
तो ये बुद्धी पण इश्वरें आपी कहवाशी जो एहवी
बुद्धि दणेवालों इश्वर मानसो नही तो दूसरो
कोई मानवा पडशी क्योंकि तुम्हारा मतप्रमाणें प्रे-
रणा कर्णवालो कोई जुदोज होयहै अनें जे प्रेरणा
करेहे ते इश्वरहे तो ते दूसरा प्रेरणाकरणवालो
ईश्वर मानवो पडशी. एहवी रीतें ईश्वरनों ईश्वर तेह-
नों ईश्वर इत्यादिक मानशो तो अनवस्ता दोष प्रा-
प्त होशी. वली पोतानें दुःखी कोई पण करता नही सर्व पोता-
ना सुखनी चाहनां करेहै तेमज पोतानां संबंधीयो विषे पण
सुखनी चाहना करेहे. तुम्हारा कहवा प्रमाणें तो जे जीव
नर्कें जायहे तेपण ईश्वरनों अंश अनें जे सर्ग जा-
यहे ते पण ईश्वरनोंज अंशहे. येतले सुखी तथा
दुःखी थाय ते सर्व ईश्वर आपहीहे इम मानीये. ये
प्रमाणें ईश्वर आपही संसारमा परिभ्रमण करेहे ते
आपणा सेवकना जन्म मरणादिक दुःख केम
टालि शकै अनें जीवोंनें नर्कथी अथवा दूसरी कु-
गतीथी किम बचावी शकै. इत्यादिक विचार करतां
जगतनों करता ईश्वर नहीं किंतु स्वाभाविक सिद्धहे

॥ दोहा ॥ जग करता ईश्वर कहै, ते विद्धान न होय ॥ ईश्वरनें करतव्य नही, स्वभाव सिद्धज जोय ॥ ५ ॥

प्रश्न ६ ठा—जगतनी उत्पत्ति करता भलें ईश्वर न होय इसमें हमें पक्ष नही पण ईश्वर सर्व व्यापकहै के नही (उत्तर) हे रूढमती जो ईश्वर सर्व व्यापक होय तो जीव शिवाय दूसरा कोई पदार्थभी होवो न जोय क्योंकि ईश्वर तो चेतनवंतहै, ते सर्वमां व्यापक होयतो चेतना बिना कोईजगां खाली न जोइये कि जे ठिकाणे दूजो पदार्थ रहिशके. अनें जगतमेतो जीव अजीव पदार्थों जुदा २ देखवामें आवेहै एहथी स्पष्ट सिद्ध थायहै कि ईश्वर सर्वव्यापक नही. वली ब्राम्हण, क्षत्री, वैश, शूद्र ये चारि वर्ण अनुक्रमें श्रेष्टता तथा कनिष्टता केम पाम्याहै जेमके ब्राम्हण सर्वथी श्रेष्ठ, तिससें क्षत्रीय कनिष्ठ, क्षत्रीथी वैश, वैशथी कनिष्ठ शूद्रहै अनें सर्वथी कनिष्ट चंडालादिक जातिहै. तिनोंमां श्रेष्ठ कनिष्टता न होवी जोइये क्योंकि ईश्वरतो सर्वमां एक अनें समानहै तिसमें उत्तम मध्यमता परमुख संभवे नही अनें उत्तम मध्यमतो प्रत्यक्ष देखनेमें आवेहै. वली दूसरा पण उदाहरण अनेकहै जिम कोई पुर्ष शुभ कृत्य करेहै अनें कोई पुर्ष अशुभ कृत्य करेहै इम न होवो जोइये. ईश्वरतो सर्वमें व्यापकहै तेहथी शुभाशुभ कृत्य क्या वास्तें करेहै

ये ऊपरथी एहवो निश्चै होयछे कि ईश्वर सर्व व्यापक नही ॥ दोहा ॥ व्यापक ईश्वर जे कहै, तेह न जानें मर्म ॥ भ्रमें भूल्या सर्व मत, विना एक जिन धर्म ॥ ६ ॥

प्रश्न ७ मा—ईश्वर सर्व व्यापक हो कि न होय तेनी साथे हमें जरूर नही पण आ जगतनों अधिपती ईश्वरछे अनें जगतरूप तेहनु ऐश्वर्यछे तेहथी ईश्वरतानें पाम्योछे जे ऐश्वर्यवालो होय तेहनें ईश्वर कहीये (उत्तर) जगतनों आधिपत्य लेवानों ईश्वरनें स्यूं कारण हतो अनें जगत-रूप ऐश्वर्य पण तेणें क्या वास्तें चाहाताथा क्या जगत-नी उत्पत्तिनी पूर्वे ते ऐश्वर्यनें पाम्यो न हुंतो ऐश्वर्य वि-ना ईश्वरता संभवे नही ए उपरथी जे जगतनी उतपात्तिनि पूर्वे अनश्वर हुंतो ते उत्पत्ति करीनें ईश्वरतानें पाम्योछे ए-वो तुम्हारो आशय जणायछे नही. वोरु पण ए वचन बधु खोटाछे ईश्वरनें विषे एहवी कल्पना करवी जे नही जोय जुओके तुमारा कह्या प्रमाणें जे जेम प्रजानी अपेक्षाये राजा कहवायछे अथवा धननी अपेक्षायें धनाढ्य कहवा-यछे तिम जगतनी अपेक्षायें ईश्वर कहवायछे एतले जब जग-तनें उपजावे तब जगतनों ईश्वरपणो कहिये एहथी जगतनों पूर्वे ईश्वर न हुंतो एम थयो अनें जब जगतनों प्रलय थाय तब ईश्वरनो पण अभाव थइ जायवो चाहिये जो ए बात कबूल करशोतो जे कोई काल-

मां न होय ते क्षणिक कहवाशे जो क्षणिक मानशो तो दूसरा पण घणा दोष प्राप्त थशे इसवास्तें ईश्वरनें जगतनों एहवी-रीतें अधिपती कहेवो ते योग्य नही ॥ दोहा ॥ अधिपती जगनों जे कहै, ईश्वरनें मति वाद ॥ ते एकांत कनिष्टहै, उत्तम अनेक बादि ॥ ७ ॥

प्रश्न ८ मा--इतना संवाद थया तिनोमें ईश्वरनों यथार्थ कारण पणों कोइए कह्यों नही जगतनी उत्पत्तिनि पूर्वे ईश्वर नें एहवो संकल्प थयोके म्हारो सामर्थ्य प्रगट करूं ये बात एहवीरीतें (एकोहं बहुष्यामि) एतले एक हुं बहु रूपें थाऊ एहवा कारणथी जगतनी उत्पत्ति करीहै तेहथी ईश्वरने कारण कह्याहै (उत्तर) हे मतपक्षी पोतानो सामर्थ्य प्रमट करवानी इछा तो तेहनें थायहै कि जेहनें विषे अज्ञान होय. ईश्वरतो सर्वज्ञहै ते क्या पोतानों सामर्थ्यपणों जाणतो न हुंतो. मेरेमें कितना सामर्थ्यहै एहवो जिसनें संशे होय ते ईश्वर क्यानो साधारण मनुष्य प्राणी पण पोतानो सामर्थ्य जाणी शकेहै तो ईश्वर किम न जाणी शकै तिसवास्तें इम कहिवो ते मूर्खताहै ॥ दोहा ॥ निज सामर्थ्यनें जाणवा, करयो ईस जग एह ॥ कारणवादी जे कहै, शत मूरखहै तेह ॥ ८ ॥

प्रश्न ९ मा--ईश्वरें पोतानो सामर्थ्य वतावचा वास्ते यह जगतनी उत्पत्ति करीहै एम जाणवो जोईये (उत्तर) हे

रूढमती किसको बतायवा वास्ते जगतनी उत्पत्ति करीहै जीव अनें जड पदार्थों तो ईश्वरेंही उत्पन्न करयाहै इम तुम कहो हो तो दूसरा कोंन जगतनी पूर्वे हुंतो किजेहनें देखाडवा वास्ते ईश्वरें आ जगतनी उत्पति करीहै इसवास्तें ये वात पण असत्यहै ॥ दोहा ॥ बीजानें देखाडावा, पोतानों सामर्थ्य ॥ जग उपजाव्यो ईश्वरें. एम कहे ते व्यर्थ ॥ ९ ॥

प्रश्न १० मा—जेम माणस सवारमां उठी वस्त्रादिक पहेरीनें आरीसामां पोतानों स्वरूप देखेहै ते श्रेष्ट दिखायतो आनंदित थायेहे तेम ईश्वर पण पोते पोतानों स्वरूप जोवा सारू आ जगतरूप शृंगार करी पोतानों रूप विस्तारीनें देखेहै एम जाणवो जोईये (उत्तर) हे रूढमती, माणस पोतानों रूप आरीसामे जोवे हे तेहनों कारण यहहै के म्हारो रूप श्रेष्ट देखाशे नही तो लोको हाशी करशे अथवा कोई खोड काहाडशे तिम ईश्वरें दूसरा किसके भयसें पोताना रूपनों विस्तार करयोहै. ईश्वर जैसा दूसरा ईश्वर कोई हे नही तो देखणेवाला कोंन. तिसवास्ते ये वात पण कूठीहै ॥ दोहा ॥ पोतें जोवा आपनें, रच्यो जगत आ ईश ॥ कोना भयथी ते कहो, मतवादी तज रीश ॥ १० ॥

प्रश्न ११ मा—एक ए वहि भूतात्मा, भूते २ व्यवस्थि-

तः॥ एगधा बहूधा चेव, दृस्यंते जल चंद्रवत् ॥ एहवीरी-
तें आत्मा एक छता सर्व प्राणीमात्र जुदो जुदो दीठामां
आवेहै जेम चंद्रमा एक छता अनेक जल स्थानकोंमा
प्रतिबिंबरूपें जुदो जुदो दीठामां आवेहै तेम ईश्वरतो एक-
हीहै पण घट २ मां जुदो जुदो देखायहै एतले ईश्वर बिं-
बहै अणें सर्व जीव प्रतिबिंबहै एम जानवो (उत्तर)
जिम एक चंद्रमांना अनेक प्रतिबिंब होयहै ते जेहवो चं-
द्रमा होय तेहवो दिखायहै तथा कांचनां भुवनमां एक
मनुष्य छतां अनेक प्रतबिंबरूप दीठामां आवेहै तेहमां
मूल आकृतिथी जुदी आकृति देखाती नही जेम कि दो
जथी पूर्णमाशि शुधी अनेक प्रकारें चंद्रमानी आकृति
होय तेहवीज तादृश्या देखायहै. काणो होयतो काणो देखा-
यहै, आंधलो होय सो आंधलोही देखायछै वगैरे बिंबना
जेहवोज प्रतिबिंब देखायहै तेम ईश्वर सर्व प्राणीयोमां ए-
कशा दिखातो नही. कोई सुखी कोई दुःखी, कोई पापी
कोई पुन्नवान वगैरहें अनेक प्रकारे देखायहै तो ईश्वरना
प्रतिबिंब केम संभवे. जो प्रतिबिंब होय ते बिंबना जेहवो
जे होयहै तिमतो ए नही. वली चंद्रमानों उदय हुंता प्रति
बिंब पण तेहज वखतें उत्पन्न थायहै अनें चंद्रमा अस्त
थयाथी प्रतिबिंब पण मटी जायहै तिम ईश्वर अनें जी-
वोंनें विषे हुंतो नहिं. ईश्वर उत्पति नाश रहितहै तिम जी-

व पण होवा. जोये. ईश्वर जेम अक्रियहै तिम जीव पण क-र्मविना होवा जोय. जेहवो बिंब तेहवा प्रतिबिंब होवा जोये तेमतो ईश्वर अनें जीव नहिं तिसवास्ते चंद्रबिंबनों दृष्टांत सर्वथा असत्यहै क्योंकि सर्व जीव पोताना कर्मोदयसें उ-त्तम मध्यमपण पामेंहै ॥ दोहा ॥ बिंब अनें प्रतिबिंबता, ईश्वर जीव प्रमाण ॥ चंद्रबिंबवत ये नही, तेहथी सत्य न जाण ॥ ११ ॥

प्रश्न १२ मा–जीव कर्मोंनें केम ग्रहण करतो हो-शी (उत्तर) जेम वस्त्रनां तंतु ते वस्त्रनां अंशहै तेम जीवनां प्रदेश ते जीवनां अंशहै, जेम वस्त्रांत्तर्गत तंतुनां सूक्ष्म तंतुहै तेम जीवनां पर्यायहै, जेम वस्त्रनों वर्ण तेम जीवनों सलक्षणहै, जेम वस्त्रनें मैल लगवानों कारण ति-म जीवनें मिथ्यात्वादिक हेतुये राग धेष आश्रवें कर्म मैल लगवानां कारणहै, जेम वस्त्रनों मैल टालणवाला धो-बी तिम पोतानां अंतरनों मैल टालनवाला आत्मा आ-पणहीहै, जिम वस्त्रनें साबूए करी मैल टलेहै तिम जीव-नें शुभध्यानें करी कर्मरूप मल टलेहै, जेम वस्त्रनें अग्नि तिम जीवनें तपस्याहै, इत्यादिक करयाथी कर्मनों क्षय थायहै. जे जीव कर्म सहित होय तेहनें कर्मलागे पण कर्म रहित होय तेहनें नवा कर्म लागे नहीं. जिम सूत कातनवाली नाडी काते तिसमेंसें थोडी बाकीरहै तब ते

हनी साथें दूसरी पूणी लगावे, पण पहली होयज नही तो तेहनी साथें दूजो संबंध शाथीकरे. तिम जीव पण अनादिनो कर्म सहित है अनादी जीवनो एहिज स्वरूप चाल्यो आवेहै तिसवास्तें जहांतक कर्म सहितहै तहांतक पिण नवा कर्म ग्रहण करेहै परंतु प्रथमथी अमुके बखते-ज जीव नवा कर्म ग्रहण करी कर्म मल सहित थयो एहवी आदि नही ॥ १२ ॥

प्रश्न १३ मा—जीवनें कर्म कब लाग्याहै कर्म लागवानी कोई पण आद्य जोईये जे पदार्थनों अंत होतो होय तेहनी आदि पण होवी जोये. ज्ञानें करी कर्मोंनो अंत होयहै इम तुम कहो हो तो आद्य पण कबूल करणी पडशे ते आदिनो समय केहो ठरवशो. क्योंकि जीव प्रथम निर्मल होय तोज तेहनें कर्मरूप मल लाग्यो कहवाय (उत्तर) हे रूढमती ये वचन दूषण सहितहैं क्योंकि जीव प्रथम जो निर्मल हुंतो तो तेहनें कर्म लागवाना परिणाम केम थया जे निर्मल होयते पोतानें मल सहित थावानी इछा करे नही तेम छतां जीवे कर्मोनी वांछा केम करी इसवास्तें जीव अनादिनों कर्म सहितहै जीवनें विखे कर्मस्वभावें अनादिसिद्धहै जिम सुवर्ण माटीनों मेलहै तैसेंही जीव अनें कर्मनों मेलहै ॥ दोहा ॥ आदि जीव निर्मल हुंतो, पछे वलग्याहै कर्म॥

एम कहे ते नालहे, जिन वचनांनों मर्म ॥ १३ ॥

प्रश्न १४ मा—सर्वमां व्यापक आत्मा एक हे अनें शरीर जुदा जुदा हे एम मानवो जोईये (उत्तर) जो सर्वमां आत्मा एक होय तो माता, पिता, स्त्री, पुर्ष, भाई, बहन, पुत्र, राजा, प्रजा, चोर, साहुकार, चंडाल, क्षत्रीय, उंच, नीच, नर्क, देवता, पुन्यवांन तथा पापी इत्यादिक भिन्नभिन्न केम दिखायहै. सर्वमां आत्मा एक होवाथी तेहज देखायो जोईये अनें एकें कीधो पाप सर्वनें लागवो जाईये तिमहजि एकें कीधो पुन्ननां सर्व भागीदार थैया जोईये एकना मुक्त थयाथी सर्वनें मुक्त थावा जोईये प्रत्येक मनुष्यनों जूदो जूदो अनुष्टांन निस्फल होवो जोईये तिम तो होतो नही. जे करेहै ते भोगवे है ये कहेवत प्रमाणें बहुधा आत्मा भिन्न भिन्न देखायहै तिसवास्तें सर्वमां एक आत्मा व्यापकपणो कहेवो ते समीचीन नही एम जानवो ॥ दोहा ॥ आत्म सर्वमां एक है, भिन्न भिन्न या देह ॥ एम कहे एकांत मत, असत्त कहीजे तेह ॥ १४ ॥

प्रश्न १५ मा—सर्व कार्य अनें अकार्य ईश्वरनी इछारूपहै अनें ईश्वरनी इछाथीज सर्व होयहै एम जानवो जोइये (उत्तर) हे मतपक्षी जो एम होयतो जन्म धारण करवामां मातापितानां क्या कामहे अनें त्रिप्त स्वा-

हनी साथें दूसरी पूणी लगावे, पण पहली होयज नही तो तेहनी साथें दूजो संबंध शाथीकरे. तिम जीव पण अनादिनो कर्म सहित है अनादी जीवनों एहिज स्वरूप चाल्यो आवेहै तिसवास्तें जहांतक कर्म सहितहै तहांतक पिण नवा कर्म ग्रहण करेहै परंतु प्रथमथी अमुके वखते-ज जीव नवा कर्म ग्रहण करी कर्म मल सहित थयो एहवी आदि नही ॥ १२ ॥

प्रश्न १३ मा--जीवनें कर्म कब लाग्या है कर्म लाग-वानी कोई पण आद्य जोईये जे पदार्थनों अंत होतो होय तेहनी आदि पण होवी जोये. ज्ञानें करी कर्मोनों अंत होयहै इम तुम कहो हो तो आद्य पण कबूल कर-णी पडशे ते आदिनो समय केह्यो ठेरवशो. क्योंकि जीव प्रथम निर्मल होय तोज तेहनें कर्मरूप मल लाग्यो क-हवाय (उत्तर) हे रूढमती ये वचन दूषण सहितहै क्योंकि जीव प्रथम जो निर्मल हुंतो तो तेहनें कर्म ला-गवाना परिणाम केम थया जे निर्मल होयते पोतानें म-ल सहित थावानी इछा करे नही तेम छतां जीवे कर्मो-नी वांछा केम करी इसवास्तें जीव अनादिनों कर्म स-हितहै जीवनें विखे कर्मस्वभावें अनादिसिद्धहै जिम सु-वर्ण माटीनों मेलहै तैसेंही जीव अनें कर्मनों मेलहै ॥ दोहा ॥ आदि जीव निर्मल हुंतो, पछे वलग्याहे कर्म ॥

एम कहे ते नालहे, जिन वचनांनों मर्म ॥ १३ ॥

प्रश्न १४ मा—सर्वमां व्यापक आत्मा एक है अनें शरीर जुदा जुदा है एम मानवो जोईये (उत्तर) जो सर्वमां आत्मा एक होय तो माता, पिता, स्त्री, पुर्ष, भाई, बहन, पुत्र, राजा, प्रजा, चोर, साहुकार, चंडाल, क्षत्रीय, उंच, नीच, नर्क, देवता, पुन्यवांन तथा पापी इत्यादिक भिन्नभिन्न केम दिखायहै. सर्वमां आत्मा एक होवाथी तेहज देखायो जोईये अनें एकें कीधो पाप सर्वनें लागवो जाईये तिमहीज एकें कीधो पुन्ननां सर्व भागीदार थया जोईये एकना मुक्त थयाथी सर्वनें मुक्त थावा जोईये प्रत्येक मनुष्यनों जूदो जूदो अनुष्टांन निस्फल होवो जोईये तिम तो होतो नही. जे करेहै ते भोगवेहै ये कहेवत प्रमाणें बहुधा आत्मा भिन्न भिन्न देखायहै तिसवास्तें सर्वमां एक आत्मा व्यापकपणो कहेवो ते समीचीन नही एम जानवो ॥ दोहा ॥ आतम सर्वमां एक है, भिन्न भिन्न या देह ॥ एम कहे एकांत मत, असत्त कहीजे तेह ॥ १४ ॥

प्रश्न १५ मा—सर्व कार्य अनें अकार्य ईश्वरनी इच्छारूपहै अनें ईश्वरनी इच्छाथीज सर्व होयहै एमं जानवो जोइये (उत्तर) हे मतपक्षी जो एम होयतो जन्म धारण करवामां मातापितानां क्या कामहै अनें विष खा-

पोतानी तर्फ खेंचीलेयहै तेहनो चूमकनें पण काई ज्ञान नही कि हुं लोहनों आकर्षण करूं हूं परंतु ते क्रिया स्वभाविक थायहे तिम जीव शुभाशूभ परिणामना उपियोगें शुभाशुभ कर्म आकर्षण करी आत्मापणें लोलीभूत करेहै एहवो अनादिकालनों स्वभावहीहे इसमें ईश्वरनों काई काम नही ॥ १७ ॥

प्रश्न १८ मा--जीव जे नानाप्रकारना कर्मों करेहै तिनोंमें करानेवाला ईश्वरहे, ईश्वरनी प्रेरणाबिना जीवसें कर्म थाय नही एम जाणवो (उत्तर) हे रूढमती जो जीवनें कर्म ईश्वर करावतो होय तो कर्मनों करताज ईश्वर ठहरसी क्योंकि जे क्रियानों प्रेरक होयहे तेहिज करता होयछे जो ईश्वर करता ठहरावश्यो तो जे करता होयहे तेहीज भोक्ता होयहै इसरीतसें ईश्वरनें भोक्तापणां आवशे. भोक्ता ईश्वर थयाथी पाप पुन्य ईश्वरनें लागेहै एम मानवो पडशे. जेम कोइ पुर्ष पोताना हाथमां खडग लेईनें बीजानें मारे तेहनों पाप खडगनें लागतो नही पण ते खडग मारनेवालेको लगेहै. तेम पुर्षे कीधो पाप पण ईश्वरनें लगनेवालाहे. कर्मनों करणवाला तो खडगके समानहै तेहनें कर्म लागवो न जोइय तेथी कर्म ईश्वरनें लागेहै एम माननेवालोंको एतलाज पूछवो जोइये कि कर्मनों करता तू नही तेम कर्मनों भो-

क्ता पण तू नही कर्ता भोक्ता ईश्वरहे तो सर्व मनुष्यो पोता पोतानां मत प्रमाणें क्रिया करवानी बुद्धी केम करेहे. मद्यमांशनों त्याग अनें स्नान संध्या स्तोत्र तप जप वगैरेहे क्या वास्ते करेहे. पोतानें कांई पाप परमुख लाग्यो होयतो तेहनो निवारण क्या वास्ते करेहे. अकार्य क्या वास्ते करता नही. पापसें क्या वास्ते डरेहे. कर्ता सो भोक्ता एम क्या वास्ते कहेहे आप करेहे ते भोगवेहे. तेम छतां वलि कहेहे कि हे प्रभू म्हारा पाप टालो पण एम नही कहता कि हे प्रभू तुम्हारा पाप टालो. जे चोरीकरे तेहनें दंड थाय अनें जे प्राण छेद करे तेहनां प्राण जाय अनें हिंस्या करे ते अवश्य नर्क गामी थाय वगेरे ये सर्व व्यर्थ मानवा जोयाशि, तिसवास्ते करता जीवछे ईश्वर नही एम मानवो जोय ॥ १८ ॥

प्रश्न १९ मा—सर्व जगत्र एकज ईश्वरहे ईश्वर विना दूशरा कोई नही एम जानवो जोय (उत्तर) हे रूढमति जो सर्व जगत्रमां एक ईश्वर होयतो दांननां देणवालो पण ईश्वर अनें लेणवालो पण ईश्वर कहीय. लेणवाला अनें देणवाल.में कोई भेद नही होय. ईश्वरं आपही अपणे पासेंभ दांन लीधो तो दांन दियानें पुन्य किसको हुवा एहथी दांन तथा पुन्य व्यर्थ गया. वली मारनवाला पण ईश्वर अनें मर्णवाला पण ईश्वर कहवो जोइये तो ईश्वरं ई-

श्वरनें मारयो तेहनो पाप केहनें लाग्यो. धणी पण ईश्वर अनें चोर पण ईश्वर तो ईश्वरनो माल पण ईश्वरें चोरयो कहवाय तो चोरीनी तालाश क्या वास्ते करवी जोईयहे. पुन्ये करी स्वर्गमा गयो ते पण ईश्वर तथा पाप करी नर्कें गयो ते पण ईश्वर तो स्वर्गमा पुन्यवान जाय अनें नर्कमा पापी जाय एम कहवो व्यर्थहे ए उपरथी तुम्हारो बोलवो असंभवितहे. जगतमां एक ईश्वरहे एम जे कहणा ते असत्यहे. घट २ प्रत्यें जीव जुदा २ है अनें तिनोंकी करणी पण जुदी जुदी जाणवी और जो सर्वमां एक ईश्वर होयतो जात कुल राजा तथा चंडालनी भिन्नता कही न जोय. कोई श्रेष्ठ तथा नष्ट कहैवाय नही. एक पुन्यकरे तेहनों फल सर्वनें होवा चाहिय तिमहिज कोइयक पाप करे तेहनो फल पण सर्वनें होतो जोय. एकें भोजन करयासें सर्वनी तृप्ती थइ जोइय. एक नर्क गामी थयांथी सगला नर्कें जावा जोईय. एक स्वर्ग गामी थयाथी सर्व स्वर्गमा जावा जोईय तेमतो देखनेमें आता नही जे करे ते भोगवो एहवो स्पष्ट देखायहे तो सर्वमा एक ईश्वर केम केहवाय इसवास्ते एम कहवो ते समीचीन नही बहुधा जीव जुदा जुदाहे एम कहवो योग्यहे ॥ १९ ॥

प्रश्न २० मा--जगत ईश्वर रचितहे (उत्तर) हे मूढमति जो जगत ईश्वरकृत होयतो जितनें ईश्वरना भक्तहे

ते बहुधा सुखी होवा जोइये तेमतो देखनेमें आवतो न-
ही. हिंदू तथा मुसलमान बहुधा सुखी तथा दुखी देखा-
येहै तेहनें पण पूछिये तब एम कहेजे सहु पोता पोतानी
करणी प्रमाणें पामेंहै एम कही छूटे. तो तुम्हारा कहेवा
प्रमाणें तो सुख तथा दुःखनों देनवाला कर्मविना कोई
बीजो होवो जोईय तेहनो तो विचार थई शके नही इ-
सवास्ते हे मूर्खबुद्धी इस जगतनो कोई कर्ता नही. येतो
स्वभाव सिद्धहै अनें जीव जैसा करणीकरै तिसप्रमाणें सु-
ख तथा दुःख भोगवेंहै ॥ २० ॥

प्रश्न २१ मा—सुख दुःखनों देनवाला ईश्वरहै इम मा-
नवो जोईये (उत्तर) सुख दुःखनों कर्ता आपणी आत्मा-
है तोहिज सुख दुःखनों भोक्ता जाणवो इसवास्ते सुख दुःख-
नो देनेवाला दुसरा कोई नही इम समझना चाहिये ॥२१॥

प्रश्न २२ मा—प्रत्यक्ष प्रमाणवादीका पुन्यसें श्रेष्ट
फल होय अनें पापसें नेष्ट फल होय ते हमको प्रत्यक्ष
दृष्टिये दिखाओ तो मानियें (उत्तर) जैनमतीका—पुन्य
पापतो सुक्ष्म पुद्गल समूहरूपहै जेम शब्दना पुद्गल का-
नप्रत्ये आवे तब शब्दनो ज्ञान थायहै इसवास्ते ते सत्यहै
पण आवता देखाता नही तेम सुगंध दुर्गंध प्रमुखना पु-
द्गल इंद्रियों आवता देखाता नही पण तेहनो ज्ञान था-
येहै तिससें अनुमान प्रमाणवडे जणायहै कि ये सत्यहै

तथा शरीरमां वायू अनें गरमी प्रमुख जे होयहै ते रोग-
ना उदयथी जाणयामें आवेहे पण प्रत्यक्ष देखनेमें आव-
ता नही तेम पुण्य तथा पापनो फल भोगव्याथी जान-
णेमें आवेहै तिनाका पुद्गल छद्मस्थ दृष्टिये आवे नही॥२२॥

प्रश्न २३ मा—बाल्यावस्था तथा तरुणा वस्थामां जी-
व एकसा है तो ते दोनों अवस्थामें विज्ञान विद्या भाषा
तथा पराक्रम एक शा किम नही (उत्तर) हे मतपक्षी
जिम वृक्षना बीजोमां अनेक वृक्ष फल फूल प्रमुख रह्या
हुवाहे परंतु जेहवा साधना मिलेहै तेहवो उद्भवतानें पा-
मेंहे जेमके क्षेत्रनी भूंमी अछीहोय अनें पाणीनी पण
बराबर साह्यता होय तो कृषी फलरूप धान्यनी उत्पत्ति
अछी होयहे तेम सब अछी साधनोवडे जेम २ शरीर-
नी वृद्धि थती जाय तेम २ भाषा पण प्रौढतानें पामती
जाय है पण अवस्थांतर थयाथी बुद्धि बाहरथी आवती
नही किंतु शरीरनी पेठे बुद्धिनो अवस्थांतर थयाहे सर्व
आतमगुण आत्मानें विषे सदा भरयाहीहै पण योग्य स-
मयमां उद्भव मात्र थायहै कोई बाहिरथी नवा आवता नही.
जिम मयुरना शरीरमां अनेक रंग रहेहुयेहै पण समय
पामे प्रगट थाय है तेम बाल्यावस्थामा पण सर्वगुण स-
त्व भावेहे परंतु जेहवीरीतें पुरष बलवान छता धनुष्यवि-
ना बाण चलाववामां समर्थ थाय नही. गलोल गोफण

तथा खडग प्रमुख वहुधा शस्त्र तेओना उपकरणथी उपियोगी थायहे तेविना थाय नही तेम जीवपण शरीरोपकरण अवस्थारूप सामग्रीथकी सर्व कार्जसाधी शकेहै. चेतनमा कोई फेर नही चेतन सदा सर्वदा एकसाहै ॥ २३ ॥

प्रश्न २४ मा—जगत्र सर्व ईश्वर कृत होनेसें सर्व पदार्थमां तथा सर्व जीवामां ईश्वरनी कलाहे (उत्तर) हे विकलमती जो एम होयतो घट, पट, स्थंभ, कुंभ शास्त्र तथा भाषा इत्यादिक अनेक वस्तूनो ज्ञान कोईक जीवनेहै अनें कोईयक जीवनें नही. जे जीवने ज्ञेय पदार्थनों ज्ञानहै तेहनेतो हे मुढमती तूं ईश्वरनों अंश मानेहै तो श्वान, शूकर, राशभ. मांजर, व्याघ्र प्रमुख श्वापद चौपद जीवोनों घटादिक पदार्थोना ज्ञान नही तेहथी तेओमां क्या ईश्वरनो अंशनही. तुमतो जिव मात्रनें ईश्वरनो अंश मानोहो तेहनें कमी आवशे जे ईश्वरनो अंश होयते अज्ञानी किम होय. एहथी जगतनों कर्ता ईश्वर आविवेकी ठरेहै. अनें सर्वमा ईश्वरनी कलाहे ए बोलवो पण असत्यहे क्यांकि जो इम होयतो सर्व एकशा ज्ञानी होवा जाय तिमतो देखनेमें आवता नही इसवास्ते ये बातही मिथ्याहै. तमे सर्व जीव ईस्वरना अंशारूपहे एम जे तुम मानोहो ते पण अज्ञानी होवाने लीये मानोहो तिसव.स्ते संभवे नही ॥ २४ ॥

प्रश्न २५ मा—ईश्वर भक्त वत्सलहै अने स्वेछाथी जन्म धारण करेहे (उत्तर) हे मतपक्षी जो एम होयतो भक्तोनें शरीर छोडता वेदना किम होयहै अनें स्वजनादिकना कोलाहल शब्दो सांभलीनें भक्तोनें वत्सल भावकरी आयुष्य वृधि केम नही करतो. मरणादिक क्रियातो सर्व ईश्वरना स्वाधीनहे ए आदि विचार करता तुम्हारो बोलणों फोकटरूपहे. जीव तो कर्मनें आधीनहे जिम के कफ रोगें प्राणी तेहने स्वाधीन थई जायहै तिम जीव विषे पण जाणी लेवो जन्म मरण पण कर्माधीन तेहने जे धारण करे तिसका ईश्वर क्या ते तो संसारी जीव कहिवाय ईश्वरतो कर्मसें मुक्त होयेहै इसवास्तें तुम्हारा कहण सर्वथाही व्यर्थहे ॥ २५ ॥

प्रश्न २६ मा—पृथ्वी जल अग्नी वायु आकाश यह पंच भूतोसें उत्पन्न हुवा जे विश्व ते महाप्रलयना समये पोताना कारण पंच महाभूतोमां लीन होशे अनें पंच महाभूतो ईश्वरमां लीन होशे (उत्तर) हे रूढमती जो एम होयतो ईश्वर जडा मिश्रत थाय अनें ते समल तथा निर्मल ए बे अवस्थावालो केहवाशे तो केवलज्योति स्वरूप पणों किहां गयो. जे पंच महाभूतोथकी जगतनी उत्पति थई कहोहो ते तो सदा शाश्वतहै तिनोंमा पृथ्वी आप तेज वायु ये चारे भूतो पोत पोतानी क्रिया करेहै क्योंकि

वनस्पति अनें जंगम त्रसनी उत्पत्ति करेहे ते क्रिया वि-
ना थाय नही एहवीरीतें तो जीवनी छे खांन शास्वत सदा
कालहै तो प्रलय ते किसका थया. जो इम कहशोके पंच
महाभूतो जगत विनिर्मित क्रिया करता नही तब तो ते
भूत द्रव्यरूप कथन मात्रज ठेरेशे अनें हरेक वस्तु पोता
पोताना गुणविना रहे नही एहवो नियमछे वली जो कह-
शोके भूततो अणंत कालनो है तबतो संसार पण अणं-
त कालनो ठेरशे तेहनी उत्पति तथा प्रलय केम कहवाय
एतो जैसाहै तैसाही है वली ईश्वर मनसा वाचा कर्मणा
करी रहितहे अनें एकथी अनेक थाउं एहवी मननी इछा
थई तो जगतनी उत्पत्ति करी एवं वाक्योंनो परस्पर
विरोधहै क्योंकि प्रथम वाक्यप्रमाणें ईश्वर इछा रहित ठेरे
है अनें बीजा वाक्यमां इछासहित कह्योहै एवा पूर्वापर
वचन विरोध होनेसें तुमारो बोलनो सर्व असमीचीनहै॥२६॥

प्रश्न २७ मा--सर्व वस्तुना ईश्वर अधिष्ठानहै ईश्वरनी
इछासें कृत तथा अकृत्य सर्व थायहै (उत्तर) हे कुम-
मती जो एम हे तो घट ते पट केम हुतो नही पण के ते-
म थायनही क्योंकि घटनों कारण मृतिकानों पिंडहै
तिससें घटही बणोहै पिण पटादिकार्य नही हुता तिमही
पटनो कारण तंतुहै तिससें पटही होयहै पण घटादिक
दूसरे कार्यनी उत्पति होय नही जो एम होतो नही होय-

तो कारणसें कार्य होयहे ये प्रवृति मिथ्या थाय इसवास्तें ईश्वरना आधिष्ठितपणा तले ईश्वरनी इच्छाथी कृत तथा अकृत्य सर्व होयहै ये तुम्हारो कहेणो सर्व व्यर्थहे ॥२७॥

प्रश्न २८ मा—सर्व कार्यनें कर्ता ईश्वरहे ऐसा चाहीय के नही (उत्तर) इम मानवा नही होय, ए बचन असत्यहै. ईश्वर विषे कर्तृत्व होयज नही. घट, पट, कृषि, संग्राम, खान, पान, दान, मान, स्नान, तप, जप, क्रिया, बिनय तथा व्यावच इत्यादिक सर्व पदार्थोंनां कारण काल १ स्वभाव २ नियत ३ पूर्वकृत ४ तथा प्राक्रम ५ ये पांच जेम के तंतुना पुंजमेसें पटनी उत्पति होवानो जे समय ते काल समझना १ तंतुनां पुंजनें पटनी उत्पती करवानी जे योग्यता ते स्वभाव जानवो २ तंतुना पुंजमांथी पटनी उत्पतिनों जे निमित थयो ते नियत जिसो होणोंथो तिसो थयो ३ और शुभाशुभ कर्म ते तंतु उत्तम् वा मध्यम होवे ४ जे उद्यम करवो ते पराक्रम जानवो ५ ये पांचमांथी एक ओछो होयतो वस्तुनी उत्पाति थईसके नही ये पांचना समुदायथी घट पटादिक सर्व कार्योंनी उत्पाति थायहे ये शुद्ध मत जानवो ॥२८॥

प्रश्न २९ मा—ये संसार रामें उत्पन्न कर्योहै (उत्तर) हे रूढमती आजगत रामनों उपजाव्यो होयतो जे आर्य पुर्ष हमेशा रामनी भक्ति करेहै, पुराण वांचेहै, वंदनां

करेहै तथा एकादशी आदिक व्रत राखेहै तिनोंको सर्व द्रव्यादिक संपत्ति मिलवी जोय दूसरोकों विपत्ति होवी जोये तेमतो देखनेमें आवता नही. दूसरे अनार्य देशके पुर्प पण महा संपत्तिवान देखनेमें आवेहै तिसवास्ते संसारि जीव सर्व कर्माधीनहै एसो जिन मतसें समझना चाहीये ॥ २९ ॥

अथ पांच वादीयोकी चर्चा लिख्यते ॥ शार्दुल विक्रीडितं वृतम् ॥ पंचांधा गजमीक्षणार्थं गमनम् । कर्णाद्री शुंड द्विजः॥ पुछान् विकगजो वदंत्यथमथो । दृष्टो मयाकी दृशः॥ सूर्प्यास्थि भकदलय योग्रवल वच्च । कुर्विवावंजड़ा ॥ स्तद्वत्यंचमतानु गागदयुता । सर्वांग वादी जिनः॥ १ ॥ अस्यार्थः—पांच आंधं एक नगरमे हाथी देखणे गए एक अंध मूंड ऊपर हाथ फेरे १ बीजो पग ऊपर फे २ तीजो दांत ३ चौथो कान ऊपर ४ पांचमो पूंछ ऊपर ५ पाछे आवी एकठा मिल्या हाथीनो स्वरूप कहिवा लागे आपसमें एके पूछ्यो हाथी केहवोछे तिवारे एक बोल्यो केलिना थडा सरीखो १ बीजो कहे देहरानो थंभ सरीखो २ तीजो कहे मूसला सरीखो ३ चोथो कह्यो सूपडा सरीखो ४ पांचमो कह्यो बली वंश सरीखो ५ हम माहो माही वाद करिवा लाग्या. एक कहे तूं खोटो, बीजो कहे तूं खोटो इण दृष्टांते आंधोनी परे पंच मतके धणी

अहंकारना लीधा एक एकनें धर्म करी माने अथवा का-लादिक एकमननें विषे पंचे बोल परमाण करे ते जिन-मतमें मानीये ॥ दोहा ॥ मत खटछे संसारमें ॥ पंच अंध समान ॥ एकएक वस्तू ग्रहे ॥ जिनमतसर्व प्रमाण ॥ १ ॥ अथ पांच वादी नाम ॥ कालवादी १ सुभाववादी २ नि-यतवादी ३ पूर्वकृतवादी ४ पुरषाकारवादी ५ ये पांचवादी माहिथी कालवादी बोल्या एक कालहीज प्रधानछे ते कि-म. काल जे जोबन आवे गर्भधरे, काले जन्मे बोले चाले, असाढ श्रावणणी खेती होय बिदामादि मेवा होय इत्यादि वस्तु स्वभावे निपजे १ ॥ हिवे कालवादी प्रतें स्वभाव वादी बोल्या सर्व वस्तु स्वभावे निपजेछे ते किम. मोर पं-ख किणें चीतर्योछे, गाय भेंसने किण तिखो सिखायोछे, बच्चा बच्चीने चूंघनो किणं सिखायोछे, पंखीने आलणा क-रणा किणे सिखायोछे, मनुषना बच्चा जनमता पगे न चा-ले, तिर्यंचना चालेछे, तिर्यंचना बच्चा जनमता थण पकडे, मनुषना बच्चा जनमता थण किम न पकडें, एक साथें दो स्त्री निज निज पुर्ष संजोगमें हुई एक स्त्री गर्भ धरे ए-क स्त्री गर्भ न धरे, किसीने कोडीया उबाली कोईक उंधी-पडी, एक काल माहीं न्यारी न्यारी भांत किम पडीछे, एक भांत क्यों न पडी इत्यादि सर्व वस्तु स्वभावे परगमीछे २ ॥ हिवे स्वभाववादी प्रते नियत वादी बोल्या सर्वजीव नि-

यतेंनं वसछे ते किम. कोई क्रोधी स्वभाव ते खिम्यावान नही, खिम्यावान ते क्रोधी स्वभाव नही, कोमल स्वभाव ते सक्त स्वभावनही, सक्त स्वभाव ते कोमलस्वभाव नही. सरल स्वभाव ते कपटी स्वभाव नही, कपटी स्वभाव ते सरल स्वभाव नही, लोभी स्वभाव ते निरलोभी नही, निरलोभी स्वभावछे ते लोभी नही इम अनेक भावना अनेक स्वभाव थाय ते नयित स्वभाव होण हार यें सव भाव ईछा जीवाने वसथी ३ ॥ हिवे नियतवादी प्रते कर्मवादी बोल्या सर्व जीव कर्मनें वसछे ते किम. एकइंद्री १ वेइंद्री २ तेइंद्री ३ चउइंद्री ४ पचेंद्री ५ इनामाही जीव उपजे. तस मरीनें थावर माहि उपजे, थावर मरीनें तस माहि उपजे, राजा मरीनें रंकहोय रंकमरीनं राजाहोय, ब्राम्हणथी चंडालहोय चंडालथी ब्राम्हणहोय, स्त्री मरी पुर्ष थाय पुर्ष मरी स्त्री थाय, सत्रु मरी मित्र होय मित्र मरी सत्रु होय जे लिख्ने होणाहारछे. एकेंद्री मरी नारकी देवता क्यो नही होय, दलिद्रीनें संपत क्यों नही होय, रंक ते राजा क्यों नही होय. चोरी जारी कर्म करी शुलीयादि क्योंहोय, निलोंभी ब्रम्हचारी सत्यवादी क्यों पूजीये, ते भणी शुभाशुभ कर्म भोग्या विना छूटे नही ते कारणे कर्म करताछे ४ ॥ हिवे कर्म वादी प्रतें पुरपाकार वादी वोल्या जो परदेसी राजाने महा पाप कीधा ते पाप किहा भोगन्यी जो जो

पाप जीवने कीया ते पाप सवी भोगे सूं छूटें तो जीवका छुटकारा किम थाय. ते भणी पुरषाकार ज्ञान दरसन चारित्र तप करी निकाचित कर्म अनेक भावना शुभ पिण भोगवी निंद्यत कर्म खपावीनें मोक्ष जाय. जे कर्म बलीया होयतो जीवनें मुक्त जावा नही देता ॥ यतः ॥ अठ विहं पीय कम्मं अरी भूये सव जीवाणं ते कम्मेण अरिहंता अरिहंता तेण वुच्चंति ॥ १ ॥ ते माटे पुरषाकार प्राक्रम उद्यम बिना कोई कार्ण नीपजे नही ५ ॥ ए पांच वादी आपआपनी सरधा थापता पारकी सरधा उथापता थका तिवारे पछे जैनमती बोल्या भो वादी तुमे पोताना पक्ष थापता थका पारका तुम्ह पक्ष उथापता थका जासूं तुम्ह मिथ्या वादहो तिवारे पांचो वादी बोल्या तुम स्युं सरधोछो तिवारे पछे ते जैनमती बोल्या हमतो पांचोंनें सरधेछं तिवारे पछें ते ५ वादी बोल्या पांचोना स्वभाव न्यारा न्याराछे, घणां फरक दीसे ते किम पांचोनें खरा मानो तिवारे पछे ते जैनमती बोल्या हम आपआपने ठाम बीच उनानुं जुदा जुदा राखुंछूं ते माहोमाही विरुद्ध न थाय. ते कहेछे प्रथम काल लब्धी बिना मोक्ष रूप कार्ज सिद्ध न थाय एतले काल सर्वनो कार्णछे जे काले कार्य होणहारछे ते कार्य तेण वेला थाय ते कहेछे, कोईक जीव समकित पामी तथा बिरत पा-

मीनें पडे ते किम काल पका नही, देशऊणा अर्द्ध पुद्-
गल संसारथकी तिरवानों वाकी रह्यो ते माटे ए काल
समवाय अंगीकार कह्यो तिवारे सिष्य पूछेछे अभव्य
मोक्ष क्यों नही जाय तिवारे (उत्तर) कहेछे जे अभ-
व्यनो काल मिले पिण अभव्यमें सुभाव मिले नहीं जिम
नारकीनों खिम्या करवानों स्वभाव नही १ पुगलियानें
क्रोध करवानों स्वभाव नही २ देवतानें विरत करवानों
स्वभाव नही ३ वांझरी गायनें दूध देवानों स्वभाव न-
ही ४ तिण कार्ण मोक्ष जाय नही एतले काल स्वभाव
दोनों कार्ण चाहिज्ये तिवारे कहे जे भव्यनो तो मोक्ष
जायवानो स्वभावछे तो सर्व भव्य मोक्ष क्युं नहीं जाय
तिवारे कहेजे नियत निश्चे समकित गुण जाग्या मोक्ष
जाय एतले काल १ स्वभाव २ नियत ३ ए तीन का-
रण मान्या तिवारे कहे जे समकित आद कार्ण श्रेणक
ने थी मोक्ष क्यों गयो नही (उत्तर) पूर्व कृत कर्म घ-
णाथा वा पुरषाकार पराक्रम उदम करयो नहीं तिवारे
कहे जे सालभद्र प्रमुख घणाने उद्यम कीधो (उत्तर)
पूर्व कृत कर्म खपाया नहीं तिणे पाचो समवाय मिल्या
कार्य सिद्ध थाय तिहां कोई पूछे जे मरुदेवी मातानें चा-
र कार्ण मिल्या पिण पुरषाकारतो कोई कीधो नही ति-
वारे कहेजे अलप कर्म माटे शुक्लध्यान क्षपक श्रेणि च-

ढवानें उद्यम कीधो ॥ यतः ॥ कालो साहावय नियइ पुवकयं पुरष कारणो पंच समवाय समतं एगंत होइ मिछतं ॥ १ ॥ इतिपांचवादीमतम्प्रश्नोत्तरम् ॥

॥ श्रीशांतिनाथायनमः ॥

॥ अथ स्तवन सिझाय संग्रह लिख्यते ॥

॥ अथ चोबीसी स्तवन लिख्यते ॥

परमेष्ठी पद सुमरकेजी, गाउं जिन चोवीस ॥ मन वच काया जोगसेंजी, ध्यान धरूं निसदीस ॥ सुज्ञानी वंदू जिन चोबिस ॥ १ ॥ जंबू नामा दीपमेजी, खेत्र नर्थ प्रधान ॥ आर्यदेश उत्तम कुलेजी, जनमे श्री भगवान ॥ सुज्ञा० ॥ २ ॥ तीर्थंकर पदवी लहीजी, थापें तीरथ चार ॥ सिंह बकरी भेला रहेजी, न करे क्रोध लिगार ॥ सु० ॥ ३ ॥ ऋषभ आजित संभव प्रिभूजी, कंचन वरणी देह ॥ इंद्र सेव तुमरी करेजी, धर तन मनसें नेह ॥ सु० ॥ ४ ॥ अभिनंदन अतिसे घणीजी, चोंतीस गुण भंडार ॥ सुमति २ बुध निरमलीजी, पदम वर्ण दिनकार ॥ सु० ॥ ५ ॥ एक सहस अट लक्षणजी, धारक श्री सोपाल ॥ चंद्रप्रभु तन सोभताजी, चंद्र वर्ण परकास ॥ सु० ॥ ६ ॥ सुवदनाथ नोमा प्रिभुजी, पुष्फदंतु और नाम ॥ श्वेत वर्ण शुभ ध्यानथी जी, शीतल शीतल स्वाम ॥ सु० ॥ ७ ॥ श्रंशनाथ ज्ञानी प्रभुजी,

तारक जगदाधार ॥ वासपूज श्री जिनतणाजी, रक्त वर्ण सुखकार ॥ सु० ॥ ८ ॥ विमल अणंत जिन नित नमुंजी, धर्म धर्म सुखदाय ॥ शांति कुंथु चक्री हुएजी, दोदो पदवी पाय ॥ सु० ॥ ९ ॥ अर्ह जिन ग्रह खंड धणीजी, पद भोगी सुखकार ॥ जथाख्यात चारित्रथीजी, पोहोंचे मुक्त मकार ॥ सु० ॥ १० ॥ मल्लिनाथ श्री जिणतणाजी, नीला वर्ण शरीर ॥ मुनिसुव्रत तन स्याम-छेजी, सागर जेम गंभीर ॥ सु० ॥ ११ ॥ नमीनाथ श्री जिनतणाजी, सोरण वर्ण वखांन ॥ अरिष्टनेमि तन साम-लाजी, सोहे सुंदर वांन ॥ सु० ॥ १२ ॥ पारस तन नीला कह्याजी, चौवीशमां वृधमांण, सोरण वर्ण सुहांम-णांजी, सिंह लक्षण पग जाण ॥ सु० ॥ १३ ॥ सोला सोरण आठनेंजी, चार प्रकारें वर्ण ॥ ये चौवीसों जिण तणाजी, होजो भव २ सर्ण ॥ सु० ॥ १४ ॥ चौवीसें श्री जिणतणाजी, गणधर संख्या जाण ॥ चौदासें बावन नमुंजी, भाव भगत हिए आण ॥ सु० ॥ १५ ॥ अणां-त चौवीशी वंदनेंजी, और वीसो भगवांन, वंदूं में सिर नामनेंजी, अणंत गुणोंकी खांण ॥ सु० ॥ १६ ॥ रूप-राज कहे कर जोडनेंजी, जिण वांणी मनधार ॥ जे सरधें भवि भावसेंजी, ते पावे भवि पार ॥ सु० ॥ १७ ॥ विक्र-म सम्वत वरततांजी, वडनत ग्राम चौमास ॥ उन्नीसें के

बावनेंजी, श्री जिन गुण प्रकाश ॥ सु० ॥ १८ ॥ इति

॥ अथ श्री बीस विद्यमान जिन स्तवन लिख्यते॥

श्री सिमंदर जिन साहिबाजी, प्रणमु तुम्हारे पाय ॥ जुगमंदिर मुझ ऊपरेजी, महेर करो महाराय ॥ जिणस्वर धन धन तुम अवतार॥ १ ॥ बाहु स्वामी सेवतांजी, जनम जनम दुःखजाय ॥ सुबाहू जिण ध्यावतांजी, संकट दूर पुलाय ॥ जि० ॥ २ ॥ ध्यांउं श्री सुजातनेंजी, स्वयंप्रिभु भगवान ॥ रूषभानन वंदू सदाजी, धर तन मनसें ध्यांन ॥ जि० ॥ ३ ॥ अणंतवीर्ज सूर-प्रभुजी, बिशाल प्रभु जिनराय ॥ वज्रधर चंद्राननेंजी, चंद्रबाहू सुख दाय ॥ जि० ॥ ४ ॥ भुजंगम ईश्वर प्रिभुजी, नेमीश्वर जग तात ॥ वीरसेन महाभद्र नेंजी, देवजस विख्यात ॥ जि० ॥ ५ ॥ अजित वीर जिण दीपताजी, माहाविदेह-मे जाण ॥ दोय कोड़ के केवलीजी, जघन कहे भगवान ॥ जि० ॥ ६ ॥ लाख चौरासी पुर्वंजी, आयु तणे परिमान ॥ काया पांचसै धनुषनीजी, दीपे सोरण बांन ॥जि०॥ ७॥ जंबू दीपना भरथमेंजी, ध्यांउं तुम्हारो ध्यांन ॥ सुखदायक तुम नांमसेंजी, होवै परम कल्यांण ॥ जि० ॥ ८ ॥ जंबूदीपनें धात्रकीजी, पुष्कर अर्ध बखांन ॥ महाविदेह इण पंचमेंजी । वीस कहे भगवान ॥ जि० ॥ ९ ॥ इनका ध्यांन धरूं सदाजी, मन वचनें करि काय ॥ मनुप जन-

म मुफलो करूंजी, श्री जिनना गुण गाय ॥ जि० ॥ ॥१० ॥ सवंतउन्नींसें जाणीयेजी, विक्रम अवधि प्रमान ॥ सेंतालिस ऊपर कह्याजी, लिसाढ ग्राम परधान ॥ जि ॥ ॥ ११ ॥ चतुरमासमें बीनतीजी, एम कहै ऋषिराय ॥ देव धर्म गुरु आदरोजी, भव भवमें सुख दाय॥जि०॥१२॥॥ इति

॥ अथ बीस विद्यमान जिन स्तवन लिख्यते ॥

सतगुरू चरण कमलें नमीजी, गाउं जिन गुण बीस ॥ केवल ज्ञानी देवनेजी, सुर नर नामें सीस ॥ कृपा-निध वंदू श्री जिन वीस ॥ १ ॥ श्री मंदिर जिन केव-लीजी, सुण मोरी अरदास ॥ भव सागरमें तारीयेजी, वंछित पूरो आस ॥ कृ० ॥ २ ॥ जुगमंदिर स्वामी त-णोजी, सरण ग्रहूं सुखकार ॥ मे अपराधी ताहिराजी, कीजे मुझ निस्तार ॥ कृ० ॥ ३ ॥ बाहु स्वामी गुणवं-तनाजी, ध्यांन सदा हितकार ॥ तुम गुण मुझ मन न-हीं वस्याजी, तो मैं रुल्या संसार ॥ कृ० ॥ ४ ॥ सुबा-हु मुझ मनवस्याजी, आवें शुभ परिणाम ॥ वीतराग पद वंदताजी, वीतराग हो स्वाम ॥ कृ० ॥ ५ ॥ सुजा तप्रभु शिव सुखकरूजी, तीर्थ चारो माहि ॥ उत्तम पद पा-मैं सहीजी, इनमें संसे नाहि ॥ कृ० ॥ ६ ॥ स्वयं प्रभु संसारनाजी, तारक हैं भगवान ॥ मैं शेवक आसा करूं-जी, कब लहुं पद निर्वाण ॥ कृ० ॥ ७ ॥ ऋषभानन

जिन देवनेजी, निर्मल केवलज्ञान ॥ भव्य जीवाने बोध-वाजी, जाणें उग्या भाण ॥कृ० ॥ ८॥ अणंतवर्जि प्रभु-ता घणीजी, पाई पुन्य प्रमाण ॥ तुमरा ध्यांन प्रभावथी-जी, पामें नित कल्याण ॥ कृ० ॥९ ॥ सुर प्रिभु सूरता पणेजी, जीते कर्म कठोर ॥ अणंतबली प्रभु तुम हुएजी, ऐसा देव न और ॥ कृ० ॥ १० ॥ विशालप्रभु महिमा तणोजी, कहत न आवे पार ॥ तुम गुण गातां भावसें-जी, होवे मुक्त निस्तार ॥ कृ० ॥ ११ ॥ वज्रधर किरपा घणीजी, कीधा पर उपगार ॥ जिण वाणी भव तारणी-जी, यह सदा सुखकार ॥ कृ० ॥ १२ ॥ चंद्रानन शुभ ध्यांनसेंजी, मोहनी कर्म खपाय ॥ भवजीवांको देशना-जी, देवे शिव सुखदाय ॥ कृ० ॥ १३ ॥ चंद्रबाहु सब पापनाजी, त्याग किया व्रतधार ॥ सुर नर गुण गावें सदाजी, धन जिन तुम अवतार ॥ कृ० ॥ १४ ॥ भुजं-गम प्रभु तूम सुनोंजी, निज सेवग अरदास ॥ दीन जा-न कृपा करोजी, मेटो भव दुख पास ॥ कृ० ॥ १५ ॥ ईश्वरप्रभु ईश्वर पणोंजी, दजि गुण भंडार ॥ में जानुं तुम नामसेंजी, आतमको निस्तार ॥ कृ० ॥ १६ ॥ नेमीश्व-र दृढता पणेंजी, तुम नामें मुक्त होय ॥ वो दिन सुफ-लो जानमुंजी, तुम दर्सण जब जोय ॥ कृ० ॥ १७ ॥ वीरसेन प्रभु वीरताजी, तुम समरणथी थाय ॥ तप जप

संजम पालकेजी, अजर अमर पद पाय ॥ कु० ॥ १८॥
महाभद्र जिन जीतियाजी, कर्म अरी दुःखदाय ॥ निर-
मल कीधी आतमाजी, केवलज्ञान उपाय ॥ कु० ॥१९॥
देवयस प्रभु जश घणाजी, कहेत न आवे पार ॥ तुम ज-
श जपतां भावसेंजी, सुफल होय अवतार ॥ कु० ॥ २०॥
अजितवीर सेवक तणीजी, अर्ज सुणो महाराय ॥ जनम
जरा दुःख मरणनाजी, टालो संकट जाय ॥ कु० ॥ २१ ॥
श्री जिन महाविदेहमेंजी, जेवंता जिन वीस ॥ ऋषराज
कहे में नित नमूंजी, चर्ण कमल निशदीस ॥ कु० ॥२२॥
संवत उन्नीसें उणसठेंजी, कावठ ग्राम चोमास ॥ आसो-
ज शुक्ल दशमी तिथेंजी, रवविारी परकाश ॥ कु० ॥ २३ ॥

॥ अथ उपदेश सिझाय लिख्यते ॥

मनुष्य जनम पाया भला, पाया आरज देश ॥ उत्तम
कुल अरुतन भला, पूर्व पुन्य विशेश ॥ म० ॥ १ ॥
समदृष्टी जे देवता, भावें भावत सार ॥ मानुस भव जो
हम लहे, पालें धर्म उदार ॥ म० ॥ २ ॥ चोरासीमें भ-
रमतां, पाया दुःख अपार ॥ अबतो धर्म संभालले, यह
परभवको आधार ॥ म० ॥ ३ ॥ नरकतणी वेदन महा,
कहत न आवेजी पार ॥ अनंत काल तिर्जंचनी, गत दु-
खनी दातार ॥ म० ॥ ४ ॥ मनुष्य तणी गति ऊजली,
पाई सुख दातार ॥ धर्म करी सुरगति लही, तिहां नित जे

जै कार ॥ म० ॥ ५ ॥ अमर कहे कर जोडकें, थए हमोर देव ॥ कोन धर्म तुम आदरयो, और किस गुरुकी सेव ॥ म० ॥ ६ ॥ जिन अज्ञा धर्म आदरया, जाण्या तत्व बिचार ॥ सुगुरु चर्ण नित भेटीया, तिनथी इहां अवतार ॥ म० ॥ ७ ॥ सुख भोगें तिहां देवता, सहेस जो दस हजार ॥ बर्स जाय मृत्यु लोकके, तब इक नाटिक त्यार ॥ म० ॥ ८ ॥ जिन भक्ति बहु सुरकरे, सरधें श्री जिण वांण ॥ मनुष्य जनम भव लेइके, पावें, पद, निरवांण ॥ म० ॥ ९ ॥ संवत उन्नीसें बावनें, भाद्रव पूरण मास ॥ बडसतमें ऋषरायजी, यंह उपदेश प्रकाश ॥ म० ॥ १० ॥

॥ अथ दशार्णभद्रकी सिझाय लिख्यते ॥

मानी जगमें हुं बडा, मुझ सरिखा कुण आज ॥ सोलेसें मेरे रहे, सेवामें महाराज ॥ मा० ॥ १ ॥ राजा हुं इक देशका, और छत्री मेरी जात ॥ श्री वीर प्रभुके दरसणको, चाहताहुं दिन रात ॥ मा० ॥ २ ॥ खबर हुई जब रायको, और हुकम दिया फुरमाय ॥ गज घोडे रथ पालखी, लीजे वेग सजाय ॥ मा० ॥ ३ ॥ दशारण राजा तिहां, और मनसें करे विचार ॥ मुझसम और न को अबे, प्रभुको वंदनहार ॥ मा० ॥ ४ ॥ ऐसी सोच्या में करूं, और गालूं सबका मान ॥ प्रभुके दरसनमें करूं, साथें ले सुलतान ॥ मा० ॥ ५ ॥ अ-

सवारी सजकर चल्या, और राजा वंदन काज ॥ तीनं प्रदक्षणा देइनें, वंदे श्री महाराज ॥ मा० ॥ ६ ॥ वंदना कर इम चिंतवे, धन्न चरम मुझ आज ॥ जो प्रिभु तुम दरसन करूं, हुं सबमें शिरताज ॥ मा० ॥ ७ ॥ सुरपति अपने ज्ञानसें, और मान उतारन काज ॥ अयरापत गज लेइकें, वंदे जिन महाराज ॥ मा० ॥ ८ ॥ बत्तीस विध नाटक किये, और कुंवर एकसो आठ ॥ कुंवरी रूपे सोभती, पूर्व पुन्यके ठाठ ॥ मा० ॥ ९ ॥ क्या जाऊं अब नगरमें, और न तजुं मान लिगार ॥ एह ऋद्धि पाई घनी, इम ले संजमभार ॥ मा० ॥ १० ॥ कर जोडी इंदर कहे, और धन २ थे महाराय ॥ हारया में तुम शक्तिथी, चरणां शीस नमाय ॥ मा० ॥ ११ ॥ इंद्र गया सुर लोकमें, और मुकति पहोंचे स्वाम ॥ ऋषराय कहे मुनि प्रते, कीजे नित परिणाम ॥ मा० ॥ १२ ॥

॥ अथ परदेशी राजाकी सिझाय लिख्यते ॥

सुगुरू ध्यान मनमें धरीजी, वंदु श्री वृधमान ॥ अमलकंपामें आवीयाजी, श्री जिन पुन्य परिमान ॥ क्रियावंत श्री जिन धर्म प्रधान ॥ १ ॥ सुरियाभज सुर लोकथीजी, ज्ञान सहित दित ध्यान ॥ दरसन कर नाटक कीयाजी, जीत कल्प परिमान ॥ क्रि० ॥ २ ॥ गौतम पुछे स्वामनेजी, कहो श्री भगवान ॥ स्वेतंबका नगरी तणांजी, पर-

देशी राजान ॥ खिम्यावंत धन परदेशी राय ॥ ३ ॥ सुरकंता सुरकंतनेंजी, नारी पुत्रसुजान ॥ चित नामें भाई तिहांजी, राजाका परधान ॥ खि० ॥ ४ ॥ अधरमी मिथ्यामतीजी, सरधा खोटी जान ॥ जीव काया एकी कहेजी, नही परभवको मान ॥ खि० ॥ ५ ॥ सावत्थीमें एकदाजी, जितशत्रु नृप पास ॥ भेट देई तब भेटीयाजी, चितकेशी हुलास ॥ खि० ॥ ६ ॥ बारे व्रत तिन धारकेजी, अर्जकरी परधांन ॥ स्वेतंबकासे ल्यावयाजी, परदेसी प्रतें आंन ॥ खि० ॥ ध० ॥ ७ ॥ जोडे अश्व जो अर्थमेंजी, देखो तेहनी चाल ॥ मंत्री लाया बागमेंजी, बैठा तब भूपाल ॥ खि० ॥ ध० ॥ ८ ॥ म्हारा बाग किण रोकीयाजी, कथा कहै विख्यात ॥ चितप्रते कहे आवयियाजी, गुरु कही मननी बात ॥ खि० ॥ ध० ॥ ॥ ९ ॥ पापी दादा नरकसेंजी, समझावे मुझ आय ॥ नारी लंपट बांधीयोजी, जिम नही छोडे राय ॥ नरेस्वर जुदा मांन जीव काय (ये टेर) ॥ १० ॥ दादी जो सुर लोकसेंजी, आई नही महाराय ॥ दुरगंध कारण जाणियेजी, नवा सनेह लगाय ॥ न० जुदामानजीवकाय ॥ ११ ॥ कुंभीसें जीव किम गयाजी, जैसें कूटा गार ॥ मांही थकी वाजा तणेंजी, निकले शोर तिवार ॥ न० ॥ १२ ॥ कुंभीमें जीव आवीयाजी, छिद्र न पडिया कोय ॥ लोह तपा-

थो अगनमंजी, अगन समाई जोय ॥ न० ॥ १३ ॥
तरुण चलावे बानेंजी, बाल जीव सम जाण ॥ टूटी
धनुप न चालेजवी, युद्धी वल नही जाण ॥ न०॥ १४॥
तरुण विरध जिम भारनेंजी, जो वल धारक होय॥ टीका
डोरी टूटतांजी, तिम वृद्ध जीरण जोय ॥ न० ॥ १५ ॥
कंठभींच नर मारियोजी, वच्यां न ढंगो होय ॥ वाय भरी
खाली कीयांजी, चांम भाथडी जोय ॥ न ॥ १६ ॥
दोय खंड कर देखीयाजी, जीव नही मुनिराय ॥ अगनी
अरणी काठमेंजी, खंड न दीसे ते काय ॥ न० ॥
॥ १७ ॥ जीव दिखावो काढनेंजी, वायु न दीसे भूप ॥
गुरु लघु ये केमेंजी, दीवे कसो रूप ॥ न० ॥ १८ ॥
जुदा जीव काया कहीजी, सरघा सुध वखान ॥ पिण
जिमके तिम रेहणयोजी, धर्म कठिण अमगान ॥ न०
॥ १९ ॥ लोह वाणीया भारिखाजी, मत होव भूपाल ॥
मुणी विरत घोर लीएजी, जाण्या धर्म विशाल ॥ न०
॥ २० ॥ राणी सुभट खजानमजी, चौथे भाग जो दान
॥ वेले वेले पारनेंजी. जाव जीव लग जाण ॥ खिम्यावंत
धन परदेशी राय ॥ ए टेर ॥ २१ ॥ स्वारथ विन राणी
हिवेजी, फंद कुवरसे वात ॥ राजहुकम स्वतावीयेजि,
करो पिताजी घात ॥ खि० ॥ २२ ॥ मोन कर्यो नें उ-
ठीयोजी. मानी नही तिण वात ॥ राणी मन चिन्त्या

थईजी, करूं रायनी घात ॥ खि० ॥ २३ ॥ करजोडी मस्तक नमीजी, महेर करो महाराय ॥ तेरवे वेले पारणोंजी, मुज घर कीजो आय ॥ खि० ॥ २४ ॥ तालकूट भोजन विषेजी, करतां पाम्या भेद ॥ खिम्या भाव मन धारकें-जी, आण्यो नही तन खेद ॥ खि० ॥ २५ ॥ समता भावें ऊठकेजी, अथिर जान संसार ॥ चार आहार त्यागे तिहांजी, धारे सरणा चार ॥ खि० ॥ २६ ॥ राणी दर-सनके मिसेंजी, गलें अंगूठा दीध ॥ सुधरमा सूर लोकमें-जी, जाई वासा लीध ॥ खि० ॥ २७ ॥ रायप्रसेनीमें कह्याजी, श्री जिन बहु विस्तार ॥ महा विदेहमें पाम-सीजी, मुक्त तणा पद-सार ॥ खि० ॥ २८ ॥ संवत उ-न्नीसें कह्याजी, उपर अधिक पचास ॥ शुकलपक्ष तिरियो-दशीजी, प्रथम असाढ जो मास ॥ खि० ॥ २९ ॥ ये गुण परदेशी तणांजी, वडसतमें ऋषराज ॥ भाव धरीनें वरणव्याजी, पूरण वंछित काज ॥ खि० ॥ ३० ॥

॥ अथ उपदेश लावणी लिख्यते ॥

तू सुन सतगुरूके वचन सुमत कर प्राणी, यह भव जीवांके काज कही जिनवाणी ॥ च्यार गतीके माहि मनुष देह पाई, करले श्री जिनधर्म सुफल कर भाई ॥ समता रसको चाख दया मनलाई, जिन मारगका सार समझ सुख दाई ॥ छोडि कुमतका संग सुमत कर प्राणी ॥ अ-

व एक चित्तकर सुनों जिनेस्वर वाणी ॥ १ ॥ तीर्थंकर-के समोसरन सुर आवें, फूलोंके वादल करी फूल वरसावें ॥ रायप्रसेनकि बीच अचित तुमजानों, मत कीजो कोई संक दया मन आणो ॥ राजादिक जो दरस करणको आवे, फूलादिक को त्याग दरस मनभावे ॥ बहु सुत्रांके माहि कहे सुध ज्ञानी ॥ अब० ॥ २ ॥ अब सुनों परशन व्याकरणकी शाखे, पहिलें हिंस्याद्वार श्री जिन भाखे जहां छ कायाके आरंभमें हो कारन, नहीं भाखें जिनराज येही कही तारन ॥ दया तणे कहे नाम साठके ताई. पूजा भाव और जगा दयाके माई फिर हिंस्या करकें धर्म कहे अभिमांनी ॥ अब० ॥ ३ ॥ मनुष्यगती परधान कहे जिनदेवा. इंद्रादिक जिनकी आण करतहे सेवा ॥ साध श्रावकका धर्म इहांसें पावे, जनम मरणका दोश सभी टलजावे ॥ सूरथितका कुल कर्म अविरती जाणो, तीनों गतिमें नहीं मुक्त कही जिन वानो ॥ पालो सुध विरती समकितमें हित आनी ॥ अब० ॥ ४ ॥ अब धन्न दिवस वो होय कोनसामेरा. जिण आज्ञा अराध मिटे भवफेरा ॥ रूपराज कहे कर जोड सुफ भव भवमें, यह जिनवरजीका धर्म लहुं इस जगमें ॥ ए संवत उन्नीसें उपर वयालीस जानो. आसोज सूदीकी तीज शुक्र दिनमानो ॥ यह कही लावनी सरधा दृढ मन आणी ॥ अ० ॥ ५ ॥ इति

॥ अथ उपदेश लावणी दुसरी लिख्यते ॥

तू सुण सतगुरुकी शीख समझकर प्राणी, अब कर तू सरधा शुद्ध परख जिणवांणी ॥ यह उत्तम नरभव पाय द्वादशांगवांनी, निश्चकर मन धार विरत हित आंणी ॥ विन समकित पाये जीव अणंत भव धारयो, नव ग्रिवेगकें मांहि लीयो अवतारो ॥ जिहां इकतीस सागर लगे सुख वहु पायो, फिर बिन समकीत सुर लाख चौरासी आयो ॥ १ ॥ राग द्वेषके जीत कहै जिणदेवा, सुर नर इंदर जास करत हे सेवा ॥ जिन बचनोके परिमांण धर्म सुध पालो, समकितको कीजे शुद्ध कुमति तुम टालो ॥ निरमल सरधा धार प्रदेशी राया, राणीनें दीधा जहेर क्रोध नही आया ॥ तव समकितका रस शुद्ध भावसें पायो ॥ फिर० ॥ २ ॥ देव धर्म गुर पायो राय उदाई, समकितमें परधान दया मन भाई ॥ वैरीनें मारया व्रत पेसहके माही, नही आएयो मनमें क्रोध करी दिढताई ॥ कर्म तणा ये दोष दोप नही केहना, ऐसा उजला ध्यांन हुवा तव तेहना ॥ तिरथंकर गोत वांध तव सुर भव पायो ॥ फि० ॥ ३ ॥ विन समकित मिथ्यात मतीकी करणी, कही सूत्रांके मांहि संक नही धरणी ॥ उत्राधनकें बीच देखो सुध ज्ञानी, नोमें अध्येनकें मांहि कथा जिन ध्यानी ॥ जो मास २ का कष्ट करे अज्ञानी, तो विन जिन

श्रद्धा परिमान नही सुध प्राणी ॥ तिन करणीके परमान देव सुख पायो ॥ फि० ॥ ४ ॥ ये मनुष जनमको पाय सुफल मन करे, तु सुने नरकोंके दुःख उनोंसे डरे ॥ गरभावासका वास महा दुःखदाई, सो जाने जिनदेव कहुं कहांतांई ॥ यह संवत उनीसें ऊपर छयालिस जानों, बड-सत ग्रामके बीच चोमासा मानो ॥ रूपराज कहे अब प्रभु चरणें चित लायो ॥ फि० ॥ ५ ॥ इति

॥ अथ उपदेश लावणी तिसरी लिख्यते ॥

इस जगमें फिरता समकित दुरलभ पाई, पिण मु-नी घनाने सरधा विरले आई ॥ दोष अठारे दूर करे जिण देवा, निग्रंथ गुरुकी कीजो मनसे सेवा ॥ नय नि-क्षेपा परिमान कही जिन वाणी, बहुश्रुति मुनिराय अप-इया जाणी ॥ इनका सतगुरुसें भेद लहो तुम भाई, इस जगमें फिरता समकित दुरलभ पाई ॥ १ ॥ ज्ञान भानसें देख धर्म सुधताई, थिर श्रद्धा करके कुमत तज भाई ॥ सुध चारित्रसें रोक कर्मकी नाली, तप कर पूर्व करम इंधन कर जाली ॥ जब चेतन तज करम अचल पद पावे, ज-नम जरा और मरण रोग टल जावे ॥ तज अब मनमें क्रोध कुमत चिकलाई ॥ इ० ॥ २ ॥ जब हो अधिका पाप नरकोंमें जावे ॥ और पुन्य अधिक देव गतिमें नर पावे ॥ दगा कपट कर पशु जोन दुख पायो, जब बढयो पुन्य तब मानुष कुलमें आयो ॥

सतगुरुकी कर सेव सुनो जिन वानी, धर्मतणी कर परिख दया मन आनी ॥ अब देशविरत वा सरब विरत कर भाई ॥ इस० ॥ ३ ॥ समकित सरधा सहित विरत जो पाले, ते पशु जोन और नरक तणा दुःख टाले ॥ उत्तम आरज देश मनुष कुल पावे, आराधिक होकर देव लोकमें जावे ॥ ए विक्रम संवत् उन्नीसे उनचासें ॥ बडसतग्रामके माहि कीया चौमासें ॥ यह धर्म तणा उपदेश कहे ऋषराई ॥ इस० ॥ ४ ॥ इति

॥ अथ बारे भावना सिझाय लिख्यते ॥

जीवरे तू शील तणों कर संग ॥ ए देशी ॥ सकल करमदल जीतकेरे, सिद्ध थए जिणराय ॥ भाषी बारे भावनारे, भविजननें सुख दाय ॥ जीवरे तू भावन ज्ञान विचार॥ १ ॥ तन धन जोवन थिर नहीरे, अथिर कहे भगवान ॥ इन ऊपर मुरछा मतिरे, रंग पतंग समान ॥जी० ॥२॥ मात पिता सुत कामनीरे, इनमें सरण न कोय ॥ चारो सरणें सरधतारे, निश्चें कुगती न होय ॥ जी० ॥ ३ ॥ नर सुर पशू भव नारकीरे, इन चारो गतिमें होय ॥ पुन्य पाप करमां वशेरे, हीये विचारी जोय ॥ जी० ॥ ४ ॥ धन धान्यादि कुटंब जेरे, कोई न साथी होय ॥ पुन्य पाप निज भोगवेरे, सदाही अकेलो जोय ॥ जी० ॥ ५ ॥ जीव देहमें रम रह्यारे, ज्यों फूलनें वास ॥ ममता तज

समता करोरे, सुध चेतन परकाश ॥ जी० ॥ ६ ॥ सरीरअपावन जार्णीयरे, गरज न धर मनमाहि ॥ शुद्ध आतमा धर्मथीरे, कहे श्री जिनराय ॥ जी० ॥ ७ ॥ करम आवे अविरत थीरे, तेहनों आश्रव नाम ॥ जैसे नाव छिद्रमेरे, पाणी आवणरो काम ॥ जी० ॥ ८ ॥ समकित सूधी विरतसेरे, आवत रोके कर्म ॥ ज्ञानी भाखे एहवारे, संवर मोटा धर्म ॥ जी० ॥ ९ ॥ पूर्व कर्म कीया घणारे, कहेत न आवे पार ॥ द्वादश तपसे निरजराजी, करतां कर्म निवार ॥ जी० ॥ १० ॥ धर्म विना इस जीवकोरे, कोई न राखनहार॥नरककूप दुःख जाणकेरे, धर्म ग्रहो सुखकार ॥ जी० ॥ ११ ॥ स्वर्ग मृत्य रचना कहीरे, और पाताल विचार ॥ इनमें अनादि वायरारे, घन तन दधि आधार ॥ जी० ॥ १२ ॥ उत्तम कुल संगति मुनीरे, श्रद्धा पावन सार ॥ दुर्लभ श्री जिनवर कहीरे, मनुष्य जनम मति हार ॥ जी० ॥ १३ ॥ ए कही बारे भावनारे, भावतां जनम सुधार ॥ ऋषराज कहे सुध भावसेरे. करनाल नगर मंझार ॥ जी० ॥ १४ ॥ संवत उन्नीसे कहारे, उपर अधिक पचास ॥ तब कही बारे भावनारे, भविजण पूरण आस ॥ जी० ॥ १५ ॥ इति

अथ १२ भावना नाम—अनित्य भावना १ असरण भावना २ संसार भावना ३ एकत्व भावना ४ अन्य

भावना ५ अशुचि भावना ६ आश्रव भावना ७ संवर भावना ८ निर्जरा भावना ९ धर्म भावना १० लोक-स्वरूप भावना ११ बोध दुर्लभ भावना १२ ॥

॥ अथ उपदेशी सिझाय लिख्यते ॥

जुहारा जाटका गढ जैपूर बांकोरे ए देशी ॥ मनुष्य जमारो पायकेरे, सेवो श्री अरिहंत ॥ निर्ग्रंथ गुरु मन धारिकेंरे, दया धर्म ल्यो तंत ॥ मिथ्यामत त्यागजो, सुध समकित धारोरे ॥ १ ॥ धर्म बिहुंणी जे घडीरे, बीती निरफल होय ॥ धर्म सहित जे मानवीरे, सुफल जनम सू जोय ॥ मि. ॥ २ ॥ अल्प पुन्यें नर ऊपजेरे, पंचम दुखमे काल ॥ धर्म पावें ते दोहिलोरे, पडें मोहके जाल ॥ मि. ॥ ३ ॥ कुविसनमें राता रहेरे, सेवे चार कषाय ॥ दान शील तप किम रुचेरे, सुध्द भाव नही भाय ॥ मि. ॥ ४ ॥ निंद्या विकथा ना तजेरें, पाप अठारें सेय ॥ सुमता मनसें बीसरीरे, कुमतामे चित देय ॥ मि. ॥ ५ ॥ तन धन जोबन पाइकेंरे, करे अति अभिमान ॥ परभवका तसु डर नहीरे, ते मूरख अज्ञान ॥ मि. ॥ ६ ॥ थोडी उमरके बीचिमेंरे, बांधे गाढा पाप ॥ दुरगतिमे ऊपजेरे, भोगे बहु संताप ॥ मि. ॥ ७॥ नर त्रियंच अरू नारकीरे, किलमुखी देव सुजान ॥ चारो गतिके दु ख-कारे ॥ श्री जिन कीया व्याख्यान ॥ मि. ॥ ८ ॥ दोष

न दीजे पर सिरेरे, भोगवता दुःखकार ॥ शुभ करणी कर निरमलीरे, परभवको आधार ॥ मि. ॥ ९ ॥ मात पिता सुत भारजारे, उनका स्वारथ प्यार ॥ परभव साथी को नहींरे एक धर्म हे सार ॥ मि० ॥ १० ॥ विक्रम संवत आवीयारे, उन्नीसेंसें तीस ॥ रूपराज कहे जिन धर्मथीरे, पूरे मनकी जगीस ॥ मि० ॥ ११ ॥ एह सेनपुर ग्रांममेरे, कह्यो तिहां सुविचार ॥ सुणतां भणतां भावसुंरे, आतमको निस्तार ॥ मि० ॥ १२ ॥ इति

॥ अथ अष्टादश दोष सिझाय लिख्यते ॥

श्री जिन मुझनें पार उतारो ए देशी ॥ परमेष्टी पद मनमें धारी, कहुं में देव स्वरूप ॥ दोष अष्टादश रहित जिनेस्वर, सुंदर रूप अनूप ॥ चतुर नर वीतराग जिन सेवो, जिम उत्तम पद तुम लेवो ॥ च० ॥ १ ॥ दांन १ लाभ २ भोग ३ उपभोगजु, ४ वलवीरज ५ अंतराय ॥ पांचो क्षयकर अणंत वलीके, सुरनर सेवें पाय ॥ च० ॥ ॥ २ ॥ हास्य ६ रता ७ रति ८ भय ९ दुगंछा १० ॥ शोक ११ नही लवलेश ॥ मनमथ १२ मोह १३ अज्ञानरू १४ निद्रा १५ ॥ नही अव्रित १६ जनेश ॥ च० ॥ ३ ॥ राग १७ द्वेश १८ येह दोष अठारह, त्याग श्री जिनराय ॥ और देव ऐसा नही जगमें, जो अरिहंत पदवी पाय ॥ च० ॥ ४ ॥ अणंत ज्ञान दरशनके धारी, चा-

रित्र तपजु अणंत ॥ अणंत बली तारक जग स्वामी, नय नं-
जन भगवंत ॥ च० ॥ ५ ॥ नरक देव तिर्यंच मनुष्यनी,
आवा गमन निवार ॥ अविचल पदवी सिद्धतनी तुम,
पामी अधिक उदार ॥ च० ॥ ६ ॥ ऋषराज कहै कर-
नाल नगरमे, देव सरूप वखान ॥ जिन अज्ञा आराधि-
क प्राणी, पावें शिवसुख थांन ॥ च० ॥ ७ ॥ इति

॥ अथ नमी रायऋषीकी सिझाय लिख्यते ॥

बीतराग पद सेवीयेजी, कीजे सुध परिणाम ॥ न-
मीराय मिथला तणोंजी, भोगे सुख अभिराम ॥ सोभा-
गी धन धन नेमीजी राय ॥ १ ॥ पूर्व कर्म उदे थकी-
जी, उपनो दाघजु रोग ॥ नारी तब चंदन घिसेजी, शी-
तलताके जोग ॥ सो० ॥ २ ॥ शौर शद्व सुणतां थ-
कांजी ॥ उपज्यो मन वैराग ॥ जीव सदावे एकलोजी, इम जा-
णी जग त्याग ॥ सो० ॥ ३ ॥ जाती सुमरण ज्ञानसें-
जी, लीधो संजम भार ॥ नगरी वाहिर आवीयाजी,
तनसें ममत निवार ॥ सो० ॥ ४ ॥ शक्रइंद्र तिहां आ-
इकेंजी, प्रसन वहु विध कीध ॥ निर्मल बुद्धी जोगसेंजी,
उत्तर सगले दीध ॥ सो० ॥ ५ ॥ अहो अश्चर्य वे ता-
हिराजी, खिम्यावंत गुण गेह ॥ करजोडी शिर नामकेंजी,
गयो सुधर्म तेह ॥ सो० ॥ ६ ॥ नेमी ऋषी तप सा-
धकेंजी. मुक्त गए महाराय ॥ जनम मर्ण दुख टालकें-

जी, अजरअमर पद पाय ॥ सो० ॥ ७ ॥ श्री जिन वाणीठे खरीजी, उत्राध्येन विचार ॥ नोंमें अध्येन सा-खीयाजी, श्री जिनबहु विस्तार ॥ सो० ॥ ८ ॥ संवत उन्नीसे इक्यावनेंजी, कावठ नामें ग्राम ॥ नेमी गुण चौमासमेंजी, कहे ऋषिरायजी स्वाम ॥ सो० ॥ ९ ॥ इति

॥ अथ उपदेश सिझाय लिख्यंत ॥

जिनेश्वर तारकहे ए देशी ॥ ए नरभव उतमहे, उत्तम श्री जिन सेव ॥ ए टेक ॥ उत्तम आरज देश कुल उत्तम, उत्तम नर भव पायो ॥ इंद्री पांचों पामी उत्तम, उत्तम दीर्घ आयो ॥ ए नर० ॥ १ ॥ उत्तम देह निरोग अवस्था, और उत्तम चतुराई ॥ उत्तम साधू उत्तम वांनी, उत्तम समकित पाई ॥ ए० ॥ २ ॥ उत्तम विरती उत्तम करणी, करतां सुधग-ति जावे ॥ मनुष जनम सुफलो करि भविजन, तब उत्तम पदवी पावे ॥ ए० ॥ ३ ॥ तिर्थंकर चक्री अरु हलधर, केशव पदवी पावे ॥ केवली साधु श्रावक नरनारी, मोक्षलोक सुख कहावे ॥ ए० ॥ ४ ॥ एसी एसी पदवी उत्तम, मनुष तणा भव पावे ॥ केवलज्ञानी धर्म अराधी, जनम मरण मिटावे ॥ ए० ॥ ५ ॥ एसा मनुष तणा भव उत्तम, श्री जिनराज बतायो ॥ चार गतिमें भमता भमता, अब उत्तम नर भव पायो ॥ ए० ॥ ६ ॥ क्रोध मान माया ध-रु ममता, इनसें प्रीत हटावो ॥ ज्ञान दरसन चारित्र पदवी

तप, इनसें कर्म खपावो ॥ ए० ॥ ७ ॥ संवत उन्नीसें अ-
धिक पचासें, करनाल नगर चौमास ॥ ऋषराज कहे श्री
जिन सेव्या, पूरे मनकी आस ॥ ए० ॥ ८ ॥ इति

॥ अथ दस लक्षण मुनिके फूलनें दोहे सहित लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥ शिवसुख दायक जिन चर्ण, नमतां होये क-
ल्यान ॥ मुनिके दश लक्षण कहुं, द्यो बाणी वरदान ॥ १ ॥
फूलणा ॥ अजी द्यो बाणी वरदान क, मानजो शेवगनें
सुखकारीजी ॥ तुमरी कीरत अब मुखसें गांउं, सुनो सहु
नर नारीजी ॥ अष्ट कर्मको जीत लीए तुम, हुए शुद्ध आचा-
रीजी ॥ ऋषिराज कहे में बे कर जोडुं, तुमहो गुणके धारीजी
॥ २ ॥ दोहा ॥ अतिसे चौतिसके धणी, बाणी गुण पें-
तीस ॥ एक सहिस अठ लक्षणें, तुम तन सोभे ईस ॥ ३ ॥
फूलणा ॥ अजि तुम तन सोभे ईस क, निसदिन सुरपत
सेवा सारेंजी ॥ इस भवद धिके बीच तुम्हारो, नाम तणों
आधारेजी ॥ तिरण तारण तुमहो जगस्वामी, कीजो खे-
वा पारेजी ॥ ऋषिराज कहे में तुम परसादे, कहुं धर्म सु-
विचारेजी ॥ ४ ॥ दोहा ॥ वीतरागके वचनमें, दस वि-
ध धर्म बखांन ॥ इनका अब वर्णन करूं, सुनों चतुर दे
ज्ञांन ॥ ५ ॥ फूलणा ॥ अजी सुनों चतुर दे ज्ञान क,
ध्यांनजो निरमल होवे थाराजी ॥ तुम धर्म भावना धरकर
मनमें करे ज्युं सुद्ध विचारा जी ॥ नरक देव तिरजंच मनुषमें,

ममतां अंत न पाराजी ॥ ऋषराज कहे अब धर्म रतन कोई,
पुन्य उदेसे धाराजी ॥ ६ ॥ दोहा ॥ मनुष जनम अब
पायके, सुफल करे हित आंन ॥ दुरगतिके दुःखसें डरो,
तजो मिथ्या अज्ञांन ॥ ७ ॥ झूलना ॥ अजी तजो मि-
थ्या अज्ञांन क, ज्ञांन दिलअंतर माहि विचारोजी ॥ ए
नरभव रतन चिंतामणि सम, तुम कुमति संग मतिहारोजी
॥ सुमति भावसें विरत अराधो, अरु समकित तो सुख
कारोजी ॥ ऋषराज कहे धन जिन वाणीको, जिसतें हो
निस्तारोजी ॥ ८ ॥ दोहा ॥ तारण तिरण मुनीसरू,
छह कायके नाथ ॥ पांचों इंद्री वसकरे, टाले मोह मिथ्यात
॥ ९ ॥ झूलना ॥ आजि टालें मोह मिथ्यात कि, साथ कुटं-
बका तिन त्यागाहै ॥ तन मनको वस कर धरे ध्यांन, मुनि
मुक्त पंथ चित लागाहै ॥ दया करतहै सब जीवांकी, तिन
कुमतीसें मन भागाहै ॥ ऋषराज कहे धन ते मुनिवरको,
जो मोह नींदसें जागाहै ॥ १० ॥ दोहा ॥ पहिला लक्षण धर्म-
का, सुनो सबी चितलाय ॥ मुक्ति पंथ साधन तणा, कह्या
श्री जिनराय ॥ ११ ॥ झूलणा ॥ अजी कह्या श्री जिनराय
क, लायक भव जीवांके ताईजी ॥ क्षमा धर्मकी करी बडाई,
प्रथम सुनिके माहिजी ॥ कठिन वचन लोगोंके सुनके,
क्षमा करे सुखदाईजी ॥ ऋषराज कहे धन ते मुनिवरको,
शिवरमणी जिन पाईजी ॥ १२ ॥ दोहा ॥ क्रोध अगन,

शीतल करे, धरे क्षमा परिणांम ॥ आतम गुण अराधता पामें अविचल ठाम ॥ १३ ॥ झूलणा ॥ अजी पामें अविचल ठाम क, तामस मनका जिन सब माराहै ॥ अरि मित्तर जानें एक सरीखे, तब समण बिरत गुण धाराहै ॥ जो कंचन कांच बराबर जानें, चाकर ठाकर एक साराहै ॥ ऋषराज कहे यह प्रथम लक्षण, धारत मुनि सुखकाराहै ॥ १४ ॥ दोहा ॥ दूजा लक्षण मुनि तणा, कह्या आप भगवान ॥ श्रोता जन सुणजो हिवे, मनमें धरिके ज्ञान ॥ १५ ॥ झूलणा ॥ अजी मनमें धरकें ज्ञान क, जानत जिन बानीको सुखदाईजी ॥ तो तजें जगतसें लोभ महामुनी, ते जानें दुरगतिकी साईजी ॥ मात पिता नारी सुत ममता, त्यागे चितनें समझाईजी ॥ ऋषराज कहे मुनिवर ते बैठे जिन वचनों चित लाईजी ॥ १६ ॥ दोहा ॥ अब तीजा लक्षण कहुं, आगमके परिमाण ॥ भविजन इक चित सांभलो, जिन वाणी हित आण॥ १७ ॥ झूलणा ॥ आजि जिन वाणी हित आणक, मानत भव भवमें सुखकारीहै ॥ अथिर जाण संसार जगतसें, मुनिमहाव्रत धारीहै ॥ जिन आज्ञा परिमांण करी मुनि, कपटाई दूर निवारीहै ॥ ऋषिराज कहे किया सरल भाव जिन, आतमको निस्तारीहै ॥ १८ ॥ दोहा ॥ भविजन कपटाई तजो, सरल भाव मन राख ॥ धर्म ध्यांन चित लाईय,

जिन वाणी रस चाख ॥ १९ ॥ झूलणा ॥ अजि जिण वाणी रस चाख के, भाखत मुखसे मीठी वाणीजी, कर्म मैल को दूरकरतहै, मुनि आतमनें हित जाणीजी ॥ तप जप करिकें जो पूर्व भवके, कर्म हटें दुखदानीजी ॥ ऋष-राज कहे तब ते शिवपुर पावे, जगमें उत्तम प्राणीजी ॥ २० ॥ दोहा ॥ चौथा लक्षण मुनि तणा, कह्या श्री भगवंत ॥ भविजन अब तुम सांभलो, राखी मन येकंत ॥ २१ ॥ झूलणा ॥ अजी राखी मन एकांत क, भ्रांत सब दूर करो भव प्राणीजी ॥ मद आठ तजो मन अ-पनेसें, ए खोटी गतिके दांनीजी ॥ मान त्यागके विनै करें मुनी, ते जगमें कहीये ज्ञानीजी ॥ ऋषराज कहे जे शिवपद साधें, मुनिवर आतम ध्यानीजी ॥ २२ ॥ ॥ दोहा ॥ सुध संजम मुनिवर धरे, करें नही अभिमान ॥ ज्ञान दर्शन चारित्र तप, इनमें राखे ध्यांन ॥ २३ ॥ झूलणा ॥ अजी इनमें राखें ध्यांन क, दान अभे जिन दीनाहै ॥ करुणा करते है सब जीवांपर, तत्व धर्म जिन लीनाहै ॥ ज्ञानादिक गुण का मद नहीं आणें, किरिया-मांहि परवीनाहै ॥ ऋषराज कहे मुनि अथिर जान जग, उत्तम कार्य कीनाहै ॥ २४ ॥ दोहा ॥ पांचों इंद्री व-सकरे, पालें सुद्ध आचार ॥ तिनका लक्षण पांचमां, सु-नो सहु नर नार ॥ २५ ॥ झूलणा ॥ अजी सुणों सहु

नर नार क, तारक मुनी महा विरत धारीजी ॥ बसतर पातर हलके राखे, त्यागें बहुमोला भारीजी ॥ राग द्वेश और हास्य रतारित, जिन मोह दशाको ढारीजी ॥ ऋषिराज कहे धन उनकी करणी, जिन तनसें ममत निवारीजी ॥ २६ ॥ दोहा ॥ ब्रह कायाके नाथजी, बड्ठा लक्षण धार ॥ नांम कहुं अब तेहनां, भविजन सुनों बिचार ॥ २७ ॥ झूलणा ॥ आजि भवजन सुणो बिचार क, सार वचन जग सत बांनीजी ॥ झूटी भाषा टाले मुनिवर, सत्य कहे हितु आणीजी ॥ कोई नर खड्गादिक कर मारे, होकर दुष्ट अज्ञानीजी ॥ ऋषिराज कहे तहुं झूट न बोले, दोष असतका जानीजी ॥ २८ ॥
॥ दोहा ॥ अब कहुं लक्षण सातमां, सुणो सबी हित लाय ॥ संजम सतरे भेदका, पालें श्री मुनिराय ॥ २९ ॥ झूलणा ॥ आजि पालें श्री मुनिराय के, राज मुकतिका ते मुनि पावेजी ॥ घर ध्यांन जतनसें संजम साधें, जीवदया मन भावेजी ॥ पांचो थावर चार तरसका, संजम जिनजी बतलावेजी ॥ ऋषिराज कहे ये नव प्रकारें, संजम तो मन भावेजी ॥ ३० ॥ दोहा ॥ जतना बसतर पात्रकी, लेइ धरें मुनी आप ॥ पडिलेहन विध आदरे, संजममें मन थाप ॥ ३१ ॥ झूलना ॥ अजी संजममें मन थाप के, आप मुनि चित्त न लावेजी ॥ परिठवणे

की विध सुध देखे, दया धर्म मन भावेजी ॥ पात्रादिकको आठो विध करके, देखत धर्म कहावेजी ॥ ऋषिराज कहे मन वचन काया करी. ए सतरा संजम थवेजी ॥ ३२ ॥ दोहा ॥ अब मुनि लक्षण आठमा, सुणिये मन घर ज्ञान ॥ बारा भेदी तपतपें, तिनका करूं वखांन ॥ ३३ ॥ फूलणा ॥ अजि तिसका करूं वखांन क, ग्यानवांन मुनी तप साधेंहै ॥ धरे नही देहीपर ममता, जिन अज्ञा आराधेंहै ॥ पांचों इंद्री जीत करे बस मन, तो ज्ञान धर्म अति बांधेंहै ॥ ऋषिराज कहे ते मुनिवर जगमें, शिव पदवीको लाधेंहै ॥ ३४ ॥ दोहा ॥ अनसन और अनोदरी, भिख्याचरी परिवांन ॥ रसपरित्याग सुनि करें, काय क्लेश वखांन ॥ ३५ ॥ फूलणा ॥ अजी काय कलेस वखांन कि, पडीसिलेहन जाणोंजी ॥ प्राछित और विनय वियावच्च, सिझाय ध्यांन मन आणोजी ॥ द्वादस मा तप विउसग मुनिवरका, श्री जिनराज वखानोजी ॥ ऋषिराज कहे ए तप अराधे, पावे कोड कल्याणोंजी ॥ ३६ ॥ दोहा ॥ नौंमा लक्षण अब कहुं, सुणिये भविजन लोग ॥ ज्ञान धर्म चितमें वसे. जब मुनी साधे जोग ॥ ३७ ॥ फूलणा ॥ अजि जब मुनि साधे जोग कि, भोग तजे दुख दाईजी ॥ समकित ज्ञान करीरहु जाणं. जो किरिया जिन वतलाईजी ॥ आप तिरं औ

रोंको त्यारें. समकितका रस पाईजी ॥ ऋषिराज कहे जो ज्ञान सहित मुनि, शिव रमणीको जाईजी ॥ ३८ ॥
॥ दोहा ॥ दसमें लक्षणमें मुनी, पाले शील रतन ॥ सब विरतामें मोटको, वशकर राखें मन्न ॥ ३९ ॥ झूलणा ॥ अजी वसकर राखें मन कि, तन साधक गुण धारीहै ॥ निंद्या विकथा दूर तजें मुनि, सुध मारग सुबिचारीहै ॥ सुध बुध करिकें बहु जीवांकी, दुरगति तो निवारीहै ॥ ऋषराज कहे ये दश लक्षण मुनिके, आतम गुण हितकारीहै ॥ ४० ॥ दोहा ॥ दश लक्षण मुनि झूलणे, दोहे सहित वखान ॥ कहे निरपडे ग्राममें, जिन अज्ञा परिमाण ॥ ४१ ॥ झूलणा ॥ अजि जिन अज्ञा परिमाण, ज्ञान करि समझे उत्तम प्राणीजी ॥ असुभ करमको टालि होवे, ते नर अमर बिमांणीजी ॥ संवत उन्नीसें चुम्मालिस भादो, शुकल तीज वखानीजी ॥ ऋषिराज कहे भव जीव अराधो, श्री जिणवरकी वाणीजी ॥ ४२ ॥ इति

॥ अथ अणंत चौवीसी लिख्यते ॥

दोहा ॥ अरिहंत साधने आरिया, उवझाया सव साध ॥ ज्ञान दर्शन चारित्र तप, ये नौं पद आराध ॥ १ ॥

नव पदका धरूं ध्यान सुमर सत गुरुको ॥ में नित नित करूं प्रणाम सदा जिनवरको ॥ श्री ऋषिभ अ-

जित संभव अभिनंदन स्वामी ॥ श्री सुमत पदम सोपा-
रस चंद्रप्रभु नामी ॥ श्री सुवद शीतल श्रंस वासपूज
गुणधांमी, श्री विमल अणंत धर्म श्री शांत शुकल परि-
णांमी ॥ श्री कुंथ अरहे मल्लि मुनसुव्रत जन हित कामी
नमी नेम पारस माहावीर जगतमें नामी ॥ अब वंदू
मन वच काय सदा श्री जिनको ॥ न० ॥ मैं० ॥ १ ॥
जंबू दीपनें महाविदेहके स्वामी, श्री सीमंदर अरु जुगमं-
दिर जिन नामी ॥ बाहु सुबाहु जिनवर केवलज्ञानी, सु-
जात स्वयंप्रभु वंदू निरमल ध्यांनी ॥ श्री ऋषभानन अ-
णंतवीर्ज जिन राया, श्री सूरप्रभु विशाल महा सुख दा-
या ॥ अब वंदू वज्रधर श्री चंद्रानन को ॥ न० ॥ २ ॥ चं-
द्रबाहुजी भुजगम गुणधारी, ईश्वर नेमीस्वर नाम सदा
जैकारी ॥ श्री वीरसेननें महाभद्र मन भाया, देवजस्स श्री
अजित वीर महाराया ॥ वंदूं दोय कोड मुनीस्वर केवल-
ज्ञानी, जघनपदे यह जान कही जिन सत बानी ॥ अब
मैं वंदूं चौदासे बावन गणधरकों ॥ न० ॥ ३ ॥ उतक्रिष्ट
पद मांहि एकसोसत्तर, वंदूं मैं जिनराय भाव करी एकत्तर
॥ केवलज्ञांनी नव कोड नमुं मन लाए, जघन नमुं दोय
कोड सहिस मुनिराए ॥ उतकृष्ट नव सहिस कोड अण-
गारे, ढाईद्वीपके मांहि सदा सुखकारे ॥ अब मुद्ध भाव
करी ध्यांउं च्यार सर्णको ॥ न० ॥ ४ ॥ श्री वीतराग जिन

देव देव सुखकारो, तुम निर्ग्रंथ गुरुको जान दया मनधारे ॥ यह धर्म तणो परभाव अमरपद पावो, अब एम कहै ऋषिराय भाव सुद्ध भावो ॥ यह सम्वत उन्नीसे उपर पचपन जानों, कशबे बिडोली माहि चौमासा मानों ॥ यह आनंद मनसें गुन गाया श्री जिनको ॥ न० ॥ ५ ॥ इति

॥ अथ चौबीसी स्वतन लिख्यते ॥

सुभुपत आई मिल्याहो, वज्रसु जंघ उदार ॥ ए देशी ॥ ए नरभव आई मिल्याहो; पूर्व पुन्यज सार ॥ दुख संकट दूरे टल्याहो, पाम्यो धर्म उदार ॥ ए टेर ॥ ऋषभ अजित जिन ध्यावताहो, होवे शुभ परिणामे ॥ संभव अभिनंदन प्रभुहो, आनंद कारी स्वामें ॥ सुमत पदम सुरु मन वस्योहो, वीतराग भगवानें ॥ सुपारस चंदा प्रभुहो, चंद्र सरीखो ध्यानें ॥ ए न० ॥ १ ॥ सुवधनाथ शीतल प्रभुहो, वंद्या शीतल भावे ॥ श्रेयांस वासपुजजीहो, सिमरया शिवसुखपावे ॥ विमल अणंत अरिहंतजीहो, अणंत गुणोंके धामें, धर्मनाथ अरु शांतिजीहो, साताकारी स्वामें ॥ ए न० ॥ २ ॥ कुंथनाथ अर्हनाथजहिो, अतिसे चोतिस धारें ॥ मल्लि मुनिसुव्रत स्वामजीहो, पेंतीस वानी उचारें ॥ नमीनाथ अरु नेमजीहो, सब, जीवां हितकारें ॥ पारस प्रभु महावीरजीहो, शासनके सिरदारें ॥ ए० ॥ ३ ॥ चोदासे बावन नरुंहो, गणधर महा गुणधारें ॥ चौवीसों

जिनजी तणाहो, आगम अर्थ भंडारें ॥ विहरमान वंदू सदाहो, वसिजु हं जिनरायें ॥ मन वचन काया करीहो, ध्यांन धरूं चितलाये ॥ ए० ॥ ४ ॥ आर्यदेश उत्तम कुलेहो, मनुष तणों भव पायें ॥ श्री जिनवर गुण गावताहो, जनम सुफल होजायें ॥ संवत उन्नीसें पचासमेंहो, करनाल नगर चौमासें ॥ ऋषराज कहे जिन ध्यावतांहो, पूरे मनकी आसें ॥ ए० ॥ ५ ॥ इति

॥ अथ चौवीस जिन स्तवन लिख्यते ॥

सुमत दायक सतगुरु नमीजी. जिणसें सम्यक ज्ञान ॥ वर समकित दर्शन भलाजी. चारित तप शुभ ध्यांन ॥ गुणोदधि चौवीसो जिणराय ॥ १ ॥ श्री आदिनाथ आदीसरूजी. आदि धर्मके स्वामि ॥ पंच महा विरत धारिकेंजी. कीना उत्तम काम ॥ गु० ॥ २ ॥ आजितनाथ अजितं प्रभुजी. धन श्री जिन अवतार ॥ धर्म देसना देइकेंजी. लिधा शिवपद सार ॥ गु० ॥ ३ ॥ संभवनाथ जिन देवनंजी. वंद्या सुभ परिणाम ॥ चिहुं गतिना दु ख टालिकेंजी. शिवपद दीजे स्वामि ॥ गु० ॥ ४ ॥ अभिनंदन आनंद करोजी. मुक्तिरमण भरतार ॥ तुम नामें सुख संपदाजी. तुम नामें निस्तार ॥ गु० ॥ ५ ॥ सुमतिनाथ सुमती करोजी. कुमती टालो दूर ॥ उज्वल होवे आतमाजी, वंछित आशापूर ॥ गु० ॥ ६ ॥ पद्मप्रभु पद्मासनंजी, ध्यान

कीया हितकार ॥ आरत रुद्र निवारकेंजी, धर्म शुकल मलधार ॥ गु० ॥ ७ ॥ सुपारस जिन गुण स्तवेजी, इंद्रादिक जे देव ॥ जनम सुफल नर ते करेजी, अहनिश सारें सेव ॥ गु० ॥ ८ ॥ चंद्रप्रभु गुण निर्मलाजी, दोष न कोई शरीर ॥ चंद्रवर्ण सम ध्यांनसेंजी, साहसवंत सधीर ॥ गु० ॥ ९ ॥ सूवंदनाथ पुष्पदंतनेंजी, ए दो नाम सुजान ॥ सुबुध दायक प्रभु जगतमेंजी, तुम महिमा असमांन ॥ गु० ॥ १० ॥ शीतलनाथ शीतल पणेंजी, कीधा सूध परिणांम ॥ क्रोध मान माया नहीजी, लोभ तजा तुम स्वामि ॥ गु० ॥ ११ ॥ श्रेयंसनाथ हे कायनेंजी. दान अभे जिन दिध ॥ दया धर्म चित धारकेंजी. उत्तम करणी कीध ॥ गु० ॥ १२ ॥ वासपूज जिण रायनेंजी. टाला आतम दोष ॥ दस लक्षण मन धारकेंजी. कीना मन संतोष ॥ गु० ॥ १३ ॥ विमल नाथ गुण सिमरताजी. निरमल होवे आप ॥ सुध सरधा आवे सहीजी. दूर होय सब पाप ॥ गु० ॥ १४ ॥ अणंतनाथ जिन ज्ञाननेंजी. दर्शन केवल धार ॥ चारित तपके तुम धनीजी. अणंत वली सुखकार ॥ गु० ॥ १५ ॥ धर्मनाथ जिन धर्मनाजी. दायक श्री भगवान ॥ धर्म धार शिव सुख लह्याजी. निश्चल पद निरवान ॥ गु० ॥ श्री शांतिनाथ साता करीजी. मृगी मारे निवार ॥ चक्र

अरती यह पांचेमजी. दो पदवीके धार ॥ गु० ॥ १७॥ कुंथनाथ चक्री छठेजी. वरतावी जिन आंण ॥ संजम ले तप धारिकेजी. पाया अविचल थांन ॥ गु० ॥१८॥ अरेहेनाथ जिन सातवजी, चक्री गुणके धार ॥ परउपगारी साहिबाजी, गुण मणके भंडार ॥ गु० ॥ १९ ॥ मलि- नाथ ब्रम्हचारीनाजी, चरण सरण मुझ होय ॥ इण भव पर भव तुम विनाजी, और न सरणा कोय ॥ गु० ॥२०॥ मुनिसुव्रत व्रत भलाजी ॥ धारक हें जिनराय ॥ तारण तिरण जिणेसरूजी, तुमविन कोन कहाय ॥ गु० ॥ ॥ २१ ॥ नमीनाथने नित नमुंजी, करजोडी सिरनाम ॥ नीच गोत्र कुल नही लहुंजी, उंच गोत्र कुल पाम ॥ गु० ॥ २२ ॥ अरिष्टनेमी वैरागसेंजी, त्यागी राजुल नार ॥ तोरणसेंती फिर गयाजी, जीव दया मनधार ॥ गु० ॥ २३ ॥ पारसनाथ मुझ मन वस्याजी, मधुकर मालती जेम ॥ गुण सुमरण में नितकरूंजी, लगया तु- मसें प्रेम ॥ गु० ॥ २४ ॥ महावीर बुद्धिमानंनजी, वंदु चे करजोडी ॥ शासन नायक जगपतीजी, मुझ भव बं- धन तोड ॥ गु० ॥ २५ ॥ अणंत चोवीसीनें नमुंजी, चो- दा सय बावन्न ॥ गणधर जिन चोवीसनाजी, प्रणमुं म- न वच तन्न ॥ गु० ॥ २६ ॥ संवत उगणीस गुणपंनजी, आश्रम मासें चोमास ॥ ऋषिराज कहे में नित नमुंजी,

चौवीस जिन गुण रास ॥ गु० ॥ २७ ॥ इति

॥ अथ उपदेश सिझाय लिख्यते ॥

वाणी श्री जिनराजनी, भविजननें हितकारीरे ॥ इन संसार समुद्रसें, तरया बहु नर नारीरे ॥ वा० ॥ १ ॥ भवनपती वाण व्यंतरू, जोतिषी और विमांणीरे, चारो जातिके देवता, श्रवण सुनें जिन वाणीरे ॥ वा० ॥ २ ॥ चार जातकी देवीया, भक्तवसें गुण गावेरे ॥ नर नारी त्रियंचनी; वाणी सुण सुख पावेरे ॥ वा० ॥ ३ ॥ जिनवर वारे परषदा, मांही दे उपदेशोरे ॥ जो सरधे हित जानकें, होवे ते परमेशोरे ॥ वा० ॥ ४ ॥ आगारनें अणगारनां, दो विध धर्म बखानोरे ॥ अणुव्रितनें महावृति, समझो चतुर सुजानोंरे ॥ वा० ॥ ५ ॥ हिंस्या मृषा जाणीयें, और अदत्ता दानोंरे ॥ मैथून परिह पांचए, देश त्याग ग्रही जाणोंरे ॥ वा० ॥ ६ ॥ दिस मर्याद छवीसनी, बोलांकी मरयादोरे ॥ अनर्था दंडनें त्यागकें, मकरो मन विषवादोरे ॥ वा० ॥ ७ ॥ सामायक संभरकरो, पोसह पडिक्मणा धारोरे ॥ दान देवो सुध भावसुं, जिम होवे निस्तारोरे ॥ वा० ॥ ८ ॥ वारे वृत श्रावकतणा, पालें जे नर नारीरे ॥ वारमें स्वर्ग तणी लहे, पदवी ते सुखकारीरे ॥ वा० ॥ ९ ॥ जघन तो पहिले स्वर्गमें, उत्कृष्ट पदजो पावेरे ॥ वारमें कल्पें स्वर्ग-

ना, सुखसुख मनमें माबेरे ॥ वा० ॥ १०॥ साधूपणीं जो संग्रहे; पाले निरती चारेरे ॥ सर्वथा ते हिंसक नही, सत्य वचन चित धारेरे ॥ वा० ॥ ११ ॥ अदत्तदांन लेवें नही स्त्री परिग्रहे त्यागीरे ॥ पंच महाव्रत आदरी, आतम ध्यान वैरागीरे ॥ वा० ॥ १२ ॥ जघनतो पहिले स्वर्गमें, उपजे मुनी गुणवानेरे ॥ उत्कृष्ट ठह थीसमें, स्वार्थसिद्ध निमाणेरे ॥ वा० ॥ १३ ॥ ज्ञान दरशन चारित्र तपे, धारत कर्म निवारेरे ॥ दान शील तप भावना, मुक्ति मारग ए चारेरे ॥ वा० ॥ १४ ॥ ऋषिराज कहे मुक मनवसी, जिन वाणी सुखकारीरे ॥ सुमत प्रकाश करी डणें, कुमती दूर निवारीरे ॥ वा० ॥१५॥ संवत उगनीसें सत्तावनें विनोली चौमासोरे ॥ जिन वाणी गुण वर्णव्या, आणी मन हुलासोरे ॥ वा० ॥ १६ ॥ इति

॥ अथ रात्री भोजनपर चौपाई तथा श्लोक लिख्यते ॥

चौपाई ॥ अणगल पाणी घट वापरे, सात गांम जलावणी करे ॥ तेह पापथी परभवें थाय, नारक कूतरा मींडे बिलाव ॥ १ ॥ साठी वरस लग मांहे जाल, पाडे मच्छ कच्छ सुकुमाल ॥ एक दिन अणगल नीर पीय, पुनलो पाप बोल्यो प्रसिद्ध ॥ २ ॥ उक्तंच ॥ विष्णु पुराणे श्लोक ॥ ग्रामाणां सप्तके दग्धे, यत्पापं जायते किल ॥ तत्पापं जायते पार्थ, जलगा गालिते घटे ॥ ३ ॥ मेकस्मात्

यत्पापं, कैवर्तस्यैव जायते ॥ एकाहेन तदा भोति, अ-
पूत जल संग्रही ॥ २ ॥ (रात्री भोजन पानके क-
रणेके निषेधमे) उक्तंच ॥ मार्कंडेय पुराणे श्लोक ॥
अस्तं गते दिवानाथे, तोयं रूधिर मुच्यते ॥ अन्नं मांसं
समं प्रोक्तं मार्कंडये महर्षिणा, ॥ १ ॥ (जिव दयाके विषे)
उक्तंच ॥ मारकंडेय पुराणे श्लोक ॥ जीवाणा रक्षणं श्रेष्टं,
जीवा जीवित कांक्षिणः ॥ तस्मात् समस्त दाने भ्यो, अ-
भय दानं प्रशंस्यते ॥ १ ॥ चौपाई ॥ वली महाभारथ
बोल्या अछे, ते तो युधिष्ठरनें मन रुचे ॥ जूं माकडनें
लीख दंशमशा; जे तनुनें पांडे जीव धस्या ॥ पुत्र परे
ते पालें जेह स्वर्गें मानव जावे तेह ॥ तडके नाखी तस
पीडाकरे; ते प्राणी नरकें संचरे ॥ २ ॥ उक्तंच ॥ युकाम
त्कुणदंसादीन्, येजंतूस्तूद तस्तनूः ॥ पुत्रवत्परि रक्षंति ते
नरा स्वर्ग गामिनः ॥ १ ॥ आतपादौचये घ्नंति, तेवै
नरक गामिनः ॥ सर्वत्र कार्या जीवानां, रक्षाचैवायधिनां
॥ २ ॥ (और रात्री भोजन, कंद, मद्य मांसके त्यागके वा-
रेमे महाभारतकेश्लोक) मद्य मांसाशनं रात्रौ, भोजनं
कंद भक्षणं ॥ ये कुर्वंति वृथा तेषां, तीर्थ यात्रा जपः स्त-
पः ॥ १ ॥ वृथा एकादशी प्रोक्ता, वृथा जागरणं हरे ॥
वृथाच्च पौष्करी यात्रा, कृत्स्नं चांद्रायण वृथा ः ॥ २ ॥ चा-
तुर्मास्येतुसंप्रामे, रात्रौ भोज्यं करो तियः ॥ तस्य शुद्धिर्न-

विधेत, चंद्रायण शतै रपिः ॥ २ ॥ (श्री ऋषभदेवजीकी तारीफके विषे भागवत ग्रंथे ॥ उक्तंच ॥ नित्यानुभूत निज लाभ निवृत्त तृष्णा, श्रेयस्यतद्रचनया चिर सुप्तबुद्धेः ॥ लोकस्ययो करुणयो भयमात्म लोके माख्यो; नमो भगवते ऋषभाय तस्मै ॥ १ ॥ अर्थ—उस ऋषभदेवको हमारा नमस्कार हो, सदा प्राप्त होने वाले आत्म लाभसे जिसकी तृष्णा दूर होगईहै और जिन्होनें कल्याणके मार्गमें रूढी रचना करिके जानएसोतेहुएजगतकी दया करिकें दोनो लोकके अर्थ उपदेश कियाहै॥१॥ ऐसा उत्तम देवहै ॥ (और महाभारत ग्रंथमें रात्री भोजनादि निषेध विषे श्लोक) ॥ चत्वारो नरकं द्वार, प्रथमं रात्री भोजनं ॥ परस्त्री गमनं चैव; संधानंनंत कायकं ॥ १ ॥ ये रात्री सर्वदाहारे, वर्जयंते सुमेधसः ॥ तेषां पक्षोपवासस्य, मासमेकेन्न जायते ॥ २ ॥ नोदकमपि पातव्यं, रात्रावत्र युधिष्टरः ॥ तपस्विनां विशेषण, ग्रहीणांच विलोकितां ॥ ३ ॥ मृतेस्वजनमात्रेपी; सूतकं जायते किल ॥ अस्तं गते दिवानाथे. भोजनं क्रियते कथं ॥ ४ ॥ रक्तामवंतितोयानी, अन्नानि पिशिता निचः ॥ रात्री भोजन सक्तस्य, ग्रासेन मांसभक्षणं ॥ ५ ॥ उदंबरा भवेत्मासं, मासंतोयमेव वम्यकं ॥ चर्मधारो भवेन्मासे, मांसेच निशि भोजनं ॥ ६ ॥ उन्दूक

काक मार्जारं, अघ संवर सूकरा ॥ अहिवृश्चक गोधा-घा, जायते निशि भोजनात् ॥ ७ ॥ मद्य मांसाशनं रात्रौ; भोजनं कंद भक्षणं ॥ भक्षणान्नरकं याति, वर्जनात् स्वर्गमा प्रुयात् ॥ ८ ॥ अज्ञानेन मया देव, कृतं मूलक भक्षणं ॥ तत्पापं यातु गोविंद, गोविंदं तव कितेनात् ॥ ९ ॥ रसोनंगृजनं चैव, पलाडू पिंड मूलकं ॥ मत्स्या मांसं सुरा चैव, मूलकंच विशेषतः ॥ १० ॥ (शिव पुराण ग्रंथमे जिमि कंद निषेद विषे श्लोक) यस्मिन् ग्रहे सदा नित्यं, मूलकं पाच्यते जनैः ॥ स्मशान तुल्यतद्वेस्म, पितृभि परि वर्जितम् ॥ १ ॥ मूलकेनसमं चानं, यस्तु भुक्ते नरोधमा ॥ तस्य शुचिर्नविद्येत, चांद्रायण शतैरपि ॥ २ ॥ भुक्तं हला हलं तेन, कृतंचाभक्ष भक्षणं ॥ वृताक भक्षणं चापि, नरोयांतिचरौरवं ॥ ३ ॥ (जल गणणेके विषे मनुस्मृतिका श्लोक) दृष्टि पूतं न्यसेत्पादं, वस्त्र पूतं जलं पिबेत् ॥ सत्य पूता वदेद्वाच्यं, मनः पूतं समाचरेत ॥ १ ॥ संवत्सरेण यत्पापं, कुरुतेमत्स्य वधकः ॥ एकाह न तदा प्नोति, अपून जल संग्रहे ॥ २ ॥

॥ अथ समत्सर्रीके विषे सिझाय लिख्यते ॥

दोहा ॥ मनुष्य जनम दुरलभ लही, पायो आरज खेत ॥ फिर यह यह ओसर दोहिला, चेत सके तो चेत

॥ १ ॥ जिन वाणी श्रवन सुनी, हृदय न प्रगट्यो ज्ञान ॥ खट रसमें चाटू फिरे, स्वाद मूल नही जान ॥ २ ॥ मूढमति कुल रूढमें, कर रह्यो खेंचातान ॥ सूत्र सुद्ध नही ओलख्यो, मोह विकलते जान ॥ ३ ॥ देव कुदेव न ओलख्यो, सुगुर कुगुर नहि सूझ ॥ धर्म अधर्म समझो नही, कर्म अकर्म न बूझ ॥ ४ ॥ तत्वातत्व न जानियो, भक्ष अभक्ष न जोय ॥ मनमें ज्ञानी होय रह्यो, कूडी सरधा सोय ॥ ५ ॥ एक एक मूढमती अछे, कीयो पर्वमें भेद ॥ सूत्रा नाम वतायते, मनमें धरही उमेद ॥ ६ ॥ पुछ्या उत्तर नवि लहे, पाछें करें मरोड ॥ ते नर मूढ गमारियो, निंद्या मयल निचोड ॥ ७ ॥

ढाल ॥ सूत्रविरुद्ध परूपणा करता इण संसारोरे ॥ तेहनो हिवे निरनय करो, सांभल करो विचारोरे ॥ जिनधर्म इम सुध ओलखो ॥ संवत्सरी पर्व जिण कह्यो, सर्व पर्वनो मूलरे ॥ तेह विपरीत करयो अछे, जारी जावक दीसे भूलरे ॥ जि० ॥ २ ॥ आसाढ पूनम पर्वछे, चौमासीगुण नामेरे ॥ चार मासनां दोपजे, आलोवें शुभ परिणामेरे ॥ जि० ॥ ३ ॥ चौमासी पडिकमीयां पछें, एक मास दिन वीसरे ॥ पज्यूसण पर्व करणो कह्यो, समायांग जगदीसेरे ॥ जि० ॥ ४ ॥ संवत्सरी इक वरसनो, पाप अलोवे नवजीनेरे ॥ मास बारानें पख गिणं,

थोर्वासना सव दीहरे ॥ जि० ॥ ५ ॥ तीनसे साठ दि-
नां तणां, क्षमावण संघ च्यारेरे ॥ पिण छुंद मास गि-
णता नथी, जोवो हिये विचारीरे ॥ जि० ॥ ६ ॥ इम
करतां साध साधवी, चौथे आरे जाणेरे ॥ असाढने पोस
जिण पत्रमें ॥ छुंद होय सु विहांनेरे ॥ जि० ॥ ७ ॥
सीत अने ग्रिषमतणो, चौमासो कह्यो एहरे ॥ पिण
पांच मास गिणतां नथी, तिन चौमासा तेहरे ॥ जि ॥
॥ ८ ॥ इस दूखम कलु कालमें, सामन छुंद बतायेरे ॥
ते छूंद मास लेखें लीयो, दूजें सावणें पर्व ठायेरे ॥
॥ जि० ॥ ९ ॥ जो कोई पूछे तेहनें, सावण पर्व न चा-
ल्येरे ॥ ताण करे हीयानी घणी, जाव दिनारो क्षा-
ल्येरे ॥ जि० ॥ १० ॥ चौमासी पडकामिया पछे, दि-
न पंचास बतावेरे ॥ सत्तर दिन उथापनें, कूडा हेत
लगावेरे ॥ जि० ॥ दिन पंचासनें कालानें, सत्तर दिननें
छिपावेरे ॥ एक आखने मूंदनें, वीजीनें टमका-
वेरे ॥ जि० ॥ १२ ॥ समत्सरी पडिकम्या पछे, दिन सत्त-
रने चोमासीरे ॥ कार्तिक सुद्री पून्यम तणी, आदि जिने-
स्वर भापीरे ॥ जि० ॥ १३ ॥ एक ग्रहीनें पांच पुत्र था,
तिणमें चार पुत्र सिरकारेरे ॥ एक नपुंसक बोवडो, तिण-
थी वंश न वधे लिगारेरे ॥ जि० ॥ १४ ॥ ग्रहे पुत्र
परणावता, नपुंसकनें परणावेरे ॥ तिण वदले नर पुत्रनें

रासे कुवारे दावेरे ॥ जि० ॥ १५ ॥ तिम अभिवर्द्धन वरसना, तेरा मास कहीजेरे ॥ चौमासी तिन जिन कही, लूंद मास न गिणजेरे ॥ जि० ॥ १६ ॥ लूंद नपूंसक जिम गिणो, तेहतो मूलमें थापेरे ॥ जादो पुत्र श्रीकारने, अफल गिणे नही धापेरे ॥ जि० ॥ १७ ॥ कवारा राखे श्रीकारने, नपूंसकने परिणावेरे ॥ तिम मूल मास गिणता नथी, लूंदनें वहोत लडावेरे ॥ जि० ॥ १८ ॥ जिन मारग न-ही उलख्यो, उंधा घोचा घालेरे ॥ लोह वानीयांनी परें फूरसी, उलटे मारग चालेरे ॥ जि० ॥ १९ ॥ इम जा-णी भव जीवनें, सूत्र पद दिल धरीयेरे ॥ सरदहना जिन वचननी, उलट भेद नही करीयरे ॥ जि० ॥ २० ॥ संवत उनिसे एकको, फागुण मास विचारोरे ॥ ढाल कही सिख्या भणी, निज आतम उपगारोरे ॥ जि० ॥ २१ ॥ पुज हरजीमलजी तणों, सिष्य रत्न इम बोलेरे ॥ सखि सुणी देश मतिधरो, जिण वाणीसुं तोलेरे ॥ जि० ॥ २२ ॥ इति

॥ अथ संवत्सरी विषे सझाय दुसरी लिख्यते ॥

दोहा ॥ श्री जिनवर वांणि कही, सूत्र अंग उपंग ॥ चरण करण खट द्रव्यना, धर्म कथा परसंग ॥ १ ॥ तिनमें खट द्रव्य भेदमें, सप्त भंगी पक्ष आठ ॥ चार प्र-मान नय सप्त विध, अनुयोगे विध पाठ ॥ २ ॥ च्यार निखेपा जामीया, अणंत नयात्म जैन ॥ पांच विवहारने

जानिया, एह श्री जिन वैन ॥ ३ ॥ आगम श्रुत अरु धारण अज्ञा जीत विवहार ॥ एक एक निहांनसें; रहतां सुद्ध विव्यहार ॥ ४ ॥ जो आगममें नही लिख्यो, तो परंपर शुद्ध विचार ॥ आगम वचन ओलख्या पछे; मति मानो विव्यहार ॥ ५ ॥ ठाणांगने पांचमें, ठाणे श्री जिन वैंन ॥ उंधी थाप करे जिको, ते मति मानो सैंन ॥ ६ ॥ संवत्सर पर्व जिन कह्यो, समाअंगरे माहि ॥ भादो सुदी पंचमी तणो; यामे संसे नाहि ॥ ७ ॥

ढाल ॥ दुषम आरेरे पांचमों, तिणमें सम्यक्त दुर्लभ जाणोरे ॥ पखलीयां खेंचे घणी, जिण मारग न पिछाणोरे ॥ सरधा दुरलभ जिन कही ॥ १ ॥ एक २ इस कलि विखें, चौथ छमछरी झालेरे ॥ पूछ्यां उत्तर इम कहे, पंचमी माहि चालेरे ॥ स० ॥ २ ॥ पिण कालिकाचार्य चौथमे, संवत्सरी पर्व कीधोरे ॥ तेहना हम केडा जती, तेहना मत हम लीधोरे ॥ स० ॥ ३ ॥ पिण वीर वचन नही मानीया; ते कहे परंपराय जोईरे ॥ कारण जाणी विसेषथी, आचारज कीधी सोईरे ॥ स० ॥ ४ ॥ दूजे समतसर आवता, देवलोक गया सूरीरे ॥ नहीतो पंचमी थापतो, करणनिया सव दूरीरे ॥ स० ॥ ५ ॥ धर्म विरधन कारणे; राजाने समझायोरे ॥ नाग पंचमी रायनी; चौथमें पर्व उठायोरे ॥ स० ॥ ६ ॥ ते आचार्यनी परंपरा, करता बहुजण

दीसेरे ॥ हिवे तुम सुनजो चितधरी, मति करजो कोई रीसेरे ॥ स० ॥ ७ ॥ कोई कहे घडिया विषे, परत्र सम-घर आवेरे ॥ तेहने माने तिथि पंचमी, पडीकमणादि करावेरे ॥ स ॥ ८ ॥ पिण सूत्र वचन नही ओलख्यो, मनेमे विरू कहावेरे ॥ कहे हम करेहे परंपरा, मनेमे हरख न मावेरे ॥ स० ॥ ९ ॥ सूत्र नशीतमे देखलो, दसमे उदेसा माहिरे ॥ भादो सुदी पंचमी दिनें, पज्यूसण पर्व ठाहिरे ॥ स० ॥ १० ॥ भादो सुदी पंचमी दिनें, असण पाणनें मेवारे ॥ ओसध परमुख सब तजो, कहे जिनेसर देवारे ॥ स० ॥ ११ ॥ घडियांनें पंचमी माननें, पडिक्कमणों चोथमें कीधेरे ॥ दूजे दिन परभातथी, असण पाण किम कीधेरे ॥ स० ॥ १२ ॥ घडियां जती पंचमी; अहार न करता जेहरे ॥ तो घडिया मानी सही, नही-तो गहिला तेहरे ॥ स० ॥ १३ ॥ और त्याग पांचमी तणो, हरी कुशीलनों होईरे ॥ ते किण दिन मानो तुमे; एह सुनावो मोईरे ॥ स० ॥ १४ ॥ कहें त्यागनी तिथ जे दिनें, उदया पंचमी लेवारे ॥ तो पडिकमण तिथ दूरें करी, कहां कहीं श्री जिण देवारे ॥ स० ॥ १५ ॥ पुछ्यारो उत्तर दे नही, एक परंपरा मुख गावेरे ॥ कहें पला करता आगें, हम पिण करेंहे उवांहेरे ॥ स० ॥ ॥ १६ ॥ गुरु सूत्र नहीं संभल्यो, ताणे हियामें का-

लीरे ॥ कागलमें लिख चौथनें, पंचमी पडिकमना घा-
लीरे ॥ स० ॥ १७ ॥ इन विध हेतु कहां लग कहुं, सू-
त्र निरनय कीजेरे ॥ सम्यक्त रतन अराधनें, पक्षमें चि-
त न दिजेरे ॥ स०॥१८॥ सिष्य हरजीमलजी ;तणो रतन
चंद कहे एमेरे ॥ जूग नवनिध सशी सालमें, श्री जि-
नसें धर पेमेरे ॥ स० ॥ १९ ॥ इति

॥ अथ धर्म चरचानी सिझाय लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥ श्री जिनवर सुख कारणी; वाणी इम्रत धार ॥ वरषे भविजन त्यारवा, सुद्धि बुद्धि दातार ॥ १ ॥ हलुकरमी जीवां प्रतें, लागे जिन उपदेस ॥ गुणग्राही गुण आदरे, त्यागे सकल कलेश ॥ २ ॥

ढाल ॥ राजा दसरथ दीपतोरे ए देशी ॥ श्री जिन वाणी दीपतीरे, प्रसिद्ध इण संसार ॥ निश्चे और विवहार, नय भाखे सुखकार ॥ श्री० ॥ १ ॥ व्यौवहार अधिक कहे वीरजीरे, ते सांभलजो सुविचार ॥ भाव संजमी वर वसेरे, जप तप करत अपार ॥ श्री० ॥ २ ॥ कर्म पडें जारा पातलारे, केवल ज्ञान उदार ॥ द्रव संजम विन उपजेरे, यह जिन वचन विचार ॥ श्री० ॥ ३ ॥ विना भेष एहवा मुनीरे, गुणवंत ज्ञान अपार ॥ विवहार विना सुर नर पतीरे, वंदे नही तिणवार ॥ श्री० ॥ ४ ॥ भेष लिया महुलां ममेरे, मानें सुन उपदेस ॥

दुरगतिथी ते उधरीरे, टाले जो भय कलेस ॥ श्री० ॥
॥ ५ ॥ मुनीवर उठे गोचरीरे, बयालीस भेद विचार ॥
टालत दोष न जाणीयेरे, आधा करमी अहार ॥ श्री० ॥
॥ ६ ॥ विन जाणे ते आणीयेरे, केवली पासें अहार ॥
देखीने भली भातसुरे, मुनीवर गुण भंडार ॥ श्री० ॥
॥ ७ ॥ केवली अहार न ते करेरे, मनमें धार संतोस
॥ नही परकाशे जानकेरे, साधू आगल दोष ॥ श्री० ॥
॥ ८ ॥ जिन वचनारी आसतारे, उत्तर डाण परका-
र ॥ नही थापे विवहारथीरे, पाले संजम भार ॥ श्री० ॥
॥ ९ ॥ पहिला चक्री भरतेस्वररे, आरीसा भवन मंझार
॥ संजम भावे तोडीयारे, चार करम दल भार ॥ श्री० ॥
॥ १० ॥ केवल उपनो निरमलोरे, सुरपत आया ताम ॥
भेष देई पाछे नमेरे, दरसन लीयें अभिराम ॥ श्री० ॥
॥ ११ ॥ उपदेश माला विगतमारे, एह कह्यो अधिकार
॥ नय विवहार परसिद्धछेरे, ऊंडो अर्थ विचार ॥ श्री० ॥
॥ १२ ॥ प्रश्नचंद निज भेषथीरे, वैराग्यं मनलाय ॥
अशुभ भाव सब टालिकेरे, पहुंचे शिवपुर माहि ॥ श्री० ॥
॥ १३ ॥ मेतार्ज ऋष आवीयारे, राजग्रही मंझारोरे ॥
सोनी लखमन भावस्युरे, देवे सुध अहार ॥ श्री० ॥ १४ ॥
जव कनकना पंखीयेरे, आय चुग्या तिन वारोरे ॥ आ-
ण देखतां तिन समेरे, कीधो क्रोध अपारोर ॥ श्री० ॥ १५ ॥

पूछतां उत्तर नविदीयोरे, मेतार्य रिष साध ॥ मौंन कीयो शुभ ध्यानथीरे, आतम गुण आराध ॥ श्री०॥१६॥ चाम वेदना मस्तकेरे, दीधी तिण ततकालोरे ॥ केवल लही मुक्त पधारीयारे, श्री जिन धर्म उजालोरे ॥श्री० ॥ १७ ॥ पंखीये जव जौं वम्यारे, देखें सोनी तामोंरे ॥ श्रेणकथी भय आणकेरे, भेष लीयो अभिरामोरे ॥ श्री० ॥ १८ ॥ श्रेणक मुनकें तेहवेरे, दीधा जीतव दानेरे ॥ भेष विवहार वडो अछेरे, श्री जिन राज वखानोरे ॥ श्री० ॥ १९ ॥ भेष वंदू सुभ भावथी, निंद्यो मत सुविचारोरे ॥ धर्म जतीनो भेषथीरे, दीपे जगत मंझारोरे ॥ श्री० ॥ २० ॥ साधू सम किरिया करेरे, ग्रहस्त पदनें माहेरे ॥ वंदे नही कोई आयनेरे, पिण सूत्रनी न्यायेरे ॥ श्री० ॥ २१ ॥ सेलग सिष पंथक भलोरे, गुरु भक्ता गुण धामरे ॥ परमादी गुरुनें तिहारे ॥ वंदन करे अभिरामरे ॥ श्री० ॥ २२ ॥ इकीस सहेंस वरसा लगरे, वरतसी श्री जिण धर्मोरे ॥ जे नर नारी पालसीरे, टलुसी आठों कर्मोरे ॥ श्री० ॥ २३ ॥ विक्रम सम्वत वरततारे, उन्नीसे अडतीसरे ॥ एह उपदेश सुनावीयोरे, जेम कह्या जगदीसरे ॥ श्री० ॥ २४ ॥ श्रावक गुण रागी घणारे, गाम ढिंढाली माहिरे॥ तिन आग्रह चौमासमेंरे, जोड करी उछाहरे ॥ श्री० ॥ २५ ॥

बुधजन समफ पहवारे, सुण सतगुरु उपदेसरे ॥ व्रत धारो सुध भावथीरे, टालो भवना कलेसरे ॥ श्री.॥२६॥ ज्ञान दरसन चारित्र भलोरे, तप कर कर्म खिपायरे ॥ कवरसेन गुर प्रसादथीरे, एम कहे ऋषिरायरे ॥ श्री० ॥२७॥

कलश ॥ देव श्रीजिन धार मुज मन, निर्गंथ गुरु चित लाईये ॥ जिन धर्म सेवो दांन देवो; शिव रमणी सुख पाईयें ॥ २८ ॥ ऋषराज भाखें संघ साखें, सुणो भवि हित आणए ॥ निश्चे अराधो विवहार साधो, साधतां कल्याणए ॥ २९ ॥ इति

दोहा ॥ आतम गुण ग्याता अगुण, निरगुण नाहि प्रवीन॥ जो ग्याता सो पर्म सुख, अज्ञाता दुःचीन॥ १ ॥

अथ पद राग काफी ॥ दोश विन सोच न कोय ॥ निंधा म्हारी कोईकरोरे ॥ १ ॥ निंदक सम उपगार करेकुण, अंतर करणं जोय ॥ निंधा० ॥ २ ॥ आप तणां गुण करकर मेला, उज्वल कर रहे मोय ॥ निं० ॥ ॥ ३ ॥ विन साबून रजगार लीये जिन, कर्म मेल डारे धोय ॥ निं० ॥ ४ ॥ रतन जतन कर मन थिर राखो, सोंना काट न होय ॥ निं० ॥ इति

॥ अथ श्री सिमंधर जिन स्तवन लिख्यते॥

वीर सुनों मोरी वीनती ए देशी ॥ श्री सिमंदिर साहिबा, तारण हो तारण तिरण जिहाज ॥ तुम सरणें

अब आवियो, सारोहो सारो बंछित काज ॥ अरज सुणो एक माहरी ॥ १ ॥ स्वामीहो स्वामी परम दयाल ॥ मेहर करो मुजऊपरे, कीजेहो कीजे म्हारी संभाल ॥ अरज सुणो प्रभु माहिरी ॥ २ ॥ तुम चरणोको वंदनां, हुजेहो हुजो म्हारी त्रिकाल ॥ थारा ध्यांन धरूं इहां, खेत्रजहो खेत्र भर्थ विचाल ॥ अ० ॥ ३ ॥ केवलज्ञानी साहिबा, थाराहो थारा में गुण ग्राम ॥ किम बरणुं इक जीभथी, तुमगुणहो तुमगुण अंत न स्वामि ॥ अ० ॥ ४ ॥ पूर्व महा विदेहमें, स्वामीहो स्वामी तिहां तुम वास ॥ दास तुम्हारा भर्थमें, किमकरहो किमकर आवे पास ॥ अ० ॥ ॥ ५ ॥ पर्वत नदीयां सासती, मोटीहो मोटीछे आसराल ॥ डूंगर आडा छे घणां, आवुंहो आवूं केम कृपाल ॥ अ० ॥ ६ ॥ इहां थकी अवधारीये, विनतीहो विनती करुणानाथ ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्मनां, गंडाहो गंडा सङ्ग साथ ॥ अ० ॥ ७ ॥ वार अणंत विदेहमें, पायाहो पायो नर अवतार ॥ भावथकी नही भेटीया, स्वामीहो स्वामी जगदाधार ॥ अ० ॥ ८ ॥ भाव विना सुधरे किहां, प्राणीहो प्राणी इन जगमांहि ॥ केवल वांणी मे सुणी, पिण मनमेंहो मनमें सरधी नाहि ॥ अ० ॥ ९ ॥ कर्म रिपु पाछे पडे, इन वसथीहो इन वसथी स्वाम ॥ धर्म उदे नही आवीया, जाणोहो जाणो त्रिभुवन स्वामि

॥ अ० ॥ १० ॥ च्यार कषाया वस पड्यो, पिन तुम-हो पिन तुम नांम आधार ॥ गुरु उपगार प्रसादथी, पाम्योंहो पाम्यों धर्म उदार ॥ अ० ॥ ११ ॥ जनम ज-रा मरणा थकी, डरतोहो डरतो रहुं दिन रात ॥ पिण आजु करम माहिरा. भारीहो भारी नही दीसे विख्यात ॥ अ०॥१२॥ जो नही भेट्या भावसुं, स्वामीहो स्वामी तुमरा चर्ण ॥ अव निश्चेकर जगतमे; लीधाहो लीधो थारो सर्ण ॥ अ० ॥ १२ ॥ हीणाचारी मोटका; हुंवूंहो हुंवूं लोह-का दांम ॥ तुम पारस मिलसो जदा. हेमज हो हेमज थासुं स्वाम ॥ अ० ॥ १४ ॥ वे कर जोडी वीनवूं. अव-गुणहो अवगुणानो रास ॥ पुत्र कुपुत्र सम जाणके, मेटोहो मेटो चहुं गति फास ॥ अ० ॥ १५ ॥ हुं परमादी जी-वडा; पूर्वहो पूर्व कर्म अपार ॥ तिणथी पाम्या भरतमे. मानवहो मानवनो अवतार ॥ अ० ॥ १६ ॥ देव धर्म गुरु आसता म्हारेहो म्हारे निश्चे एह ॥ अजी तुमसे छे घणी; कहांलगहो कहांलग भाखूं तेह ॥ अ० ॥ १७ ॥ उन्नति चोंतीसका; विक्रमहो विक्रम सम्वत माण ॥ अ-साढ कृष्ण तिथ पंचमी, ग्रामजहो ग्राम ढिंढाली जाण ॥ अ० ॥ १८ ॥ तिहां ऋषराज कर जोडिनें, विनतीहो विनती कीधी स्वाम ॥ मर्ण ग्रहो अरिहंतको; पूरेहो पूरे वंछित काम ॥ अ० ॥ १९ ॥ इति

॥ अथ तेइस पदवीनी सिझाय लिख्यते ॥

मन वच काया सुद्धसुं, सरधो श्री जिन वाणीजी ॥ सूत्र पणवणामे कही पदवी तेईस जाणीजी ॥ वाणी सरधो जिन तणी ॥ १ ॥ जिम पामो भव पारोजी ॥ संक्या मनमे नाणीये; चतुर हीयामें धारोजी ॥ वा० ॥ २ ॥ ॥ जिन चक्री खट खंडना, बासदेव वलदेवोरे ॥ केवली साधू श्रावके; समद्रिष्ट मंडलीक रावोरे ॥ बा० ॥ ३ ॥ उत्तम पदवी ये कही; सूत्रामे जिन रायेरे ॥ सात इकेंद्री रतनका; नाम सुणो चित लायेरे ॥ वा० ॥ ४ ॥ चक्र दंड छत्र तीसरा; खडग मणी ए पांचेरे, कांकांगनी चरम रतनज्ञुं; देव अधिष्ठत सांचेरे ॥ वा० ॥ ५ ॥ रतन पंचेंद्री जाणीयें; अश्व रतन गज सारेरे ॥ प्रोहितने गाथापती. सेनापती सुखकारेरे ॥ वा० ॥ ७ ॥ बाढी इत्थी सातए; चक्री सेवा सारेरे ॥ पूर्व पुन्य प्रसादथी, एकेंद्री रतन सब धारेरे ॥ वा० ॥ ७ ॥ पहेली नरकना नीकल्या; प्राणी पदवी पावेरे ॥ परथम सोला जाणिए; सात एकेंद्री न थावेरे ॥ वा० ॥ ८ ॥ बीजी नर्कसे आयके, पंद्रे पदवी पावेरे ॥ चक्री न होवे जगतमे; श्री जिन एम बतावेरे ॥ वा० ॥ ॥ ९ ॥ तीजी नर्कसे नीकल्या; तेरे पदवी पावेरे ॥ रामवासुदेव दो टले; श्री जिन एम बतावेरे ॥ वा० ॥ १० ॥ चौथी नर्कना नीकल्या; बारे पदवी पावेरे ॥ तीर्थकर होवे

नही, अरिहंत एम बतावेरे ॥ वा० ॥ ११ ॥ पांचमी नरकथी आयके, ग्यारे पदवी पावेरे ॥ केवलज्ञानी इहां टले, श्री जिन एम बतावेरे ॥ वा० ॥ १२ ॥ छठी नरकसें आयकें, दस पदवी जन पावेरे ॥ साध पणो आवे नही, ज्ञानी एम बतावेरे ॥ वा० ॥ १३ ॥ सातमी नरकसे आयकें तीन जो पदवी पावेरे ॥ हय गय समदृष्टी एही, अरिहंत एम बतावेरे ॥ वा० ॥ १४ ॥ भौनपतीसें आयकें, इकीस पदवी पावेरे ॥ वासुदेव जिन ना होवे, अरिहंत एम बतावेरे ॥ वा० ॥ १५ ॥ पृथवी पानी जानीये, विन्स्पति ए तीनोंरे ॥ पंचइंद्री तिरजंचथी, नर गरभज जो लीनोंरे ॥ वा० ॥ १६ ॥ इन पांचोथी आयकें, उन्नीस पदवी धारेरे ॥ जिन चक्री दोनों इहां, सम वासुदेव चारोरे ॥ वा० ॥ १७ ॥ चारों पदवी ए टली, इम जंपे जिन रायोरे ॥ तेऊ वाऊका नीकल्या, नौं पदवी ते पावेरे ॥ वा० ॥ १८ ॥ सात इकेंद्री रतनजो, हय और गज जाणोरे ॥ और तीन विकलेंद्रीनां, बे ते चोइंद्री वखाणोरे ॥ वा० ॥ १९ ॥ इनमांहिथी नीकल्या, अठारा पदवी पावेरे ॥ तीर्थंकर चक्री अरू, वासुदेव बलदेवरे ॥ वा० ॥ २० ॥ केवली ए पांचो टल्या, जिनजी एम बतावेरे ॥ जोतसी सुरना नीकल्या, इकवीस पदवी पावेरे ॥ वा० ॥ २१ ॥ जिन वासुदेव दुदो टले, सुधर्मा ई-

सामेंरे ॥ इनथी आया तेईसो, पदवी पाय प्रधानेंरे ॥ वा० ॥ २२ ॥ तीजा चौथा पांचमां, छठा सत्तम पर-धांनेरे ॥ आठमा जे सुर लोकनां, पदवी सोले जांणोरे ॥वा० ॥ २३ ॥ सात इकेंद्री रतनजो, वरज्या श्री जिन रायेरे ॥ नौंमा दसमा ग्यारमा, बारमा अचुय कहायेरे ॥ वा० ॥ २४॥ अरु नव ग्रीववेकनां, चौदे पदवी पावेरे ॥ हय गय सातों रतनजों, टलीया जैन व-तावेरे ॥ वा० ॥ २५ ॥ पांच अणुत्र विमानका, आठ जो पदवी पावेरे ॥ जिन चक्री वलदेवजी, केवली साधु कहावेरे ॥ वा० ॥ २६ ॥ श्राविक समदृष्टी कह्या, मं-डलीक जूं राजेरे ॥ पुन्य उदये पाईये, एम कहे ऋषरा-जेरे ॥ वा० ॥ २७ ॥ कुशलसीय ग्राममें, कीयो तिहां चौमासोरे ॥ साल उन्नीसे चौतीसमें, पुरी मनकी आसोरे ॥ वा० ॥ २८ ॥ इति

॥ अथ धर्म शिक्षानी चोपाई लिख्यते ॥

वंदू पहिलो आदि जिनंद, सुरतरु वंछित आणंद कंद ॥ चर्ण सर्ण मोक्षूं भगवांन, होजो जिम प्रगटे हिय ज्ञान ॥ १ ॥ जिनवाणी अरु गुरुको ध्याय, इन परसादें कहुं जिताय ॥ समता ममत सूं ज्ञान बताय, जिम भाखीयो श्री जिनराय ॥ २ ॥ मिथ्या वस जगमें नर एह, सुख दुख भोग्या नहीं संदेह ॥ धर्माधर्मज परख्यो नाहि, निनयो

भमीयो इन जग माहि ॥ ३ ॥ कुगुरु तनी सेवा बहू क-री, हिंस्या करतब बहु आचरी ॥ पांचो आश्रव सेव्या जाण, पाली नही जिनवरकी आण ॥ ४ ॥ लोभी गुरु रूले संसा-र, करकर ग्रहस्था करमाचार ॥ षट कायाकी न जाणी सार, क्रोध मान माया ब्योहार ॥ ५ ॥ पाप अठारा त्यागे नहि, सातो कुविसनके बस मांहि ॥ राग द्वेष कुग-रांदि घाल, मुक्तपुरीको दीधी टाल ॥ ६ ॥ जीव अजीव अरु पुन्न ज्युं पाप, आश्रव संवर निर्जरा थाप ॥ बंध मो-क्षका लहे विचार, ज्युं पामे नरभवनो पार ॥ ७ ॥ सुध धर्म अरु पालो नेम, ऋषि ऋषराज कहेहे एम ॥ उन्नीसें पैंतीसके साल, सुनतां पामें मंगल माल ॥ ८ ॥ इति

॥ अथ नव तत्व नाम लक्षण सिझाय लिख्यते ॥

सुगुरुकी संगत कर भाई ॥ मुक्तपुरीका राह बतावे, समता रस प्याई ॥ ए टेक ॥ कुगुरांकेरी संगत कीनी, इन जीव जग मांहि ॥ क्रोध मान मायाके वसमें, लोभ तजा नाहि ॥ सु० ॥ सु० ॥ १ ॥ षट कायाकी हिंस्या कर-कें, धर्म कहें थाई ॥ संवर व्रत न धारी मनमें, कुमता चित लाई ॥ सु० ॥ २ ॥ अब सतगुरु परसादे जान्यो, चेतन जग माहि ॥ सुख दुख भोगें निज कर्मोवस, यह मिथ्या नाहि ॥ सु० ॥ ३ ॥ जीव रहित सो जड कहला-वे, पुन्य फल सुखदाई ॥ पाप उदे नर होय दुभागी,

अरु होय अन्याई ॥ सु० ॥ ४ ॥ आश्रव जासें कर्म आवता, रोकें जे नाहि ॥ संवर माही कर्म आवता, रोकें छिनमांहि ॥ सु० ॥ ५ ॥ पूर्व संच्यां कर्म जीवकें, लारें बहु ताई ॥ करो निर्जरा द्वादश तपसें, श्री जिन फरमाई ॥ सु० ॥ ६ ॥ शुभ अशुभ कर्मोंके बंधन, अशुभ तजो भाई ॥ शुभ बंधनथी धर्म उदेवे, समझो चित लाई ॥ सु० ॥ ७ ॥ कर्म आठका बंध मुकावे, जब चेतन राई ॥ सिवपुरमें तब आप बिराजे, केवल पद पाई ॥ सु० ॥ ८ ॥ उन्नीसें पेंतीसके सम्बत, चतुर मास माहि ॥ जोड करी ये गांम ढिंढाली, इम कहे ऋषराई ॥ सु० ॥ ९ ॥

॥ अथ नेमनाथजीकी चौपाई लिख्यते ॥

माता सारद प्रथम मनाऊं, दूजे गुरुको सीस नमाऊं ॥ तीजे आदि देवको ध्याऊं, चौथे नेम तणां गुण गाऊं ॥ १ ॥ पांचमें ल्युं चौवीसो नांम, पूर्ण सारे मेरे काम ॥ रिषभ अजित वंदू जिनराय, संभव अभिनंदन सुख दाय ॥ २ ॥ सुमत पद्म सुपारस जाण, चंद सुवद नौमे हित आण ॥ शीतलनें श्रीश्रेंस वखान, वासपूज वंदू भगवान ॥ ३ ॥ विमल अनंत अनें श्रीधर्म शांति, कुंथ अरहे जिन नीरमल कांति ॥ मल्लिमुनिसुव्रत नमी जिनंद, इन समर्‍या टूटे जग फंद ॥ ४ ॥ ब्रम्हचारी जगमें श्री नेम, इनकी अस्तुति भाखु केम ॥ में सठ जग हांसी धाम,

पिन कहेताहुं जिन गुन ग्राम ॥ ५ ॥ तेईसमे श्री पार स्वनाथ, वंदू जोडी दोनो हाथ ॥ सासन नायक बीर जिणंद, सुमरंता पामुं आनंद ॥ ६ ॥ सोरीपुर एक नगर बखान, समंद्रबिजे राजा गुनवान ॥ सेवा देवी घर पट नार, चौदा सुपने अति सिरदार ॥ ७ ॥ देखी राणी अति हुलसाय, नेमनाथ जनमे जिनराय ॥ एक हजार अठ लंछन तन, सोभे अधिका सांमल बन्न ॥ ८ ॥ नगर द्वारिका तब गुलजार, तिहां राजा श्रीकृष्ण मुरार ॥ बारे जोजन लंबी जाण, नौं जोजनकी चौडी मान ॥ ९ ॥ तीर्थ पत श्री नेम जिनंद, कृष्ण मुरारी दुष्ट निकंद ॥ भाईतो बलभद्र सहाय, इनकी सोभा कही न जाय॥१०॥ जादो कुलकी सोभा आपार, सोहे जिहां तीनो अवतार ॥ इनकी खिजमत इंद्रने करी, कीधी तब तिन द्वारापुरी ॥ ॥ ११ ॥ एक दिवस लाग्यो दरबार, बैठे सोभे श्रीकृष्ण मुरार, नेमनाथ तिहां बैठे आय, जैसें सुरपति सोभ्या पाय ॥ १२ ॥ तब करते बलनो विस्तार, इन पर लागे करन विचार ॥ कोइ कहे पांडव परचंड, अरिजन मार करे सत खंड ॥१३॥ कोइ कहे यह झूटी बात, मदनतनों बलहे विख्यात ॥ कोइयक कहेते संबकुमार, मोहनी मूरत सोभे अपार ॥१४॥ कोई बखनें कृष्ण मुरार, इन सम बल नही जग मंझार ॥ शारंग नामे धनुष चढाय,

दलमलि नाग सेज सुखदाय ॥ १५ ॥ सभी सराहे कृष्ण मुरार, तब बोले बलभद्र सभार ॥ एतो सारी झूठी बात, नेम तणा जग बल विख्यात ॥ १६ ॥ हरिनें कीधी उंची बांहि, कौंन नमावे इण जगमाहि ॥ सारे राजा लटके आय, नेमनाथने दइ नमाय ॥ १७ ॥ बल देखीने उंची कीध, नेमनाथनी बाहा लीध ॥ झूलण झूंझूले सब राय, कृष्ण आदि नीची नहीं थाय ॥ १८ ॥ मनमे चिंत्या आण अपार, साथे ले बलभद्र कुवार ॥ पुरबहिर ते बन-की बहार, करतां लागी अधकी वार ॥ १९ ॥ सारंगनी कीधी टंकार, पचायणको सोर अपार ॥ कीधा तब श्री नेम कुमार, चौंके तिहां श्रीकृष्ण मुरार ॥ २० ॥ तुरत आयके देखे नेम, बल देखी मन चिंते एम ॥ निश्चे ले-सी म्हारो राज, परणाउं ज्यूं सुधरे काज ॥ २१ ॥ भामा आदिक तेडी नार, व्याह मनावो नेम कुमार ॥ इम फरमायो कृष्ण मुरार, रितुराज आयो सुखकार ॥ २२ ॥ भामा रुकमण करवा ख्याल, आदिक थईने झांक झमा-ल ॥ सबही नारी मिलकर आय, देवरीयाको लीयो बुला-य ॥ २३ ॥ खेले कर कर नाना रंग, देवर साथे करी उमंग ॥ हांसी मिस भासे एम, व्याह न माने देवर केम ॥ २४ ॥ श्री जिनवर तो धये अपार, भोगीने सुख मुक्त मंझार ॥ किमके तुमने ऊपर आस, थारो भाई सो-

ग विलास ॥ २५ ॥ भोगे नारी कोई हजार, तुम भटकोगे इण परकार ॥ जांबवंती स्युं कीजे खेद, पुरष नही में जान्या भेद ॥ २६ ॥ नारी बिन जगमे क्यों रहे, भामा तिणसों इणपर कहे ॥ तूं नही समझे बाता एह, नार भरेवी मुसकिल एह ॥ २७ ॥ देवरीयो बिन अंकुश एह, हासी मिस तब भाखे एह ॥ मानो २ नेम विवाय, इम सुण हरख्यो जादवराय ॥२८॥ व्याहन आए तोरण वार, नेमनाथको देखि दिदार ॥ करने लागे पशू पुकार, पूछे तिहां श्री नेम कुमार ॥ २९ ॥ क्यों रोकेहै जीव अनाथ, कहे स्वारथी जोडी हाथ ॥ स्वामी यह तुम व्याह विख्यात, इन जीवोंनी होसी घात ॥ ३० ॥ हुकम कीयो प्रभू वाडे एह, खोलो मत मन करो संदेह ॥ सबकों दीधा जीवत दांन, दया धर्मको सागर जान ॥ ३१ ॥ अर्थ फेरके देई दान, संजम लीधो मन हित आन ॥ प्रभूजी आए गढ गिरनार, तुर्त तजि जिन राजुल नार ॥३२॥ पचपन्न दिनमे केवल ज्ञान, राजमती ले दिक्ष्या आन ॥ नौं भोकी जिन राखी प्रीत; एह उत्तम जनकी रीत॥३३॥ दान शील तप भाव बताय, दया धर्मका भेद जनाय ॥ मिथ्यातमको दूर हटाय, राजुलजीने कर्म खपाय॥ ३४॥ शिव पदवीमें पाम्यो राज, तेहना सीझे वंछित काज॥ पाठे पांचे नेम जिनंद, आठ कर्मका तोडी फंद ॥३५॥

जगमाही मोटे जिनदेव, सुर नर सारे जाकी सेव ॥ वी-
तरागको भजन करंत, भो भोना दुखथी छुटंत ॥ ३६ ॥
क्रोध मान माया अरू लोभ, इन छांडया नर पामे सोभ॥
वन्ही वन्ही निध चंद्र सुजान, कारतक सुक्ल पक्ष तिथी
मान ॥ ३७ ॥ सप्तमी नाम सोम सुभ वार, उज्वल वस्त्र
मुख आगल धार ॥ इम जंपे ऋषराज विचार, कहतां
पामे जे जे कार ॥ ३८ ॥

॥ अथ श्री सिमंदिर स्तवन लिख्यते ॥

चौपाई ॥ जे जे जगनायक जिन देव, जे जे सुनर
सारे सेव ॥ जै जे प्रभु तनि लोक विख्यात; जै जे जै ज-
गजीवन जगतात ॥ १ ॥ जे जे जसवंते जिनराइ; जे जै
वीतराग पद पाइ ॥ जै जे कर्म विनासणहार जे जै जग
तारक संसार ॥ २ ॥ जे जै षट काया प्रतिपाल; जे जे
समणव्रति सुविसाल ॥ जे जै इंद्री दमण वडवीर ॥ जे जै
तपस्यावंत सुधीर ॥ ३ ॥ जे जे प्रभु तुम केवलज्ञान;
जे जै सव दरसी जिम भाण ॥ जै जे चारत गुण गंभीर'
जे जे मेरू गिर सम धीर ॥४॥ जे जे जै धर्म दया परकास;
जे जे जिन मेटयो जग फास, जे जे जे श्री मंदिर माहा-
राज; जे जे जे करता जिनराज ॥ ५ ॥ जै जे जस गावे
तुम देव, जे जै कर नर सारे सेव ॥ जे जै जय करता
तुम ध्यान. जे जे जे पावे सुख थान ॥ ६ ॥ करजोडी

मे वंदन करूं, प्रभु तुम चरणोंमें सिर धरूं ॥ मेरी सुन प्रभु अब अरदास, विनतुं बे कर जोड हुलास ॥ ७ ॥ तुम विन परखे में दुख सह्या, सो तो मोपे जाय न कह्या ॥ अलप दुखोंका करूं बखान, पूर्व कर्म करया फल जान ॥ ८ ॥ देव धर्म गुरु परखे नाहि, मिथ्यावस रुलिया जगमाहि ॥ जीव हिंस्या अरु मृषावाद, अणलीधा मैथून उनमाद ॥ ९ ॥ परिग्रह धन संच्या में करयो, पापदोषका भय नवि धरयो ॥ क्रोध मान माया अरु जान, लोभ कीयो मन दुख असमान ॥ १० ॥ इनके वसमे कीधा पाप, तिनकर पाम्या नरक संताप ॥ छेदन भेदन ताडन ताप, सीतादिक दुख सहे संताप ॥ ११ ॥ सो तुमसे कुछ छानी नाहि, और भम्यो पसु गतिके माहि ॥ मनुष जन्म पाया विप्रीत, भव्य कुल अरु भव्य सरीत ॥ १२ ॥ किन्नमुखी सुर असुर कुमार, वानव्यंत्र अरु जम औतार ॥ ऐसी गत में भमीयो जाण, अब तुम सरणो लीधो आण ॥ १३ ॥ लोह कुधात तणा में दाम, तुम पारस सम गो सुन स्वामि ॥ में अधीन तुम दीन दयाल, किरपा कर कीजे संभाल ॥ १४ ॥ में अनाथ तुमरे आधार, आय पडयो सरणा तुम धार ॥ और न कोई तुम सा नाथ, तीन लोकमाहि विख्यात ॥ १५ ॥ धर्म तुमारा पाया स्याम, कल्पवृक्ष चिंतामणि नाम ॥ विण

मुझ कर्म वली छे लार, तेह रुलावे इण संसार ॥ १६ ॥ एक सरण तुमरो भगवान, तारो तुम निजदास पिछान ॥ तारणछे तुम नाम परवान, तारणछे तुम धर्म प्रधान ॥ १७ ॥ तारण तुम भाष्या उपदेस, जासुं टूटे सभी कलेस ॥ ग्यान दर्शन चारित्र तप जाण, ए तारण भाष्या भगवान ॥ १८ ॥ दान सील तप अरु भाव, तारण तिरण भाष्यो जिणराव ॥ श्रावक साधू धर्म विचार, कृपाकर भाष्यो हितकार ॥ १९ ॥ जे आराधे नर अरु नार, ते पासें भवदधिनो पार ॥ साल उगनीसे उणतालीस, दूजो सावण दूज भूमीस ॥ २० ॥ कवरसेन गुरूके आधार, सिष्य ऋषराज स्तवन उच्चार ॥ सहेर झिझाणें कीयो चौमास, प्रभू नांमे सहु पूरी आस ॥ २१ ॥ इति

॥ दोहा ॥ जिन वाणी भवतारणी, एह सदा सुखकार ॥ इन भव परभवमे सही, करती जै जै कार ॥ १ ॥

॥ अथ गुणस्थानकनी सिझाय लिख्यते ॥

सकल जगतके सिरधणीजी, सिद्ध नमूं करजोड ॥ अनंत ज्ञान दर्सन लह्याजी, अष्ट कर्मदल तोड ॥ गुणी जन भावो तुम गुणथान ॥ १ ॥ गुणथानक गुण वरनवुंजी, जिम भाख्या जगदीस ॥ पहले प्रकिरत मोहनीजी, कही जिनवर अठाईस ॥ गु० ॥ २ ॥ प्रथम अनंत अणुंबधनीजी, दूजे अप्रत्याख्यान ॥ तीजी प्रत्याख्याननीजी, चौथी संज्वल

जान ॥ गु० ॥ ३ ॥ क्रोध मान माया लोभनीजी, चार चौकडी मान ॥ नर्क तिरयंच नर देवनिजी, गति अनुकरमें जान ॥ गु० ॥ ४ ॥ समकित श्राविक साधुनीजी, केवल ज्ञाननी हान ॥ अनुकरमें चारोतनीजी, सोले कषाय प्रमान ॥ गु० ॥ ५ ॥ समकित मिथ्या मिश्रनीजी, मोहनी तीन बखान ॥ हांस रतारत भै तणीजी, सोग दुगंछा जान ॥ गु० ॥ ६ ॥ इस्त्री पुरष नपुंसकेंजी, तीनो वेद सुजान ॥ अठाईस परकित हुईजी, मोहनी भेद बखान ॥ गु० ॥ ७ ॥ प्रथम परवांन सम क्रोधछेजी, वज्रथंब सम मान ॥ माया जडछे बांसनीजी, लोभ किरम रंग जान ॥ गु० ॥ ८ ॥ क्रोध तलावनी रेख छेजी, अस्तिथंब सम मान ॥ माया मिंढा सिंग जूजी, लोभ सकट खंज जान ॥ गु० ॥ ९ ॥ क्रोध सकट पथ रेख जुंजी, काष्ट थंब सम मान ॥ माया वृषभना मुत्र जूंजी, लोभ गौरी रंग जान ॥ गु० ॥ १० ॥ क्रोध पाणिकी रेखछेजी, त्रिणका थंब जिम मान ॥ माया तागा वलतणीजी, लोभ हलद रंग जान ॥ गु० ॥ ११ ॥ सोले कषायसु भावनाजी, अनुक्रम भेद विचार ॥ जाव जीव एक वरसनीजी, थित परमाण जू धार ॥ गु० ॥ १२ ॥ चार मासनी जाणजोजी, अरु पंद्रा दिन जान ॥ अनुक्रमें चारो तणीजी, येह थित कही परमान ॥ गु० ॥

॥ १३ ॥ मिथ्या तीन प्रकारनीजी, आद अंत नही मान ॥ आद नही पिण अंतछेजी, आद अंत दोयजान ॥ गु० ॥ १४ ॥ अभव उरभव जीवनीजी, पडवाई सम्यक्त्वान ॥ अनुक्रमे तीनो जाणियेजी, तिणमें मिथ्या गुणठाण ॥ गु० ॥ १५ ॥ मिथ्याती गुणठाणसें, मिथ्या हलकी होय ॥ तिणसे गुणथानक कह्याजी, जिन वचनें तुम जोय ॥ गु० ॥ १६ ॥ उदे भावमें परकृतीजी, पांच कही भगवान ॥ पहले मिथ्या मोहनीजी, प्रथम चौकडी जान ॥ गु० ॥ १७ ॥ जीवाजीव परूपणाजी, करे वहोत विप्रीत ॥ मिथ्या दस प्रकारनीजी, धर्मनी नही प्रतीत ॥ गु० ॥ १८ ॥ दूजे गुणठाणे आवीयाजी, स्वाद स्वादन तसु नाम ॥ आ वलीछे परमाननीजी, समकितना. रस पाम ॥ गु० ॥ १९ ॥ मिश्र मिश्र भावनाजी, गुणथानकनों नाम ॥ समकित मिथ्यामत मिलेजी, अंतर महुरत ताम ॥ गु० ॥ २० ॥ उदे भावमें ये नहीजी, पहली चार कषाय ॥ मिश्र भावे जीवडाजी, मिश्र गुणठाणे आय ॥ गु० ॥ २१ ॥ अवृती समदृष्टनांजी, चोथाछे गुणठाण ॥ पराकिरत छै दूरे करेजी, अवृती नर जान ॥ गु० ॥ २२ ॥ मिथ्या मिश्र मोहनीजी, प्रथम चोकडी जान ॥ सात बोलनें आडखोजी, बांधे नही ते मान ॥ गु० ॥ २३ ॥ भोंनपती व्यंतर जोतसीजी, नर्क

त्रियंच वखान ॥ स्त्री नपुंसक वेदनाजी, ये सात बोलनों जान ॥ गु० ॥ २४ ॥ दशवृतना पांचमोजी, भाख्या छे गुणठाण ॥ परकृत दस टाले सहीजी, सुध श्राविक ते जान ॥ गु० ॥ २५ ॥ पहेली दूजी चौकडीजी, मिश्र मिथ्या जान ॥ क्षय करेवा उपसमेंजी, तैसी समकित मान ॥ गु० ॥ २६ ॥ चोदे पराक्रित छै करेजी, प्रमादी संजती जान ॥ प्रथम दो तिय चौकडीजी, मिश्र मोह व खान ॥ गु० ॥ २७ ॥ परमाद सहित महावृतीजी, ते छठे गुणठाण ॥ काया साधे आपणीजी, धर्म कहे हित आण ॥ गु० ॥ २८ ॥ सोले पराक्रित सातमेजी, क्षय करे गुणठाण ॥ ते मुनि अ प्रमादी सहीजी, संज्वल क्रोध अरु मान ॥ गु० ॥ २९ ॥ ये दो परक्रित जानीयेजी, छठेसें अधिकाय ॥ जीव चढे गुणठाणमेंजी, तिम २ कर्म खपाय ॥ गु० ॥ ३० ॥ नियटबादर आठमोंजी, जिनवर कहे गुणठाण ॥ दर्सनमोहनी करमथीजी, निरवरते तेह जाण ॥ गु० ॥ ३१ ॥ सत्ता परक्रित क्षय करेजी, तीनों मोहनी जान ॥ प्रथम तीनों चौंकडीजी, संज्वलनो क्रोध मान ॥ गु० ॥ ३२ ॥ दो श्रेणी जिनवर कहेजी, उपसम क्षायक मान ॥ उपसमसें उपसम चढेजी, क्षयथी क्षायक जान ॥ गु० ॥ ३३ ॥ अनियट बादर तणोंजी, नोंमो छे गुणठाण, चारित्र मोहनी कर्मथीजी,

निर्वरत्या नही ते जान ॥ गु० ॥ ३४ ॥ सत्रा तौ पूरव कहीजी, परक्रुत मोहनी जान ॥ संज्जल माया जानजोजी, तीनों वेद वखान ॥ गु० ॥ ३५ ॥ क्षयकरेवा उपसमेंजी, दोनों श्रेणी जान ॥ तेसीही श्रेणी चढेजी, ज्ञानी वचन प्रमान ॥ गु० ॥ ३६ ॥ सुक्षम लोभ तणो उदेजी, सुक्षम संपराय नाम ॥ परक्रुत सत्ताईसनेजी, क्षयकरे मुनि ताम ॥ गु० ॥ ३७ ॥ हांस्यादी खट परक्रुतिजी, पूरव इक्वीसि जान ॥ ये सत्ताईस उपसमेंजी, ये दसमें गुनठाण ॥ गु० ॥ ३८ ॥ उपसम्याथी ग्यारमाजी, उपशांत मोह गुणस्थान ॥ जो क्षप्पक श्रेणी चढेजी, तवही बारमें जान ॥ गु० ॥ ३९ ॥ मोहनी अठाइस परक्रुतीजी, उपसम भावे जान ॥ क्षय करेवा समर्थ नहिजी, अगनी राख प्रमान ॥ गु० ॥ ४० ॥ जो काल करेतो ग्यारमेंजी, अनोत्तर वाशी होय ॥ काल करे नही जो तिहांजी, दसमें आवे जोय ॥ गु० ॥ ४१ ॥ पडतां २ ठठा लगेजी, आवे मुनिवर जाण ॥ इनसें नीचा जो पडेजी तो मिथ्या गुणठाण ॥ गु० ॥ ४२ ॥ क्षीणमोह गुणठाणमेंजी, क्षायक भावें मान ॥ अठाईसो क्षय करीजी परक्रुत मोहनी जान ॥ गु० ॥ ४३ ॥ सात कर्म वाकी रह्याजी, मोह रायनें मार ॥ गुणठाणा ये वारमोजी भव, जीवा हितकार ॥ गु० ॥ ४४ ॥ चार करम घन घाती-

याजी, क्षय करे मुनिराज ॥ तब संजोगी केवलीजी, मन वचनें करी काय ॥ गु० ॥ ४५ ॥ तेरमें गुणअस्थानमेंजी, देवे बहु उपदेश ॥ भव जीवां प्रतिबोधकेजी, मेटे कर्म कलेश ॥ गु० ॥ ४६ ॥ चतुरदस गुनस्थाननेंजी, पंच लघू स्वर जोय ॥ थिती एह अजोगी केवलीजी, फरस्यां तब सिद्ध होय ॥ गु० ॥ ४७ ॥ सम्वत उन्नीसें इकसठे-जी, करनाल नगर चौमास ॥ ऋषराज कहे भव जन सुनोंजी, गुनथानक गुण रास ॥ गु० ॥ ४८ ॥ इति

॥ अथ श्री सिमंदिरजीरो स्तवन लिख्यते ॥

सतगुरु पय प्रणमी करी, समरूं श्री सिमंदिर स्वामजी ॥ मन वचन काया जोगसें, नित उठ करूं परणामजी ॥ सुन श्री सिमंदिर साहिबा ॥ १ ॥ सरन आयो हुं करि प्रतिपालजी ॥ समरथ भवनिध तारवा, तुम सम कोइ न दयालजी ॥ सु० ॥ २ ॥ मे अवगुणनो गण अछूं, गुणनो नइ कोइ लवलेशजी ॥ होड करूं गुननी सदा, परगुण सुन मन आनु क्लेशजी ॥ सु० ॥ ३ ॥ छठे गुणस्थानक त-णा, नाम धरायोछे में सामजी ॥ पिण आगम गुण जोवतां. न तजो कषायनो कामजी ॥ सु० ॥ ४ ॥ इंद्री पांचों वस नही करी, इनथी जाणा पापना मूलजी ॥ धर्म शुक्ल नही ध्याइयो, आरत रुद्रथी भव कीया भूलजी ॥ सु० ॥ ५ ॥ असुद्ध आतमा महारी, जाणिने

नही कीधा धरमजी ॥ तप जप संजम सुध नही, परमाद वसे कीया बहु करमजी ॥ सु० ॥ ६ ॥ अछता गुण श्रवणे सुणी, मन आणे हर्ख विसेषजी ॥ दोष छता सुणता सही, तसु ऊपर मुज आवे द्रेषजी ॥ सु० ॥ ७ ॥ जिणमतसेरे अजाणता, सूत्रमाहि बहू बोल्या असुद्धजी, जढपणामा जोरथी, न रही कोई सुध बुद्धजी ॥ सु० ॥ ॥८॥ जिन आज्ञा मुजुब क्रिया, तेह नही आवी तिलतुश मातजी, मद अज्ञान मिटे जेहथी, ज्ञानकी ते नही जानी वातजी ॥ सु० ॥ ९ ॥ आतम निंदा नही करी, परनिंदा कर मन धरयो रागजी ॥ ज्ञान दरसन चारित्र तपे, इनसु नही कीधी लागजी ॥ सु० ॥ १० ॥ जीव अप्राधी अनादिको, जो जो मे कर्या पाप अपारजी ॥ चोरासी लख जोनमे, भमता पाया नर आवतारजी ॥ सु० ॥ ॥११॥ धिग २ मुज परमादने, सुमत गुपत सुध नही धारजी ॥ तप जप गुण न आराधीयो, विनगुण किम उतरूं भव पारजी ॥ सु० ॥ १२ ॥ श्री सिमंदर स्वामी सुनो, निज सेवगनी अरदाशजी ॥ सरधाछे तुम बचना तणी, तेहथी पूरो मुझ मन आसजी ॥ सु० ॥ १३ ॥ सम्वत उनीसे साठमे, बडसत ग्राम माही चौमासजी ॥ ऋष ऋषराज इम वीनवे, प्रभुजी सफल करो मुझ आसजी ॥ सु० ॥ १४ ॥ इति

॥ अथ श्री श्री परम पंडित श्रुत सागर श्री श्री १००८
श्री श्री ऋषराज महाराजजीको शिष्य श्री श्री
प्यारेलालजीका दिक्षा मोहोत्सव अधिकार
दोहा चौपाई सहित लिख्यते ॥

दोहा ॥ प्रथम सिमर अरिहंतको, मनसें वारम्वार ॥ नाम रटित भगवानको, हो भव सागर पार ॥ १ ॥ चौपाई ॥ भव सागरसें पार उतारे, प्रभू नाम जो मनमें धारे ॥ प्रभू नामकी साची माया, विघ्न पडीमे काम वो आया ॥ २ ॥ जिसने रटा प्रभुका नाम, पूरण होगया उसका काम, जपै नाम वहो पुन्य कमावे, प्रभु हेत धन माल लुटावे ॥ ३ ॥ जो करे सदा संतोकी सेवा, इस दुनियासे पार हो खेवा ॥ रटै नाम और पाले धर्म, जीत लीया जिन अपना कर्म ॥ ४ ॥ और सुनो अब नया अहवाल, लीया जोग शुध प्यारेलाल ॥ गाम अल्लमाबाद है भारी, धर्म ध्यान करे नर नारी ॥ ५ ॥ दोहा ॥ गाम अल्लमाबादमे, आए हे ऋषिराज ॥ परम पंडित ज्ञानी अधिक, गुण नायक महाराज ॥ ६ ॥ चौपाई ॥ उनका गुण वरना नही जाता, में हरदम उनको शीस निमाता ॥ ये हुए ज्ञानमें अति अन मोला, है श्री मनोहरदासका टोला ॥ ७ ॥ है उनके सिप्य श्री भागचंद, तिन काट दीयाहै जमका फंद ॥ है उनके सिप्य श्रीसिताराम, जि-

न रटा रात दिन श्री जिनका नाम ॥ ८ ॥ है उनके सिष्य शिवरामजदास, जाय कीया स्वर्गमें वास ॥ है उनके चेले श्री हरजीमल्ल, थें ज्ञानी संत वडें परवल्ल ॥ ९ ॥ श्री रतनचंद पंडित अति स्वामी, थें मुल्को मुल्कोंमें वे नामी॥ आप हुए वे पंडित ज्ञानी, खट मतकी जिन चरचा जानी ॥१०॥ सुमरण कीया श्री भगवान, स्वर्गवीच जाय कीया अस्थाने ॥ श्री कुंवरसैनजी पंडित महाराज, है उनके चेले श्री ऋषराज ॥ ११ ॥ श्री ऋषिराज पंडित गुणवान, यह पढे सूत्र जिनमतके जान ॥ भाईयोनें चिठी भिजवाई, इकटे हुए सरावक भाई ॥ १२ ॥ मुल्कोंमें हुवा उनका नाम, कीया मुंडण भया धर्मका काम ॥ हुये श्राविक इकठे सारे, बोल रहे हे जेजेकारे ॥ १३ ॥ दोहा ॥ आज अहमदावादमें, सबकों दिया उपदेश ॥ दया धर्म मन लायकें, करते रहो हमेश ॥ १४ ॥ चौपई ॥ दया धर्मका करना काम, रटो सदा भगवंतका नाम ॥ जो मनुष भगवंतको रटे, सबी पापके बंधन कटे ॥ १५ ॥ अब हुवा यहां धर्मका मेला, हुए प्यारेलाल ऋषराजका चेला ॥ छोड दीया जिन जगका भोग, पाला धर्म लीयाहै जोग ॥ १६ ॥ जो जन धर्मके काज करे, जरा नही वो दुखडा भरे ॥ धन्न तुमारे तातरुमात, दिया गुरुको निज सुत हाथ ॥ १७ ॥ जिसनें नास श्री जि-

नका मजा, वही स्वर्गके सुखमें रजा ॥ राम नामजो मन-में धारे, नही कालके डरसें हारे ॥ १८ ॥ जब बजे का-लका शीस नगारा, नही नजरपडै कोई राखनहारा ॥ काल तेरे जब सिरपे आवै, कोई न जगमें प्राण बचावै ॥ १९ ॥ रहे जब मनकी मनकेमाही, कालसें हरगिज बचता नाही ॥ झूठा है यह सब संसारा, तुमनें अपना जन्म सुधारा ॥ २० ॥ खूब कीयाहै ऐसा काम, लीया जोग रटा जिन नाम ॥ भाईबंध कोई काम न आता, पाप पुन्नही संगमे जाता ॥ २१ ॥ करै सुधरमी जैजे-कार, जब लियाजोग संजमव्रत धार ॥ धन्न एह घडी धन्न यह वेला, धन्न साधर्मि पुर्षोंका मेला ॥ २२ ॥ दोहा ॥ झूठा जगको जानकें, त्याग दीया मोहजाल ॥ योग लीया खुश होयकें, आजसु प्यारे लाल ॥ २३ ॥ चौपाई ॥ धन्न तुम्हारी बुद्धी प्यारे, हुए धर्मके पालनहारे ॥ जानकी माता धन्न तुमारी, दइ बुद्ध जिन सुमत विचारी ॥ २४॥ कुंमरपाल पिता धन थांरे, जिन अज्ञा दीनी तुमको प्यारे ॥ शहर आगरापें तज खेडा, जन्म तुम्हारा पारहो बेडा ॥ २५ ॥ धन्न भाग तुमारें प्यारे, श्री ऋपराज गुरु है थांरे ॥ यह जन्म भला उत्तम तुम पाया, मनुष जनम-को सुफल कमाया ॥ २६ ॥ कोई काम हरगिज नही आवे, बिन मतलब कोई पास न जावे ॥ ये दुनिया है रैनका

सुपना, इसमे नहींहै कोई अपना ॥ २७ ॥ मोह लोभ माया मद तजो, दिन रात नाम श्री जिनका भजो ॥ राम नाम वही पार उतारे, राम नाम वो जन्म सुधारे ॥ २८ ॥ राम नाम अति हे अनमोला, मनके कांटे में धर तोला ॥ वैशाख सुदी त्रियोदशीको गिन, यह हुवा जोग मंगलका दिन ॥ २९ ॥ उन्नीसे छप्पनका शाल, जिसमे यह उछवका हाल ॥ इन संतोकों सीस नमाऊं, धर्मध्यानमें मनको लाऊ ॥ ३० ॥ चार तीर्थमें यह सिरदार, इनका सरना लीया धार ॥ इन सव साधोंका वारम्बार, सुंदर है इनका तावेदार ॥ ३१ ॥ हुवा उछव हुया मंडण, चोपाईभी यह हुई सपूरण ॥ आया वसंत सुनो चितलाई, ज्ञान धर्मकी महेमा गाई ॥ ३१ ॥

कवित्त ॥ नाम भगवानका हरवक्त लीया करते है, काम नेकीका जमानेमें कीया करते हे ॥ परेम मद दिलसे वो हरवार पीया करतेहै, सेवा संतोकी करे और दया दान दीया करते हे ॥ आज वो दिन है खुशीका अजव आई वहार, नाम भगवानका निकले है जुवानसे हर वार ॥ आज ऋषराज महाराजका पाया दरशन, दर्शको देख हरकसें हुवा प्रसन्न ॥ अल्लमानादमें आएगहे गुरुके चर्ण, धर्म दया उपदेश सुन लीया उनका सर्ण ॥ काम हिम्मतका कीया खूब यह हे प्यारेलाल, जोग संजमको

लीया धार बहोत हुए खुशहाल ॥ छोड संसार अब त्याग दीये तात और मात, नाम श्री जिनका भजा सुनके सदा ज्ञानकी बात ॥ धर्मध्यानमें रहेना तुमे गुरु भक्तमें दिन रात, जोग संजमको लीया और कीया गुरु-का साथ ॥ भाग अछे है तुमारे कीया ऐसा काम, छोड संसारको हरवखत भजा प्रिभोका नाम ॥ जगतके बीचमें अपना न पराया देखो, बिगडे वक्तोंमें कोई काम न आया देखो, ज्ञान हिर्देमें अगर कुछभी समाया देखो ॥ छोड दीया संसारको जिसनें लीया प्रिभूका नाम, कालको जीत लीया मोक्षमें कीना विसराम ॥ काल जिसवक्त भला सिरपै तेरे आवेगा, पकड बाह पलमें वो जम लोक पहों-चावेगा ॥ बाप भाई कोई काम न आवेगा, पाप और पुन्य सदा अपनेही संग जावेगा ॥ कालके हालसें हरवक्तको डरना चाहीये, श्री जिन नाम सदा दिलसें सुमरना चाहीये॥ प्रभु नाम है जिसको रटै है संसार, नाम रटेसें हर शखस उतर जात है पार ॥ सेवा संतोंकी करो सीस निवाना हरबार, भाग उज्जल है थांरे तुमनें लीया जोगको धार ॥ जोग संजम को लीया मुक्तमें जानेकें लीयें, ज्ञान चर्चा लिखी सुंद-रने सुनानेके लीयें ॥ १ ॥ इति महोत्सव संपूर्ण ॥

॥ इति श्री विवेक विलास ग्रंथ समाप्त ॥

४८ मेणारया सतीकी चोपाई किं० १ आना.
४९ जैन चैत्य वंदन संग्रह किं० २ आना.
५० जैन स्तुति संग्रह किं० २॥ आना.
५१ तेरे ढालाकी साधु वंदणा किमत २॥ आना
५२ सिद्धाचलजीनो (सत्रुंजाजीनो) रास किमत ६ आना
५३ चोविसी स्तवन तथा विस वेहेरमान जिनस्तवन किं० २ आना.
५४ चोसठ प्रकारी पूजा किं० ६ आना.
५५ द्वादशव्रतपूजा तथा पंचाशीश आगमानी पूजा कि० २ आना.
५६ एकवीसप्रकारी पूजा किं० २ आना.
५७ नवपद तथा स्नात्रपूजा किं० ४ आना
५८ नंदीश्वरदीप पूजा तथा अष्टप्रकारी पुजा किं० २॥ आना
५९ श्री रत्नपालको रास किं० ८ आना
६० धर्मपर्व लौकिकपर्व सज्झायको संग्रह किं० २॥ आना
६१ अंजना पद्मावतीको रास किमत ५ आना.
६२ अनुपूर्वी साधी एकांगी किमत अर्धा आना.
६३ सिद्धचक्र भगवानको मंडल किमत १ आणा.
६४ मनोपम चोवीसीका दर्शनकी पोथी किं० ६ आणा.
६५ जैन स्तवन संग्रह किमत २॥ आना.
६६ जैन सझाय संग्रह किमत २॥ आना.
६७ जैन होरी संग्रह किमत २॥ आना.
६८ जैन पद संग्रह किमत १॥ आना.
६९ जैन बारमासा संग्रह किमत २॥ आना.
७० जैन गहुली संग्रह किमत २॥ आना.
७१ जैन छंद संग्रह किमत २॥ आना.
७२ जैन लावणी संग्रह भाग पेहेला किमत २॥ आना.
७३ कयवन्नाशाहाको रास किमत ४ आना.
७४ मंगळ कलश कुमारकी चोपाई किमत ४ आना.
७५ पापबुद्धि राजा अने धर्मबुद्धि मंत्रीको रास किमत ४ आना.
७६ हरिचंद्र मच्छीनो रास किमत १ रुपया.
७७ साधु श्री भिमसेनजी स्वामीको रास किं० १। रुपया.
७८ जैन ज्ञानसार संग्रह किमत १२ आना.
७९ स्नात्रपूजा अने दिगस्थानकनी पूजा किमत ४ आना.